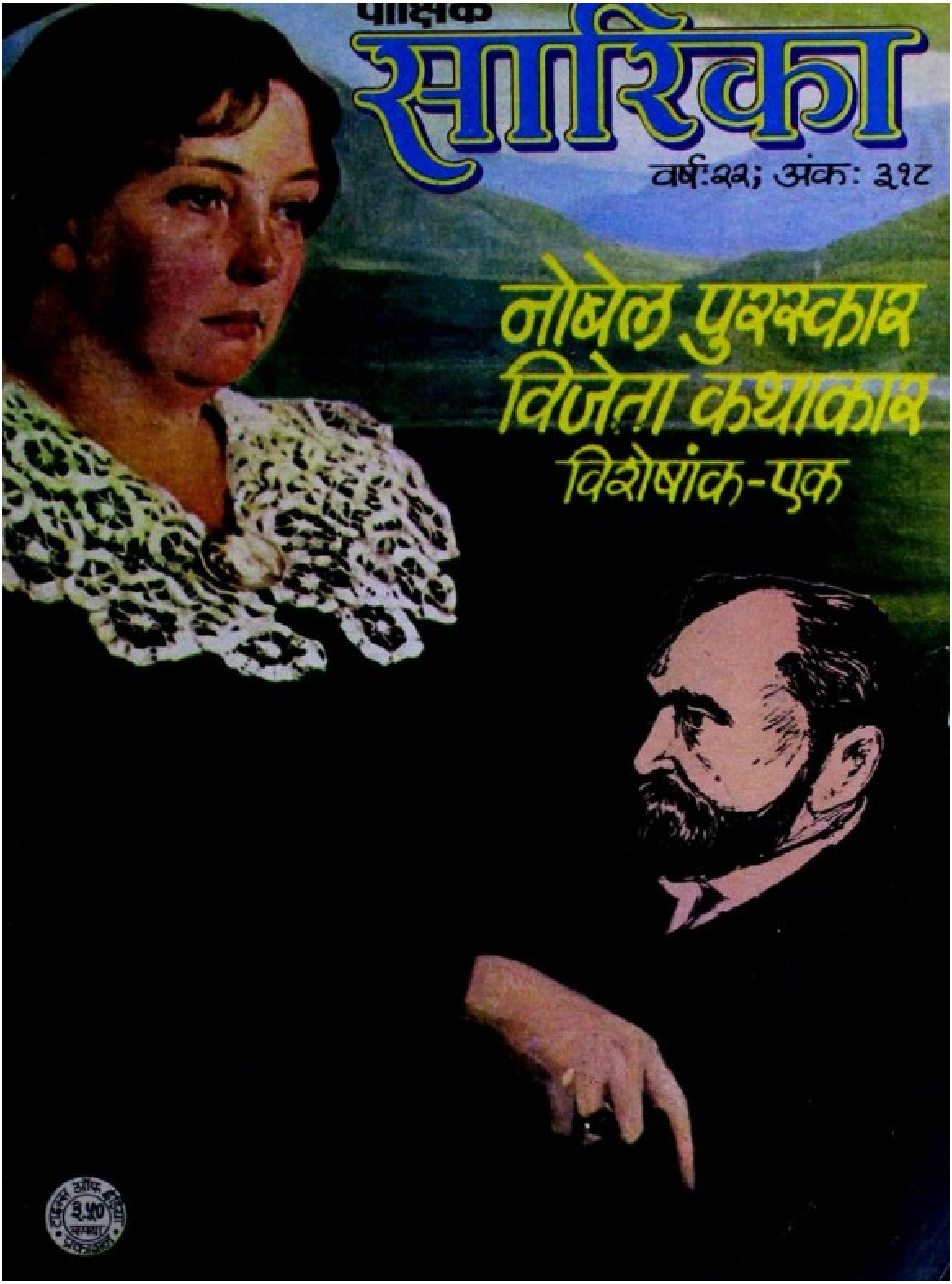

पाक्षिक
सारिका
वर्ष:२२; अंक: ३१८
नोबेल पुरस्कार
विजेता कथाकार
विशेषांक-एक

M

खास किताबें

उपन्यास का सिद्धांत
जार्ज लुकाच

'उपन्यास का सिद्धांत' जार्ज लुकाच के प्रारंभिक लेखन की एक प्रतिनिधि पुस्तक है. इसमें पुराने महाकाव्यों तथा क्लासिकी युग की अन्य श्रेष्ठ कृतियों के विश्लेषण के माध्यम से यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि साहित्य के विभिन्न रूप किस प्रकार मानवीय अर्थवत्ता के सारतत्व को अभिव्यक्त करते हैं.

डिमाई अठपेजी; कपड़े की जिल्द; पृष्ठ 172; मूल्य : 45.00

अस्तित्ववाद : किर्कगार्द से कामू तक
योगेंद्र शाही

इस पुस्तक में अस्तित्ववाद तथा 'एब्सर्डिटी' की व्याख्या अस्तित्ववादी लेखकों की रचनाओं के माध्यम से की गई है. आरंभ में अस्तित्ववादी चिंतन के ऐतिहासिक विकास का सर्वेक्षण प्रस्तुत किया गया है. (द्वितीय संस्करण)

डिमाई अठपेजी; पृष्ठ 232; मूल्य : 34.00

यथार्थवाद
शिवकुमार मिश्र

इस पुस्तक में लेखक ने सहज तथा सारगर्भित शैली में कला और साहित्य के संदर्भ में यथार्थवाद के आंदोलन प्रवृत्ति, वैचारिक आधार और साहित्य समीक्षा तथा कथासाहित्य में इसके प्रति फलन को विवेचित किया गया है, पाश्चात्य साहित्य तथा हिंदी में यथार्थवाद के स्वरूप एवं उसके विकास पर भी यह पुस्तक पर्याप्त प्रकाश डालती है. (द्वितीय परिवर्धित संस्करण)

डिमाई अठपेजी; पृष्ठ 222; मूल्य : 50.00

भाषा शिक्षण
रवींद्रनाथ श्रीवास्तव

प्रस्तुत ग्रंथ में अनुप्रयुक्त भाषा विज्ञान के रूप में भाषा शिक्षण के आधुनिक सिद्धांत, विधि, प्रणाली और प्रणाली-तंत्र का प्रामाणिक विवेचन प्रस्तुत है. भाषा शिक्षण की आवश्यकता की वर्तमान स्थिति में हमें जिस ज्ञानात्मक एवं व्यवहारपरक आधारभूमि की आवश्यकता है, उसे पूरा करने में यह पुस्तक एक महत्वपूर्ण उपलब्धि मानी जा सकती है.

डिमाई अठपेजी; पृष्ठ 194; मूल्य : 35.00

आधुनिकता और सर्जनशीलता
रघुवंश

प्रस्तुत पुस्तक तीन खंडों में विभक्त है. प्रथम खंड में लेखक ने आधुनिक साहित्य के संदर्भ में सर्जनशीलता के विविध रूपों तथा पक्षों पर विचार किया है. इसमें भाषा की सर्जनशीलता के अतिरिक्त साहित्य के मूल्यों और मानदंडों पर भी विचार किया गया है. द्वितीय खंड में लोकसाहित्य और लोककाव्य को आधुनिक दृष्टि से परखा गया है. पुस्तक के तीसरे खंड में हिंदी उपन्यास साहित्य और प्रेमचंद की प्रासंगिकता से संबंधित निबंध हैं. पूरी पुस्तक आधुनिक साहित्य को देखने की एक नई सामाजिक दृष्टि देती है.

डिमाई अठपेजी; पृष्ठ 188; मूल्य : 50.00

प्रगतिवाद और समानांतर साहित्य
रेखा अवस्थी

यह पुस्तक सन 1937 से लेकर 1951 तक के साहित्य का द्वंद्वात्मक विश्लेषण करते हुए प्रगतिशील साहित्यिक आंदोलन का सर्वांग-संपूर्ण इतिहास प्रस्तुत करती है. उस समय प्रगतिवाद के समांतर जो भी वाद और रुझान थे उसके साथ प्रगतिवाद के द्वंद्वात्मक सह-संबंधों का विश्लेषण भी विस्तारपूर्वक किया गया है.

डिमाई अठपेजी; पृष्ठ 368; मूल्य : 48.50

अथातो सौंदर्य जिज्ञासा
रमेश कुंतल मेघ

इस पुस्तक में सौंदर्यबोधात्मक वृत्ति तथा सौंदर्यबोधानुभाव को दोनों महाधुरियों का सामंजस्य करके भारतीय तथा पाश्चात्य संदर्भ में 'कला' और 'सौंदर्य' से संबद्ध सभी पक्षों का निरूपण तथा अनुशीलन हुआ है. यह हिंदी में 'सौंदर्यबोधशास्त्र' के अध्ययन और अन्वेषण की तथा साहित्य, कला और सौंदर्य के अधुनातन पाठ्यक्रम की प्रवेशक प्रस्तुत है.

डिमाई अठपेजी; पृष्ठ 250; मूल्य : 64.00

बी.पी.पी. आदेश देते समय कुल मूल्य की एक चौथाई कीमत अग्रिम भेजना लाजिमी है.

हिंदी प्रचार विभाग

मैकमिलन इंडिया लिमिटेड

2/10 अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली 110 002

सारिका

कहानियों और कथा-जगत की जीवंत पाक्षिकी

वर्ष : २२; अंक ३१८, १ से १५ अक्तूबर १९८२

नोबेल पुरस्कार विजेता कथाकार विशेषांक-एक

आवरण :
सिगरी उनसत और अल्फ्रेड नोबेल
(हिमांशु जोशी के सौजन्य से)

सहायक संपादक :
अवधनारायण मुद्गल
उप-संपादक :
रमेश बत्तरा, सुरेश उनियाल, बलराम, अरुण वर्द्धन

कहानियां और उपन्यास अंश

13. एक सपने की मौत : सिगरी उनसत
18. माली : रुडयार्ड किपलिंग
23. शरीफजादे : अनातोले फ्रांस
26. विवश : मिखाइल शोलोखोव
32. छुट्टी : रवींद्रनाथ ठाकुर
36. कहां जाना है : पर्ल एस. बक
39. यही है वह : पार लागरक्विस्त
40. अंगूठी : नट हम्सन
46. तुम मुझे पसंद हो : सिंक्लेयर लेविस
50. वहमी : हरमन हेस
54. ईस्टर शोभायात्रा : सोल्जेनित्सिन
60. मुर्दा हाथ : जॉन स्टेनबेक
66. लोरी : मीगेल आंखेल अस्तूरिआस
70. चेहरा : हाइनरिख ब्योल
77. चिमनियां साफ करनेवाला : इसाक सिंगर
80. युद्ध : लुइगी पिरांदेलो

विशेष आकर्षण

10. लिलि हामेर : हिमांशु जोशी
35. वह सुनहरा दिन कब आयेगा? : चेसला मिलोज
44. नोबेल पुरस्कार : कितना प्रकाश कितना अंधकार : सुरेश उनियाल
45. कैसे दिया जाता है नोबेल पुरस्कार
57. नीग्रो भी मनुष्य बनना चाहते हैं : जॉन स्टेनबेक
74. बच्चों का लोकप्रिय लेखक इसाक सिंगर जो वयस्कों के लिए पहेली है : हरिमोहन शर्मा
76. एक कवि हम सब को बचाने के लिए खड़ा होगा : इसाक सिंगर
96. अकेले : ज्यां-पॉल सार्त्र

बातचीत

16. बुजुर्ग कवियों का छाये रहना नये कवियों के रास्ते में बाधक है : टी. एस. इलियट
72. मैं अश्लील और अभद्र साहित्य पढ़ना पसंद करूंगा : इसाक सिंगर

परिचर्चा

29. साहित्य पर रवींद्रनाथ के बाद किसी भारतीय को नोबेल पुरस्कार क्यों नहीं : गुरुचरण
63. नोबेल पुरस्कार राजनीति से कितने प्रभावित, कितने अप्रभावित : सत्यपाल सक्सेना

लघु रचनाएं

12. यह मेरे बच्चों के सोने का समय है
14. जेनो
20. भारत : किपलिंग के लिए एक विकल्प
22. रोशनी का सहारा
24. सारा ज्ञान
25. भूख
28. कज्जाक लोग कौन थे?
34. रवींद्रनाथ ठाकुर का पहला प्यार
38. अलाव और चींटियां
42. मेरा सैनिक जीवन निष्कलंक था
48. दिनारंभ
49. बाकी सब कुछ
52. मार्गदर्शक
53. हरमन हेस : बकलम खुद
55. लेखक से साक्षात्कार
56. सांस लेने की आजादी
59. पुरस्कार पाकर लेखक रिटायर हो गये
68. जिसे सरकारी कोशिशें भी नोबेल पुरस्कार न दिला सकीं
69. अज्ञात देश की विश्वसनीय आवाज

स्थायी स्तंभ

6. अपनी बात
आपकी बात

धारावाही उपन्यास

94 पुरुषोत्तम (समापन किस्त) : लक्ष्मीनारायण लाल

अपनी बात

नोबेल पुरस्कार : कुछ सवालों की मौजूदगी

कभी-कभी शब्द अपने तमाम परिचित अर्थ खो बैठते हैं और उन खोये हुए अर्थों के बीच से नये अर्थ जन्म लेते हैं, लेते चले जाते हैं. अर्थों के इस खोने और जन्म लेने की प्रक्रिया तब तक चलती रहती है, जब तक हम उन स्थितियों को पार नहीं कर लेते, जिनमें यह शुरू हुई थी. नोबेल पुरस्कार के साथ भी कुछ-कुछ ऐसा ही लगता है. सर अल्फ्रेड नोबेल के मन में जिन अर्थों और मूल्यों के प्रति चिंता थी, वे अर्थ और मूल्य अब टूटते नजर आ रहे हैं. उन्होंने 'शब्द जगत' के जिस सार्वभौम विकास की कल्पना की थी, क्या वह वास्तव में उसी रूप में पूरी हो रही है? क्या यह पुरस्कार उसके सही अधिकारियों को मिल पा रहा है? क्या राजनीतिक चौधराहट ने इसे अंधे की रेवड़ी नहीं बना दिया? आज साहित्य पर जिस तरह यह पुरस्कार दिया जा रहा है तथा अविकसित, अर्द्ध विकसित या विकासशील, विशेष रूप से अफ्रीकी और एशियाई देशों के साथ जो रवैया अपनाया जा रहा है, उसे देखते हुए हर साहित्य-प्रेमी के मन में ऐसे सवाल पैदा होने लगे हैं. सवाल सही हैं या गलत, यह अलग बात है, लेकिन सवालों की मौजूदगी को ध्यान में रखकर 'सारिका' ने कुछ महत्त्वपूर्ण परिचर्चाएं आयोजित की हैं, जो इन दोनों विशेषांकों में फैली हुई नजर आयेंगी, जिनके माध्यम से आप नोबेल पुरस्कार की वर्त्तमान मानसिकता को अधिक गहराई से समझ सकेंगे.

ऐसा तो नहीं है कि पुरस्कार जिसे दिया जाये, वह तीसरे या चौथे दर्जे का हो, लेकिन यह भी नहीं कहा जा सकता कि वह अपने देश के सभी समकालीन लेखकों की पहली पंक्ति का हो और पहला ही हो. वैसे यह भी एक सार्वभौम सत्य है कि बुद्धिजीवी कहे जानेवाले साहित्यकारों में 'पहला' हो पाना असंभव बात है, क्योंकि उस स्थिति में टकराव व्यक्तियों का नहीं, उनके वृहत् अहम् का होता है.

पुरस्कार पानेवाला रचनाकार अपनी जमीन की समकालीन वैचारिकता का प्रतिनिधित्व करे, ऐसी उम्मीद उससे अवश्य की जानी चाहिए. इस उम्मीद का निर्वाह ये कहानियां कितना कर पा रही हैं, इसका निर्णय 'सारिका' के सुधी पाठक स्वयं कर सकेंगे. हमारा मुख्य उद्देश्य विश्व के इन मनीषी साहित्यकारों से अपने पाठकों का सामूहिक परिचय कराना और उनकी रचनाधर्मिता को 'प्रतीक' रूप में एक जगह संकलित करना मात्र नहीं है. यदि हम इनके माध्यम से अपनी रचनाधर्मिता की पहचान और परख कर सकें तो 'सारिका' अपना प्रयास सफल मानेगी.

[signature]

गांधी का नाम अभी भी ताकत देता है!

'सारिका' का 'देह-व्यापार-कथा विशेषांक: 1 मिला. उम्मीद थी कि देह में थोड़ी गुदगुदी, थोड़ी सनसनाहट और थोड़ा रोमांच भरेगी, लेकिन हुआ इसके विपरीत. उसने दिमाग में ही हलचल मचानी शुरू कर दी. इसका भी शायद एक कारण यह हो कि वह अब पहले-सी कमसिन और नादान नहीं रही—बाइस वर्ष की वयस्कता प्राप्त कर ली है. **'आश्वासन सब देते हैं . . .'** (श्रीकांत शर्मा) में—अरे राम! क्या कही उस चंद्रमुखी ने जवाब में —"क्यों, जब आप लोग कोठों पर आते हैं तो आप ही की तो औलाद हुई हम वेश्याएं भी . . ." परंतु चंद्रमुखी को क्या पता कि वेश्या तो पुरुषों के उस नैतिक पतन और बर्बर कामेच्छा का परिणाम है, जो राष्ट्र, जाति, धर्म यहां तक कि रिश्ते को भी पहचानने की शक्ति खो बैठता है. **'मासूमा', 'टैक्सी', 'तस्वीर'** हर कहानी यही कुछ तो कहती है.

आपकी बात

लेकिन (संदर्भ आबिद सुरती) वेश्याओं की तुलना कूड़ेदान से नहीं की जा सकती है. वेश्याओं के बिना भी समाज को स्वच्छ रखा जा सकता है. जरूरत है, समाज में परंपरा से चले आ रहे सेक्स और औरत के प्रति उस दृष्टिकोण में बदलाव की, जिसके कारण वही काम, जो एक औरत रोटी के लिए करती है तो वेश्या हो जाती है और फिर हर ओर से शोषित होती है. वही काम एक दूसरी औरत, जो अपने पिता, पति और भाई अथवा स्वयं के पद-प्रोन्नति या शक्तिलोलुपता या समृद्धि लोलुपता के लिए करती है तो ताकतवर और इज्जतदार हो जाती है. कूड़े में न तो जान होती है और न दिमाग. वेश्या ऐसी नहीं है—उसमें जान भी है और दिमाग भी. अर्से बाद एक गजल बहुत पसंद आयी. कविता की जो बात मुझे पसंद आती है, वह बात जहीर कुरेशी की गजल में उभर आयी है—'महल द्वारा कंवारी झुग्गी का, आज भी शीलभंग जारी है.' किसी भी पत्रिका से मुझे यह अपेक्षा नहीं रहती है कि उसकी हर रचना मुझे सर्वोत्तम या प्रियतर ही लगे, परंतु 'सारिका' के इस अंक में मात्र 'वेश्याएं, जो राजघाट पर पेशा छोड़ने का संकल्प . . .' जैसा लेख नहीं आता तो मैं दावे से कहता कि इस अंक की हर रचना मेहनत मशक्कत से चुनी गयी है. प्रस्तुत लेख में मात्र स्टंटबाजी है. पेशा छोड़ने का संकल्प राजघाट पर लेना चाहती हैं, परंतु रोना रोती हैं संजय गांधी स्मृति विद्यालय के नामकरण की अनुमति न मिलने का. वेश्या कल्याण संघ, उज्जैन के लोग यह मत समझें कि महात्मा गांधी का नाम घिस गया है, उसमें अब भी बल देने की शक्ति है.

▣ असीमकुमार आंसू, माकफगंज, सहरसा, बिहार

भिखारी कहना मानसिक कुंठा का द्योतक है!

लोग दिल्ली के जी. बी. रोड, आगरा के बसई, भागलपुर की लाल बस्ती में जाते हैं, मगर मैंने तो यहां अपने नगर में खुलेआम ढाई रुपये देकर बाईस वर्षीया नवयौवना खरीद डाली, मगर वो जिस्मफरोशी नहीं करती थी, किंतु जिस्मफरोशी की कहानियां सुनाती थी. जब उसने शुरू किया तो 'अपनी बात' से लेकर 'अंधेरा' तक सब ऐसा लगने लगा, मानो वास्तविकता देखकर आये हों, पर इस नवयौवना की एक बात गले नहीं उतरी. कह रही थी 'कि वेश्याएं भिखारी होती हैं.' (जो कि इसने ग्वालियर के किसी अधिकारी से सुना था.) वेश्याओं को भिखारी कहना सर्वथा अनुचित है. साधारण शब्दों में 'भिखारी' की परिभाषा की जाये तो कह सकते हैं, 'वह व्यक्ति, जिसे पैसा अथवा कोई भी चीज बिना किसी प्रतिफल के दी जाये तो वह चीज या पैसा 'भीख' होगी और वह व्यक्ति 'भिखारी' कहलायेगा. देने को तो वेश्याओं को भी पैसा दिया जाता है, किंतु उस पैसे के बदले वह पैसा देनेवाला अपनी दैहिक क्षुधा शांत करता है और वह वेश्या उन पैसों के प्रतिफल के रूप में अपनी अस्मत दे देती है. अतः जिस व्यक्ति से चंद कागज के टुकड़ों के बदले उसकी अस्मत ली जाये, उसे भिखारी कहना मानसिक कुंठा का द्योतक है.

▣ किशोरकुमार पाहुआ, उदयपुर

बब्बू भाई से क्षमा याचना सहित

बब्बू भाई

"अन्न और औरत, मैं दुनिया में सिर्फ इन दोनों की पूजा करता हूं, क्योंकि मां के रूप में 'औरत' से यह जीवन प्राप्त हुआ है और 'अन्न' से जीवनदान प्राप्त होता है." यह उद्गार है—बब्बू भाई के, जिनका एक साक्षात्कार 'सारिका—देह-व्यापार कथा विशेषांक : तीन' में पृष्ठ 57 पर प्रकाशित हुआ है.

परंतु कुछ शरारती तत्त्व उनकी मानवीय भावनाओं का मखौल बनाकर नाजायज लाभ उठाने का प्रयत्न कर रहे हैं. उन्होंने भागीरथ प्लेस, दिल्ली में साक्षात्कारवाले पृष्ठ की फोटोस्टेट प्रतियां भी वितरित की हैं. दरअसल, सुनने, लिखने और छपने में एक अरसा गुजर जाने के कारण साक्षात्कार में उजागर हुए कुछ तथ्य असामाजिक लोगों के लिए भ्रामक हो गये हैं. इसलिए भी कि आम बातचीत में प्रायः शब्द जो अर्थ देते हैं, कई बार लेखन में आ जाने पर उतने सटीक नहीं बैठते तथा कुछ और ही मतलब दे जाते हैं, जैसे : "बहुत-सी वेश्याओं को हमने आजाद करवाया, जिन्होंने काम चाहा, उन्हें ग्राहक भी दिलवाये." इस वाक्य विन्यास में 'ग्राहक भी दिलवाये' बब्बू भाई के बारे में बिलकुल ठीक नहीं. उनकी नजर में 'वेश्या' एक अबला है और इससे भी बढ़कर 'औरत', जिसकी वह 'पूजा' करते हैं . . . और इसी पूजा के तहत वह इन अबलाओं के लिए जो कुछ भी बन पड़ा, एक अनाम समाज सेवक की तरह करते रहे. इस रूप में वह किसी खास या आम पेशे में संलग्न महिलाओं के नहीं, बल्कि समूची नारी जाति के अधिकारों के 'रखवाले' हैं. उन्हें उन पुरुषों और दलालों से सख्त नफरत है, जिनके चलते हमारे देश में कोठे आज भी आबाद हैं.

ग्वालियर में एक वेश्या के भरण-पोषणवाला प्रसंग उनसे नहीं, बल्कि अन्य से संबंधित संस्मरण है. ये समस्त घटनाक्रम लगभग बीस वर्ष पुराना है, क्योंकि पत्नी के निधन के बाद वह अपने व्यवसाय में व्यस्त हो गये. वह अपने शालीन स्वभाव और परोपकारी भावनाओं के कारण हर छोटे-बड़े में लोकप्रिय व्यक्तित्व के रूप में जाने जाते हैं. स्मृति और भाषा दोष के कारण उनके भावुक मन पर जो ठेस पहुंची, उसके लिए मुझे, क्षमा याचना सहित, हार्दिक खेद है.

▣ जया रमेश, नयी दिल्ली.

कहानी, जैसे कड़वी दवा

अंक : 315 में सुभाष अखिल की पुरस्कृत कहानी **'बाजार बंद'** पढ़ी. जिंदगी की इतनी तीखी सच्चाई को सुभाष सर्वग्राह्य शैली में व्यक्त करने में पूर्णतः सफल रहे हैं. इसे मेरे दिलो-दिमाग ने इस तरह ग्रहण किया, जैसे कोई छोटा बच्चा कड़वी दवा को चीनी या मीठे पदार्थ के साथ ग्रहण करता है.

▣ डॉ. शैलेंद्र कुमार, पटना (बिहार)

राजघाट के मोड़ से परे

'सारिका' अंक : 315 एक ही बैठक में समाप्त किया एवं विशेषांकों के संग्रह में स्थान दिया. वेश्यावृत्ति पर **'बासकसज्जा'** के अनुपम उपन्यासकार आबिद सुरती के खोजपूर्ण सर्वेक्षण की शेष किश्तों की प्रतीक्षा है. **'नरक के देवता'** (अमरीका) **'मेजबान लड़की'** (जापानी) **'वह बेचारी लड़की'** (फ्रांसीसी) कहानियों से सिद्ध होता है कि वेश्यावृत्ति की जड़ें कितनी गहरी हैं; और शायद इसी कारण 'वेश्या कल्याण संघ उज्जैन की सदस्याएं जो राजघाट पर पेशा छोड़ने का

संकल्प लेना चाहती हैं' को उज्जैन नगर निगम ने न सिर्फ वेश्यावृत्ति का लायसेंस देना प्रारंभ कर दिया है, वरन् अपनी आय का एक नया स्रोत भी ढूंढ़ लिया है. शायद निगम प्रदेशभर में अपनी सर्वोन्नतता सिद्ध करना चाहती है! सुभाष अखिल की **'बाजार बंद'** न होने पर **'गवाही'** अत्यधिक रुचिकर है.
▣ शंभु पाठक, सिंहपुरी, उज्जैन

दिल्ली के उन्मुक्त वातावरण में

'देह व्यापार कथा विशेषांक' के लिए ढेर सारी बधाइयां देने के पहले मैं यह कहना नहीं भूलूंगा कि जहां 'सारिका' बंबई जैसी महानगरी में घूंघट काढ़े छुई-मुई-सी अभिसारिका बनी पड़ी थी, वहां आज वह दिल्ली पहुंचकर उन्मुक्त वातावरण में जन-मानस के साथ फुदक-फुदककर भिन्न-भिन्न सरगम के गीत गाती जा रही है. यह संपादक की दूरदर्शिता एवं काल-धर्मिता की पहचान है. यह बात सही है कि देह व्यापार दुनिया का सबसे पुराना व्यापार है और मनुष्य जीवन का पहला भी. यह ऐसी भूख है, जिसे कभी किसी ने नहीं मिटाया. और 'अपनी बात' में कि 'जहां भी और जब भी इसकी मान्यता समाप्त कर दी गयी, यह अंधेरे का सैलाब बनकर और भी फैलता गया. यह निश्चित कोठों से उठकर गलियों-मोहल्लों में जड़ें जमा बैठा.' लेकिन मेरी दृष्टि में इतना ही नहीं, इसकी जड़ें कभी कट ही नहीं पातीं.—अगर बाहर से काट भी दी जायें तो यह अंदर ही अंतर अपना फैलाव बढ़ाती हैं और मानव के मानस को विकृत कर, खंडहर की दीवार पर उगे बटवृक्ष की तरह लहलहाती रहती हैं. परिणामस्वरूप हमारा घर-आंगन वेश्यालय बन जाता है, जिसे कोई देखे या न देखे, हम अपने आप अवश्य महसूस करते रहते हैं.

'सारिका' का यह अंक सचमुच देह व्यापार के रूप को समझने तथा उसका सही हल ढूंढ़ने का प्रयास है. सआदत हसन मंटो की **'नरगिस'** बेहद रुची.
▣ शालिग्राम, सहरसा (बिहार)

इन वेश्यालयों का क्या होगा!

वेश्यावृत्ति के कारणों को प्रस्तुत करने-वाली तथा वेश्याओं की स्थिति पर प्रकाश डालनेवाली 'सारिका' का 'देह व्यापार कथा विशेषांक' अंक : 315 अपने आप में अद्वितीय रहा. निःसंदेह वेश्यावृत्ति एक सुसभ्य समाज के लिए अभिशाप है, परंतु यह सभी देशों में अतिप्राचीन काल से प्रचलित है. भारतीय इतिहास में उर्वशी, गणिका तथा वैशाली की नगरवधू आदि के रूप में उनका यत्र-तत्र उल्लेख मिलता है. मध्ययुग में तो दक्षिण भारत में देवदासी प्रथा के रूप में उसे धर्म के साथ जोड़ने का घृणित कार्य भी किया गया. घर की नारियों की स्थिति सुधारने के लिए इस प्रथा का उन्मूलन अति आवश्यक है. इस संबंध में अनेक देशों द्वारा सरकारी स्तर पर भी प्रयास किये जा रहे हैं, परंतु आज के युग में जबकि विलासी उच्चवर्ग के लोगों द्वारा नित्य-प्रति प्याला पीकर नयी-नयी बालाओं की चाह की जा रही है, इस प्रथा का पूर्णतया उन्मूलन असंभव है. हो सकता है कि कानून के बल व भय से कोठों की वेश्याएं उजड़ जायें, जैसा कि देश के कई राज्यों में हो चुका है, परंतु नयी रोशनी तथा विचारों के परिप्रेक्ष्य में अनेक घरों में चल रहे वेश्यालयों का क्या होगा?
▣ शकुनचंद गुप्त, लालगंज, रायबरेली

निम्नस्तरीय भाषा खली

'सारिका' अंक : 315 'देह व्यापार कथा विशेषांक' पढ़ा. इस अंक में वेश्याओं के जीवन का सशक्त चित्रण तथा उनकी मानसिक स्थिति का चित्रण बखूबी किया गया है. **'मेरा सुहाग सदा सलामत रहे!'** रचना ने अंतर्मन को हिला दिया. कहानी प्रतियोगिता में सुभाष अखिल की कहानी **'बाजार बंद'** में जिस तरह निम्नस्तरीय भाषा का प्रयोग किया है, वह पसंद नहीं आया. 'आते हुए लोग' में राकेश कपूर की कहानी **'जरीना'** वास्तविकता लिये हुए है.
▣ अजयकुमार जैन, टकसाल, नजीबाबाद (उ. प्र.)

'सारिका की ओर से'

• मंगलेश डबराल तथा विनोद भारद्वाज

पिछले दिनों त्रिवेणी सभागार, नयी दिल्ली में युवाकवि मंगलेश डबराल को 'ओंप्रकाश साहित्य सम्मान' से अलंकृत किया गया. राधाकृष्ण प्रकाशन के संस्थापक स्वर्गीय ओंप्रकाश की स्मृति में अरविंद कुमार द्वारा स्थापित-संचालित यह पुरस्कार 39 वर्ष तक की उम्र के किसी युवा-लेखक को दिया जाता है, जिसमें एक वर्ष तक पांच सौ रुपये प्रतिमाह की राशि प्रदान की जाती है. 1979 में यह सम्मान गिरधर राठौ को उनके कविता संग्रह 'बाहर भीतर' पर, 1980 में मृणाल पांडे को उनके कहानी संग्रह 'शब्दवेधी' पर और अब 1981 के लिए मंगलेश डबराल को उनके कविता संग्रह 'पहाड़ पर लालटेन' पर दिया गया है.

स्वर्गीय भारतभूषण अग्रवाल की स्मृति में उनकी पत्नी बिंदु अग्रवाल द्वारा स्थापित और संचालित 'भारतभूषण अग्रवाल पुरस्कार' इस वर्ष युवाकवि विनोद भारद्वाज को दिया गया है, जो 35 वर्ष तक की आयु के किसी कवि को प्रतिवर्ष किसी पत्र-पत्रिका या किताब में प्रकाशित श्रेष्ठ कविता के लिए दिया जाता है. 1979 में यह पुरस्कार अरुण कमल को 'पहल' में प्रकाशित कविता 'उर्वर प्रदेश' पर, 1980 में उदय प्रकाश को 'जनयुग' में प्रकाशित कविता 'तिब्बत' पर और 1981 के लिए यह पुरस्कार विनोद भारद्वाज को 'साक्षात्कार' में प्रकाशित कविता 'हवा' पर दिया गया है.

पुरस्कृत रचनाकारों को 'सारिका' की हार्दिक बधाई. □

छाया : सुरेश उनियाल

आपकी सफलता के लिए शुभकामनाओं सहित, देशभर के कहानीकारों के लिए सस्नेह—

5250 रुपये के नकद पुरस्कार !

सारिका

सर्वभाषा कहानी प्रतियोगिता-1982

१. प्रथम पुरस्कार : १००० रुपये
२. द्वितीय पुरस्कार : ७५० रुपये
३. तृतीय पुरस्कार : ५०० रुपये
४. सांत्वना पुरस्कार (बारह) २५० रुपये प्रत्येक

▣ कहानी भेजने की अंतिम तिथि : १६ अक्तूबर, १९८२ इसके बाद प्राप्त होनेवाली रचनाएं प्रतियोगिता में शामिल नहीं की जा सकेंगी.

नियम एवं अन्य सूचनाएं

1. प्रतियोगिता में हिंदी तथा भारतीय भाषाओं के सभी कहानीकार भाग ले सकते हैं, किंतु हमारे पास रचनाएं हिंदी में ही भेजी जानी चाहिए.
2. कहानी छोटी या बड़ी कैसी भी हो सकती है और जीवन के किसी भी पक्ष को लेकर लिखी जा सकती है. वैसे सामान्यतः हम आशा करेंगे कि कहानी की शब्द संख्या 5000 शब्दों से अधिक न हो.
3. कहानी मौलिक एवं किसी भी भाषा में अप्रकाशित और अप्रसारित होनी चाहिए. कहानी भेजते समय कहानीकार कृपया इस आशय का एक प्रमाण-पत्र भी अवश्य भेज दें.
4. कहानी के साथ अपना चित्र और परिचय आदि न भेजें. आवश्यकता पड़ने पर हम स्वयं मंगवा लेंगे.
5. पुरस्कृत कहानियों के प्रथम प्रकाशन का अधिकार नितांत रूप से 'सारिका' के पास सुरक्षित रहेगा.
6. इस प्रतियोगिता में बैनेट कोलमैन एंड कंपनी के कर्मचारी या उनके निकट संबंधी भाग नहीं ले सकते.
7. पुरस्कारों का क्रम तीन वरिष्ठ कथाकारों का संयुक्त निर्णायक मंडल करेगा और इनका निर्णय अंतिम एवं सर्वमान्य होगा.
8. कहानी की एक प्रति अपने पास सुरक्षित रख लें, क्योंकि रचनाएं लौटाने में हम असमर्थ होंगे. इस विषय में कृपया किसी भी प्रकार का पत्र व्यवहार न करें.

जरूरी सूचना

कहानी भेजते हुए, लिफाफे पर पते की जगह यह कूपन चिपकाना आवश्यक है.

'सारिका'
सर्वभाषा कहानी प्रतियोगिता
10, दरियागंज
नयी दिल्ली-110002

▣ विशेष : सारिका, पाक्षिक के सालभर में कुल २४ अंक प्रकाशित होते हैं, परंतु इस प्रतियोगिता में पुरस्कृत कहानियां जनवरी, १९८३ में बढ़े हुए पृष्ठोंवाले अतिरिक्त अंक 'पुरस्कार विशेषांक' में प्रकाशित की जायेंगी.

लिलि हामेर : सिगरी उनसत के घर

▣ हिमांशु जोशी

"साहित्यकार के बारे में निकट से जान लेने के पश्चात उसके साहित्य को समझने का अपना अलग सुख होता है." शायद यही तलाश हिमांशु जोशी को सिगरी उनसत के घर लिलि हामेर ले गयी थी.

सिगरी उनसत की जन्म शताब्दी मई में हमने दिल्ली में मनायी थी. तब कल्पना भी नहीं की थी कि इतनी जल्दी सुदूर नार्वे जाकर, उनके घर तक की यात्रा का सुयोग अवसर मिल पायेगा.

अब तक हमने दक्षिण के द्वीपसमूह-क्रागेरा, विश्वविख्यात नाटककार इब्सन की कर्मभूमि—सीयन, कोबाल्ट तथा चांदी की खानों के प्रदेश—टेलिमार्क आदि दर्शनीय स्थल देखे थे. ये सभी स्थान ओस्लो से दक्षिण-पश्चिम में स्थित हैं, किंतु आज हम एक दूसरी दिशा की ओर बढ़ रहे हैं—लिलि हामेर—सिगरी उनसत के घर, बियोन्सन के घर.

सिगरी उनसत को साहित्य के लिए नोबेल पुरस्कार मिला था, बियोन्सन को भी. दोनों के घरों के बीच मात्र दस मील का अंतर है.

जुलाई 31.

सुबह के आठ बज रहे हैं.

हल्के-हल्के सुरमई बादल. ठंडी हवा, **सूरज की पीली किरणें. पीला प्रकाश, पर कहीं ताप झलकता नहीं. रात को दस बजे, ग्यारह बजे भी सूरज ऐसे ही चमकता है—तापहीन पीत प्रकाश...**

जब से यहां आये हैं, ध्रुव प्रदेश के निकट होने के कारण अंधियारा कम ही दिखलाई देता है. दिन का दायरा इतना विस्तृत हो जाता है कि रात सिमटकर बहुत छोटी हो जाती है. रात न रात जैसी होती है, न दिन जैसा दिन. एक धुंधला उजियाला रात में भी दिन का भ्रम पैदा करता रहता है. फिर लोग सड़कों पर बिजली के बल्ब क्यों जला देते हैं? जब कि उसकी जरूरत ही महसूस नहीं होती.

यह दिन-रात का प्रकाश; प्रकाश-ही-प्रकाश, विदेशी पर्यटकों के मन में एक प्रकार का उन्माद-सा जगा देता है. अक्सर सारी-सारी रात लोग जागते घूमते रहते हैं.

दिन और रात का ही नहीं, सारे समय-चक्र का गणित यहां आकर गलत हो जाता है.

▣

कार पूरी रफ्तार से भाग रही है. ओस्लो की साफ-सुथरी सड़कों पर इस समय तनिक भी भीड़ नहीं. इसलिए कार की गति और तेज हो जाती है. "हमारे यहां की तरह यहां कारें सड़कों पर चलती नहीं, बल्कि सड़कों को चीरती हुई भागती हैं." बहिरा शफीक अक्सर कहती है. यहां की हर चीज की तुलना वह अपने देश मिस्र से करती है. नार्वे में रहकर वह मिस्र को जी रही है.

कार की पिछली सीट पर मैं बैठा हूं. मेरे साथ इंग्रिड. आगे चावला-दंपती.

"लिलि हामेर कैसी जगह है?" पूछता हूं. वह किंचित संकोच से उत्तर देती है, "मुझे कभी इधर आने का अवसर नहीं मिल पाया..." कुछ रुककर कहती है, "मैं नार्वेजियन साहित्य में शोध कर रही हूं. मुझे अवश्य लिलि हामेर देखना चाहिए था. ऐसे स्थानों पर आने पर लोगों को एक दूसरी ही तरह की अनुभूति होती है. साहित्यकार के बारे में निकट से जान लेने के पश्चात, साहित्य को पढ़ने यानी समझने का अपना अलग सुख होता है..."

"सिगरी उनसत के साहित्य के बारे में आपकी क्या धारणा है...?"

"वह अपने युग की अच्छी लेखिका थीं. बड़ी साहसी, कर्मठ, अन्याय के विरुद्ध प्रतिकार करने की उनमें अद्भुत क्षमता थी. अपनी अमर कृतियों के माध्यम से उन्होंने नार्वे के मध्यकालीन इतिहास का, जो जीवंत चित्रण किया है, वैसा शायद ही मैंने कहीं पढ़ा हो..."

"अभी ओस्लो विश्वविद्यालय में उस दिन कुछ लेखकों, प्राध्यापकों से बातें हो रही थीं. कुछ लोगों की धारणा थी कि वह नारी-स्वातंत्र्य के विरुद्ध..."

इंग्रिड हंस पड़ती है. मेरा वाक्य पूरा होने से पहले ही बोल पड़ती है, "असल में सिगरी के विचारों का कुछ लोग गलत अर्थ लगाते हैं. सिगरी की मान्यता थी कि नारी-जीवन का सबसे बड़ा वरदान है, 'अच्छी मां बनना.' नारी जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप है, 'बुरी मां बनना.' मानव मूल्यों को वह सबसे अधिक महत्व देती थीं."

इंग्रिड को कुछ-कुछ सर्दी की शिकायत है. इसलिए आगे वाली खिड़की का पूरा शीशा बंद कर दिया है. मैं बंद शीशे से बाहर का दृश्य समेटने का प्रयास कर रहा हूं. ओस्लो शहर की सीमा-रेखा कब की समाप्त हो गयी है. अब देवदार के घने वन हैं—दूर-दूर तक फैले हुए. आस-पास बिखरी बस्तियां. हर घर साफ-सुथरा, धुला-पुछा. 'शो-केस' में सजी वस्तु की तरह, हर वस्तु कलात्मक. घरों के आगे जगह-जगह गोलाई लिये सफेद प्लास्टिक के लंबे कमरे, जिनमें हर मौसम में सब्जियां उगाने की सुविधा है.

सामने सड़क के ऊपर लिखा है—लिलि हामेर—सौ किलोमीटर!

ओस्लो के जीवन से निराश होकर, सिगरी उनसत किसी शांतिपूर्ण स्थल की तलाश में अब से लगभग 63 साल पूर्व इसी मार्ग से होकर लिलि हामेर पहुंची थीं—हारी, थकी.

तब अवस्था ही क्या थी! सैंतीस भी अभी पूरे नहीं किये थे. पति से अलग होकर पांच बच्चों के साथ उसने यहां शरण ली थी. दो बच्चे अपने थे, तीन पति की पूर्व पत्नी के. उसमें भी परेशानी यह कि अपनी एक लड़की तथा पति की पूर्व पत्नी का एक लड़का मानसिक रूप से विकलांग थे. स्वयं सिगरी गर्भवती थी...परित्यक्ता...

लिलि हामेर के मार्ग में इंग्रिड, चावला और लेखक

पर लिलि हामेर ने सिगरी को शांति-शक्ति ही नहीं प्रदान की, बल्कि खूब लिखने की प्रेरणा भी दी. 'क्रिस्तिन लेवरेंसदात्तेर' तथा 'ओलव औडेंसन' विश्वविख्यात उपन्यासों का सृजन यहीं हुआ था—इन्हीं पर 1928 में उसे नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था...

सिगरी ने न दिन देखा, न रात. सिगरेट और काली काफी के सहारे वह घंटों बैठकर लिखती थी. बच्चों की देखभाल के पश्चात जो भी समय मिल पाता, वह केवल लिखने में लगाती थी. नार्वे के मध्ययुगीन इतिहास का उसने इतना गहन अध्ययन किया था कि वह आसानी से बता सकती थी कि सन 1300 के आस-पास किस तरह की घास से मेजें साफ की जाती थीं. बर्फीली धरती पर लोग टूटी गाड़ियों की मरम्मत किस तरह किया करते थे. अपनी रचनाओं में जब वह धुएं का वर्णन करती है, तब सचमुच ही पाठक का धुएं से दम घुटने-सा लगता है...

"इस झील का नाम म्योसा है..." इंग्रिड तंद्रा भंग करती है, "नार्वे की सबसे बड़ी झील है, मीठे पानी की.

हम झील के किनारे-किनारे आगे बढ़ रहे हैं. कहां आरंभ है, कहां अंत—झील के ओर-छोर का पता नहीं चलता. दर्पण-सा स्वच्छ जल! कहीं-कहीं तिरती रंग-बिरंगी नौकाएं...

इससे पहले हम एक स्थान पर कुछ क्षणों के लिए रुके थे, जहां पर 1905 में कुछ क्रांतिकारियों ने छिपकर नार्वे के संविधान की संरचना की थी.

लिलि हामेर में सिगरी 1940 तक ही शांति से रह पायी थीं. उसके पश्चात दर्द की एक नयी दास्तान आरंभ हो गयी...यंत्रणाओं का अंतहीन इतिहास.

▣

उत्तरी नार्वे के पर्वतीय प्रदेश के वयोवृद्ध जब भी दूसरे विश्वयुद्ध तथा 1940 के नाजी आक्रमण का जिक्र करते हैं, उस वृद्ध महिला को अवश्य याद करते हैं, जो स्लेज-गाड़ी की सहायता से, किसी तरह मरती-जीती दुर्गम बर्फीले क्षेत्रों को पार कर रही थी. उसकी एक ही आकांक्षा थी, किसी तरह नार्वे की सीमा पार करके स्वीडन पहुंच जाये! भूखे भेड़ियों की तरह नाजी गुप्तचर पीछा कर रहे थे. उनके चंगुल में पड़ने का अर्थ था—सर्वनाश!

1912 में बनाया गया उनसत का चित्र

महिला अकेली नहीं थी, साथ में बिखरे हुए शरणार्थियों का एक पूरा काफिला था. स्वीडन तटस्थ राष्ट्र था. वहां पहुंचने पर इस नारकीय यंत्रणा से मुक्ति संभव थी...

मंजिल अभी थोड़ी ही दूर रह गयी कि वह बेहोश होकर गिर पड़ी. बड़ी तत्परता से उठाकर साथी शरणार्थियों ने किसी तरह स्लेज पर बिठाया.

स्वीडन की सीमा के भीतर वह पहुंची ही थी कि सीमा-अधिकारियों ने उसे तुरंत पहचान लिया. वह 58 वर्षीय महिला थी— सिगरी उनसत.

सिगरी को लगता था कि बहुत-सी परेशानियों से अब छुटकारा मिल जायेगा, किंतु अभी वह स्वीडन की राजधानी स्टॉकहोम पहुंची ही थी कि किसी ने सूचना दी कि उसका बड़ा बेटा ऐंडर्स लिलि हामेर के पास नाजी सैनिकों से अपने घर की रक्षा करता हुआ वीरगति को प्राप्त हो गया है.

यह मेरे बच्चों के सोने का समय है!

■ सिगरी उनसत

उन्नीस सौ अट्ठाइस का नोबेल पुरस्कार जैसे ही सिगरी उनसत के लिए घोषित हुआ, तमाम अखबारों के संवाददाता उनके घर पहुंच गये. उस समय वे अपने बच्चों को सुलाने जा रही थीं. अपने परिवार की दिनचर्या में किसी भी तरह का व्यवधान उन्हें पसंद नहीं था. संवाददाताओं की आशा के विपरीत सिगरी उनसत ने बड़ी विनम्रता से उन लोगों से कोई भी बात करने से इनकार कर दिया, "इस समय कष्ट उठाकर आप लोगों के यहां आने का कारण मैं समझती हूं. अभी-अभी तार द्वारा मुझे सूचना मिल गयी है कि मुझे इस वर्ष का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया है. यह मेरे लिए सौभाग्य और प्रसन्नता का विषय है, पर इससे भी अधिक प्रसन्नता मुझे अपने बच्चों के साथ रहने में मिलती है. यह मेरे बच्चों के सोने का समय है, धर्म, दर्शन या साहित्य पर चर्चा करने का नहीं. अतः क्षमा चाहती हूं." □

● प्रस्तुति : बलराम

सिगरी उनसत न रोयी, न चिल्लायी. विस्फारित नेत्रों से आसमान की ओर देखती रह गयी. नाजियों के विरुद्ध लड़ने की इतनी भारी कीमत भी चुकानी पड़ेगी—उसने कल्पना नहीं की थी. इस आघात को सह पाना आसान न था. इसके बाद सिगरी को खुले दिल से हंसते-मुस्कराते कभी किसी ने नहीं देखा था, परंतु सिगरी उनसत उन महिलाओं में से नहीं थी, जो अपनी पराजय स्वीकार कर लेती हैं. नाजियों के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए उसने नयी रणनीति तैयार की. तटस्थ राष्ट्र होने के कारण स्वीडन में रहकर अधिक कुछ कर पाना संभव न था. अतः एक दिन वह अपने जीवन की नयी यात्रा पर निकल पड़ी. साइबेरिया पार करके जापान पहुंची, अपने छोटे बेटे के साथ. वहां से 26 अगस्त, 1940 को सेनफ्रांसिसको, फिर न्यूयॉर्क.

न्यूयॉर्क के एक छोटे-से कमरे में सिगरी की सारी दुनिया सिमट आयी थी. नोबेल पुरस्कार से सम्मानित, अंतर्राष्ट्रीय ख्याति की यह महिला नार्वे सरकार के सूचना-विभाग में एक साधारण टाइपिस्ट की हैसियत से वर्षों तक काम करती रही. देश-सेवा का कोई काम छोटा-बड़ा नहीं होता, उसकी मान्यता थी. . .

इस बीच पत्रकारिता के माध्यम से अपनी रचनाओं के द्वारा, जगह-जगह घूम-फिरकर अपने ओजस्वी भाषणों से नाजियों के विरुद्ध संघर्ष जारी रखा.

इस निर्वासन काल में उसने 'भविष्य की ओर वापसी' 'नार्वे में बिताये स्वर्णिम दिन' जैसी चिरस्मरणीय मार्मिक पुस्तकें लिखीं, जिनमें सिगरी के आंतरिक संघर्षों का बड़ा हृदयस्पर्शी चित्रण है. . . पांच वर्ष पश्चात 1945 में जब वह स्वाधीन नार्वे लौटी—अपनी तपोभूमि लिलि हामेर, तब वह एकदम बदली हुई थी. शरीर में उतनी शक्ति न रह गयी थी, परंतु लिखने की ललक चैन से नहीं बैठने दे रही थी. . .

"हम हामेर आ गये हैं, यहां से लिलि हामेर की दूरी बस कुछ ही किलोमीटर की है. . ." चावला बतलाते हैं. यद्यपि वह भी इस दिशा में पहली बार आ रहे हैं, फिर भी आगे बैठने तथा गाड़ी चलाने के कारण, जानने का उनका हक हमसे अधिक बैठता है. . .

एक बजनेवाला है. सिगरी उनसत की पुत्रवधू को ओस्लो से डॉ. फ्लातीन ने पहले ही सूचना भिजवा दी थी कि मैं हर हालत में बारह बजे तक लिलि हामेर पहुंच जाऊंगा. पहले अकेले ही ट्रेन से जाने का मेरा कार्यक्रम था. डॉ. फ्लातीन ने यह भी आग्रह किया था कि उनके विदेशी मेहमान को सिगरी उनसत का घर भली भांति दिखवा दें. लोगों में ऐसी धारणा थी कि सिगरी उनसत की पुत्रवधू कुछ 'मूडी' स्वभाव की है. मैं रीते हाथ, बिना कुछ देखे ही लिलि हामेर से लौट जाऊं, इसकी भी कम संभावना न थी.

इंग्रिड को अब तक बहुत भूख लग आयी थी. भूख तो हमें भी कम नहीं लगी थी, किंतु इसमें अतिशयोक्ति नहीं कि भारतीयों में सहनशक्ति बहुत अधिक होती है.

लिलि हामेर कस्बे में हम आ गये हैं, पर अब समस्या है—बेयर्कबेक—सिगरी उनसत के घर को ढूंढ़ने की.

इंग्रिड एक क्षण भी भूख बर्दाश्त कर सकने की स्थिति में नहीं है.

कहीं बारह बजे बाद सिगरी की पुत्रवधू ने घर दिखलाने से इन्कार कर दिया तो? इतनी लंबी यात्रा व्यर्थ जायेगी. . . एक अजीब-सी स्थिति है.

चावला अंत में छाया के पास कार के लिए बित्तेभर जगह खोजने में सफल हो जाते हैं. इंग्रिड अपने झोले से अपना भोजन का पैकेट निकालकर अकेली ही खाने लगती है. हम भी मक्खन-टोस्ट निकाल नाश्ता करने लगते हैं.

परस्पर मिल-बांटकर भी तो हम भोजन कर सकते थे! मेरे भारतीय संस्कारों को कहीं कुछ अच्छा नहीं लगता. . . भोजन के पश्चात फिर बेयर्कबेक की खोज आरंभ होती है. कोई नहीं दीखता, जिससे पूछ सकें.

एक आदमी दूर से आता हुआ दिखता है, जब तक हम उसकी ओर बढ़ते हैं, वह मुड़कर ओझल हो जाता है.

हम चौराहे के पास खड़े हैं.

सामनेवाले मकान के हाते में कोई कार धो रहा है. गाड़ी उसी दिशा में मोड़ लेते हैं. वह बतलाता है—पास ही निचले ढलान का पहला मकान. . .

ढलान पर बने एक पुराने घर के पास जाकर ठिठक पड़ते हैं—यही है सिगरी उनसत की तपस्या भूमि!

—अगले अंक में—

सिगरी उनसत का घर, घर से जुड़ी यादें और यादों से जुड़े लोग. . .

अपने जीवन को दूसरों के लिए उत्सर्ग कर देनेवाली क्रिस्तिन लेवरंसदात्तेर की मौत भी उनके जीवन की ही तरह उदात्त थी. प्रस्तुत है सिगरी उनसत की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और चर्चित, तीन खंडोंवाली विशालकाय पुस्तक का समापन अंश. . . सिगरी उनसत को निकट से जाननेवालों का कहना है कि क्रिस्तिन किसी सीमा तक उनका अपना प्रतिरूप रही है.

एक सपने की मौत

• सिगरी उनसत

मठ के दरवाजे पर, हाथों में जलती मोमबत्तियां लेकर भिक्षुणियां आदमियों की कतार की अगवानी करने के लिए पहुंच गयी थीं. भय ने क्रिस्तिन की पूरी चेतना को अपने कब्जे में कर लिया था. उसे लगा, जैसे चलते हुए वह कुछ तो खुद अपने को ढो रही है और कुछ दूसरों के सहारे पर है. दरवाजे से गुजरकर वे सफेद दीवारवाले कमरे में पहुंच गये, जहां मोमबत्ती और लाल देवदार की मशाल की मिली-जुली पीली रोशनी दिपदिपा रही थी और कदमों की आहटें समुद्र की लहरों जैसी आवाजें पैदा कर रही थीं. उस मरणासन्न औरत को लग रहा था, जैसे उस रोशनी की ही तरह उसके जीवन की लौ भी बस बुझने ही वाली है और उन कदमों की आवाजों के साथ जैसे मौत उसके करीब आती जा रही है.

मोमबत्ती की रोशनी फिर खुले में फैल गयी थी. अब वे बरामदे में आ गये थे. चर्च की भूरे पत्थरों की दीवारों और ऊंची विशालकाय खिड़कियों से अब मोमबत्ती की रोशनी खेलने लगी थी. इस समय वह किसी की बाहों के सहारे पर थी. यह उल्फ ही था, पर इस समय तो वह उन सब लोगों जैसा दिख रहा था, जो उसे सहारा देते आये हैं. जब क्रिस्तिन ने अपनी बाहें उसके गले में डाल दीं और अपना गाल उसकी गर्दन से सटा लिया तो लगा जैसे वह फिर बच्ची बन गयी है और अपने पिता के साथ है. साथ ही उसे ऐसा भी लगा, जैसे वह किसी बच्चे को अपने वक्ष से लगा रही है. उसके काले सिर के पीछे से लाल रोशनी दिख रही थी, जो लगता था जैसे उस अग्नि की लपट हो, जो हर प्रेम को पोषित करती है.

थोड़ी देर बाद उसने आंखें खोलीं. अब उसका मस्तिष्क निर्विकार और शांत था. वह शयनागार में अपने बिस्तर पर तकिये के सहारे बैठी थी. एक भिक्षुणी कपड़े की पट्टी लिये उस पर झुकी हुई थी. उसमें से सिरके की गंध आ रही थी. वह सिस्टर एग्नेस थी. क्रिस्तिन उसे उसकी आंखों और माथे के लाल मस्से से पहचान गयी थी. दिन ऊपर चढ़ आया था और खिड़की के छोटे-से कांच में से छनकर भूरी रोशनी कमरे में आ रही थी.

वह भयानक दर्द अब नहीं था, पर वह पसीने से पूरी तरह भीगी हुई थी. सांस लेते हुए उसकी छाती बहुत जोर से आगे और पीछे हो रही थी. जो दवाई सिस्टर एग्नेस ने उसके मुंह में डाली, चुपचाप गटक गयी. उसका शरीर बिल्कुल ठंडा था.

क्रिस्तिन ने पीठ तकिये से सटा ली. अब उसे याद आया कि पिछली रात को क्या-क्या घटा था. वह मायाजाल भरा

कथासार

जेनी

▣ सिगरी उनसत

नार्वे की भावुक, कलाप्रेमी युवती जेनी नार्वे के जीवन, स्थितियों और रुक्षता से ऊबकर, अध्ययन और अपनी कलात्मक रुचियों के परिष्कार की पूर्ति के लिए रोम पहुंचती है, जहां हेल्गे से उसका प्रेम हो जाता है.

कलाकार बनने के लिए अटूट साधना में लीन जेनी प्रेम को उसकी संपूर्णता में उपलब्ध करने के लिए हेल्गे से विवाह कर लेती है. हेल्गे आत्मनिर्भर नहीं है. वह अपने प्रति भी लापरवाह है. फलस्वरूप जेनी को दो भूमिकाएं निभानी पड़ती हैं. एक पत्नी की, दूसरी मां की.

हेल्गे के साथ वह अपनी मातृभूमि नार्वे वापस लौट आती है, लेकिन नार्वे में स्थितियां जेनी के सर्वथा प्रतिकूल हैं, जिनसे घबराकर वह पुनः रोम जा पहुंचती है, लेकिन रोम भी अब उसके जीवन, उसकी रुचियों, उसकी इच्छाओं और उसकी बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर पाता. कुछ दिनों के असफल संघर्ष के बाद निराशा के गहरे और तेज आवेग के वशीभूत हो वह अंततः आत्महत्या कर लेती है.

आत्महत्या से पूर्व वह अपने कलाकार मित्र गनर हेगेन से कहती है—"काम का आनंद एक ही बात में आता है. उसके करने में, और इसमें हम किसी और को भागीदार नहीं बना सकते, लेकिन जब तक आनंद का कोई भागीदार न हो, तब तक आनंद सुख में परिवर्तित नही हो सकता." □

● प्रस्तुति : वीरेंद्र अस्थाना

दुस्वप्न गुजर गया है, लेकिन वह थोड़ा चकित भी थी. फिर भी यह ठीक ही हुआ कि काम हो गया. उसने बच्चे को बचा लिया और उन बेचारे लोगों की आत्माओं को उस घृणित काम के अपराध के भार से मुक्त रखा. वह समझती थी कि इससे उसे खुश होना चाहिए, क्योंकि मरने से ठीक पहले उसे यह अच्छा काम करने की अनुकंपा प्राप्त हुई थी. दिनभर का काम करने के बाद सांझ को योरनगार्द के घर में, अपने बिस्तर पर लेटते हुए उसे जितनी संतुष्टि मिलती थी, इस समय उससे अधिक मिल रही थी. इसके लिए उसे उल्फ का आभारी होना चाहिए. जब वह उल्फ का नाम ले रही थी तो शायद वह दरवाजे के पास ही कहीं बैठा था, क्योंकि तभी वह भीतर आया और बिस्तर के पास आकर खड़ा हो गया. क्रिस्तिन ने अपना हाथ उसकी ओर बढ़ा दिया. उसने हाथ को अपने हाथ में लिया और कसकर पकड़ लिया.

अचानक वह मरणासन्न औरत बेचैन हो गयी और उसके हाथ अपने गले पर बंधी पट्टी से उलझ गये.

"क्या हुआ क्रिस्तिन?" उल्फ ने पूछा.

"यह क्रॉस." वह फुसफुसायी और बड़े दर्द के साथ अपने पिता का सोने का पानी चढ़ा क्रॉस खींचकर बाहर निकाल दिया. तभी उसे याद आया कि उसने कल बेचारी स्तीनन की आत्मा की शांति के लिए कोई उपहार देने का वादा किया था. तब उसे कहां पता था कि दुनिया में उसके लिए अब अधिक समय शेष नहीं रह गया है. उसके पास देने के लिए अब कुछ नहीं बचा था, सिवाय इस क्रास के, जो उसके पिता का था और उसकी शादी की अंगूठी के, जो अब भी उसकी उंगली में पड़ी थी.

उसने अंगूठी को उंगली से बाहर निकाला और गौर से देखने लगी. उसके कमजोर हाथों को यह काफी भारी लग रही थी, क्योंकि यह शुद्ध सोने की थी और बड़ा लाल पत्थर इस पर जड़ा हुआ था. बेहतर होगा कि इसे ही वह किसी को दे दे. देना तो चाहिए, पर किसे? उसने अपनी आंखें बंद कर लीं और अंगूठी उल्फ की ओर बढ़ा दी.

"तुम यह किसे देना चाहती हो?" उसने पूछा और जब क्रिस्तिन ने कोई जवाब नहीं दिया तो खुद ही कहने लगा, "तुम्हारा मतलब है कि मैं इसे कुले को. . ."

क्रिस्तिन ने इनकार में गर्दन हिलायी और फिर अपनी आंखें कसकर बंद कर लीं. . .

"स्तीनन. . .मैंने वादा किया था कि. . .उसके लिए अर्पित करूंगी. . ."

उसने अपनी आंखें खोल दीं और उस अंगूठी को अपनी नजरों से तलाश करने लगी, जो उल्फ की भारी-भरकम हथेली पर रखी थी. उसकी आंखों से आंसुओं की एक अविरल धारा बह निकली. उसे लगा, जैसे वह पहली बार उस प्रतीक का अर्थ समझी हो. जो विवाहित जीवन इस अंगूठी ने उसे दिया, जिसके खिलाफ उसे इतनी शिकायतें रही हैं, जिस पर वह हमेशा कुलबुलाती रही, जिस पर उसे इतना गुस्सा रहा है और जिसका वह विरोध करती रही है—बावजूद इस सबके जिसे उसने प्यार किया है, जिसमें इतना आनंद लिया है.

चाहे वे सुख के दिन रहे हों या दुख के दिन. . .

उल्फ और भिक्षुणी ने कुछ बात की, जिसे वह सुन न सकी और फिर वह कमरे से बाहर निकल गया. क्रिस्तिन ने चाहा कि वह अपना हाथ उठाकर उससे अपनी आंखें पोंछ ले, पर वह ऐसा कर न सकी और हाथ उसकी छाती पर ही पड़ा रहा. भीतर की पीड़ा ने उसके हाथ को इतना भारी बना दिया था, जैसे लगता था कि वह अंगूठी अभी उसकी उंगली में ही है. उसका दिमाग फिर धुंधलाने लगा—उसे यह जानना ही चाहिए कि अंगूठी वास्तव में चली गयी है और उसका जाना उसने सपने में नहीं देखा है. अब सब कुछ अनिश्चित-सा लग रहा था. कल रात भी जो कुछ घटा, उसके बारे में वह निश्चित नहीं थी कि वास्तव में घटा था या उसने केवल सपना देखा था. अपनी आंखें खोलने की ताकत भी अब उसमें शेष नहीं थी.

"सिस्टर." भिक्षुणी ने उससे कहा, "अब आपको सोना नहीं चाहिए. उल्फ आपके लिए पादरी को बुलाने गया है."

एक झुरझुरी लेकर क्रिस्तिन फिर से पूरी तरह जाग गयी. अब वह निश्चित थी कि सोने की अंगूठी जा चुकी थी और उसकी बीचवाली उंगली पर अंगूठी पहनने की जगह पर सफेद निशान बन गया था.

उसके दिमाग में एक और अंतिम स्पष्ट विचार था कि इस निशान के मिटने से पहले उसे मर जाना चाहिए. यह विचार आने से वह खुश थी. उसे लगा कि यह उसके लिए एक ऐसा रहस्य है, जिसकी वह थाह नहीं ले पायी है, पर वह यह निश्चित रूप से जानती थी कि ईश्वर उसके ऊपर प्रेम की वर्षा करता हुआ, उसकी जानकारी के बिना ही अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिए उसकी स्वेच्छा के विरुद्ध, वस्तुओं के प्रति उसके मोह के विरुद्ध उसे जल्दी ही बुला रहा है. वह ईश्वर की दासी तो रही है, पर जिद्दी और निरंकुश, जिसके दिल में कोई आस्था नहीं थी, काहिल और बेपरवाह, अपने काम में मन न लगाये रखनेवाली. फिर भी, ईश्वर ने उसे अपनी सेवा से कभी मुक्त न किया और चमकदार सोने की अंगूठी के नीचे अपना पवित्र निशान बनाये रखा. यही निशान तो जाहिर करता है कि वह ईश्वर की, सारी दुनिया के स्वामी की दासी रही है और वही ईश्वर अब पादरी के अभिषिक्त हाथों के रूप में आ रहा है ताकि उसे मुक्ति और मोक्ष दे सके.

▣

पादरी सिरा ईलिव के हाथों से तेल तथा दिव्य पाथेय लेने के थोड़ी ही देर बाद क्रिस्तिन लेवरेंसदात्तेर फिर बेहोश हो गयी.

खून की उल्टियों के दौरों और तेज बुखार ने उसे बेसुध कर दिया था. उसके पास खड़े पादरी ने भिक्षुणियों को बताया कि वह अब जल्दी ही कूच करनेवाली है.

उस मरणासन्न औरत को एक-दो बार हल्का-सा होश आया और उसने एक-दो चेहरों की ओर देखा. उसने सिरा ईलिव को पहचाना, फिर उल्फ को भी पहचान लिया. उसने यह जाहिर करने की कोशिश की कि वह उल्फ को पहचान रही है और उसके पास आने तथा उसके प्रति शुभकामनाएं प्रकट करने के लिए वह उनकी आभारी है, पर जो लोग आसपास खड़े थे, उन्हें लग रहा था, जैसे मृत्यु की वेदना में वह अपने हाथ छटपटा रही है.

एक बार उसे अधखुले दरवाजे में से झांकता अपने छोटे बेटे मुनन का चेहरा दिखाई दिया. फिर उसने अपना चेहरा पीछे कर लिया और मां खाली दरवाजे को घूरती रह गयी. इस आशा से कि लड़का फिर से वहां दिखेगा. पर उसके बदले एक भिक्षुणी कमरे में आयी और एक गीले कपड़े से उसका चेहरा पोंछने लगी. यह भी उसे अच्छा लगा. फिर सब चीजें काले-लाल कोहरे में खो गयीं और एक गुर्राहट पहले बड़े डरावने ढंग से शुरू हुई और फिर मंद पड़ती चली गयी. लाल कोहरा भी हल्का होता चला गया और अंत में वह सूर्योदय से पहले के झीने कोहरे में बदल गया. सारी आवाजें बंद हो गयीं और वह जान गयी कि वह मर रही है.

▣

सिरा ईलिव और उल्फ हाल्दरसन उस मौतवाले कमरे से साथ-साथ बाहर निकल आये. थोड़ी देर के लिए वे मठ के अहाते में रुके.

बर्फ पड़ गयी थी. जिस समय वह औरत मौत के साथ जूझ रही थी, उसके आसपास खड़े लोगों को पता ही नहीं चला कि बर्फ कब पड़ी. चर्च की ढलवां छत से आनेवाली सफेद चमक से चौंधियाते दो लोग. हल्के भूरे रंग के आकाश के बीच में चर्च का बुर्ज सफेद चमक रहा था. खिड़कियों के छज्जों पर बर्फ महीन और एकसार पड़ी थी. लगता था जैसे वे दोनों लोग इसलिए रुक गये कि वे नयी पड़ी हुई बर्फ के आवरण को अपने पांव के निशानों से तोड़ना नहीं चाहते.

उन्होंने हवा में गहरी सांसें लीं. किसी भी बीमार के कमरे में भरी रहनेवाली बदबूदार हवा की अपेक्षा यह ठंडी और मीठी थी.

बुर्ज का घंटा फिर से बजने लगा था. दोनों ने ऊपर की ओर देखा. हिलते हुए घंटे पर से बर्फ के कतरे नीचे गिरते हुए छोटी-छोटी गेंदों में तब्दील हो रहे थे और गोल चक्कर काटते हुए नीचे आ रहे थे. □

चलते-चलते

शांति निकेतन की बात है. एक दिन उसके प्रांगण में कहीं से घूमता-घामता एक गधा आ गया. छात्रों ने देखा तो हुल्लड़ शुरू कर दिया. शोर सुनकर गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर अपने कमरे से बाहर निकल आये और हुल्लड़ का कारण जानकर बोले, "अरे भाई, यह किसका सहपाठी है? जिसका हो, अपने साथ क्लास में ले जाये!" इतना सुनना था कि सब छात्र बेचारे गधे को अकेला छोड़कर अपनी-अपनी क्लास में चले गये. □

▣ जीवन कमल

टी.एस. इलियट के साथ डोनाल्ड हॉल की बातचीत

एक प्रख्यात रचनाकार अपने पाठकों के बारे में क्या सोचता है, कैसा लगता है उसे समकालीन साहित्य तथा नवलेखन? . . . वह साहित्य के उद्देश्य और उस उद्देश्य की पूर्ति के बारे में कौन-कौन से मत प्रस्तुत करता है?—इन सबके बारे में कई कड़वी-मीठी बातें, सुनिए, नोबेल पुरस्कार विजेता कवि की जबानी—

"बुजुर्ग कवियों का छाये रहना, नये कवियों के रास्ते में बाधक बनता है!"

टी. एस. इलियट

क्या आपको वे परिस्थितियां याद हैं, जिनमें आपने कविता लिखनी शुरू की थी?

याद आता है कि उस समय मैं चौदह वर्ष का था और फिट्जजेरल्ड के 'उमर खैयाम' से प्रेरित होकर मैंने उसी शैली में बड़ी उदासी भरी, नास्तिकतावादी कविताएं लिखी थीं. सौभाग्य से मैंने वे कभी प्रकाशित नहीं होने दीं और न ही किसी को दिखायीं. आज तो उनका अस्तित्व भी नहीं है. . . .

विद्यार्थी जीवन में क्या आपको उन बुजुर्ग कवियों का आभास था, जो उस समय काव्य-जगत पर छाये हुए थे? आज का तरुण कवि इलियट, पौंड और स्टीवेंस के दौर में कविता रचता है. क्या उस समय भी ऐसा कोई दौर था?

मैं सोचता हूं, यह अच्छा ही हुआ कि उन दिनों इंग्लैंड या अमरीका में ऐसे कवि नहीं थे, जिनमें हम लोग विशेष दिलचस्पी लेते. मेरा विचार है कि काव्य-लोक पर बुजुर्ग कवियों का छाये रहना, नये कवियों के रास्ते में बाधक बनता है. सौभाग्य से हम ऐसी बाधा से बचे रहे.

आपने लिखा है कि पौंड ने आपकी कविता 'वेस्ट लैंड' में बहुत काट-छांट की थी. क्या पौंड की आलोचना से आपको कुछ लाभ हुआ था?

हां, उन दिनों वे बहुत ही अच्छे आलोचक थे. वे यह नहीं चाहते थे कि कोई उनकी नकल करे, बल्कि वे दूसरे की वास्तविक शक्ति और प्रतिभा को पकड़ने की कोशिश करते थे.

पौंड ने 'वेस्ट लैंड' में से किस किस्म की चीजें काटी थीं? क्या पूरे प्रकरण भी काट डाले थे?

हां, पूरे प्रकरण तक. मूल कविता में जहाज के टूटने का एक लंबा प्रकरण था. मैं कह नहीं सकता कि बाकी कविता से उसका क्या संबंध था. शायद उसे मैंने 'इन्फर्नो' के एक भाग से प्रेरित होकर लिखा था. एक और भाग 'रेप आफ दि रॉक' की शैली में था. पौंड बोले, "वह काम करने से क्या लाभ, जिसे दूसरे हमसे ज्यादा अच्छी तरह कर रहे हैं? कोई और बात करो."

आपके विचार में किसी कविता का विषय-वस्तु और स्वरूप में परस्पर क्या संबंध होता है? कहीं पढ़ा था कि आपने और पौंड ने एक बार एक खास प्रकार की छंदबद्ध कविता लिखने का संकल्प किया था. तो क्या आपने कविता की विषय-वस्तु के बारे में सोचने से पहले ही कविता का स्वरूप निर्धारित कर लिया था?

हां, एक तरह से. हमने मोलियेर की कविताओं का अध्ययन किया और सोचा कि क्या हमारे पास कोई ऐसी बात है, जिसे कहने के लिए यह रूप उपयुक्त होगा. सो, रूप ने विषय को सामने लाने में सहायता दी.

क्या आपने कभी फ्रांसीसी भाषा का प्रतीकवादी कवि बनने की कल्पना भी की थी?

हार्वर्ड छोड़ने के बाद मैंने पेरिस में जो एक रोमांटिक वर्ष बिताया था, उसमें इसकी कोशिश की थी. तब मैंने सोचा था कि अंग्रेजी छोड़कर फ्रांसीसी में ही क्यों न लिखा करूं. परंतु यह बड़ा मूर्खतापूर्ण विचार था. अब मैं मानता हूं कि कोई मनुष्य दो भाषाओं का कवि नहीं बन सकता. किसी ने दो भाषाओं में एक-सी महान या उत्तम कविता की हो, इसका कोई उदाहरण मेरे देखने में नहीं आया है. जिस भाषा में कोई अपने कवि-रूप को पूर्ण अभिव्यक्ति दे सके, वही उसकी असली काव्य-भाषा है. इसलिए उसकी खातिर दूसरी भाषा को तिलांजलि दे देनी चाहिए.

अपनी लेखन-रीति के संबंध में कुछ बताइए. सुना है, आप कविताओं की रचना टाइप-राइटर पर करते हैं?

कभी-कभी टाइप राइटर पर भी. आजकल मैं जो नाटक 'एल्डर स्टेटसमैन' लिख रहा हूं, उसका अधिकांश भाग मैंने पेंसिल से लिखा है. बाद में मैंने उसे स्वयं टाइप किया है और उस पर से मेरी पत्नी ने दुबारा टाइप किया है. स्वयं टाइप करते समय मैं परिवर्तन और परिवर्धन करता रहता हूं. कई बार तो काफी परिवर्तन कर डालता हूं. मैं निश्चित समय में ही कविता करता हूं. अनुभव से मैंने पाया है कि प्रतिदिन तीन घंटे कविता-लेखन कर सकता हूं. एक बार मैंने ज्यादा समय लगाने का निश्चय किया, लेकिन अगले दिन जब मैंने वह रचना पढ़ी, तो पाया कि पहले तीन घंटों के बाद जो कुछ लिखा था, वह संतोषजनक नहीं था.

कविता के मुकाबले में पद्य-नाटक लिखना कितना कठिन होता है?

मेरे विचार से कविता अलग दृष्टिकोण से लिखी जाती है और नाटक अलग दृष्टिकोण से. नाटक दर्शकों को दृष्टि में रखकर लिखा जाता है, जबकि कविता विशेषत: अपने लिए लिखी जाती है, भले बाद में उसे और लोगों तक पहुंचाये बिना कवि को चैन नहीं पड़ता. कविता के संबंध में कहा जा सकता है कि हम अपने ही लिए अपने भावों को शब्दों का लिबास पहनाते हैं. कभी-कभी दोनों दृष्टियां एक बिंदु पर मिल जाती हैं और कविता का जन्म होता है. शेक्सपीयर में बहुत बार देखने में आता है कि वह कविता भी लिख रहा होता है और साथ ही रंगमंच, कलाकार और दर्शक की दृष्टि से भी सोच रहा होता है.

आजकल जो कविता इंग्लैंड और अमरीका में लिखी जा रही है, क्या आप उसे ध्यान से पढ़ते हैं?

कह नहीं सकता. प्रकाशक होने के नाते कभी ध्यान से पढ़ा करता था और अच्छे कवियों को ढूंढना चाहता था. लेकिन ज्यों-ज्यों कवि की उम्र बढ़ती जाती है, उसका यह विश्वास डिगता जाता है कि वह नयी पीढ़ी के अच्छे कवियों को पहचान भी सकेगा या नहीं. और उसे यह भय भी रहता है कि कहीं ये नये कवि उसका स्थान न ले लें, जैसे कि कभी उसने अपनी पूर्ववर्ती पीढ़ी के कवियों का स्थान ले लिया था. हमारी प्रकाशन-संस्था 'फेबर एंड फेबर' में एक कम उम्र अधिकारी है, जो नये कवियों की कविताएं पढ़ता और परखता है. अगर मुझे स्वयं किसी नये कवि की रचनाएं जंच जाती हैं, तो मैं उन्हें अपने कम उम्र साथियों को दिखाता हूं और उनकी राय लेता हूं. फिर भी, यह खतरा रहता ही है कि कई बार न चाहते हुए भी अच्छी कविता नजरअंदाज हो जाती है. इसीलिए मैं किसी भी नये कवि के बारे में अपने कम उम्र मित्रों की राय लेता हूं और तब अपनी राय बताता हूं कि वह कितना अच्छा कवि है.

मैं बिल्कुल भी नहीं चाहता कि कभी नये कवियों का विरोध करूं, जैसे कि आरंभ में मेरी कविता का विरोध हुआ था. □

सार्त्र, दर्शन के लिए नोबेल पुरस्कार पर आपत्ति न करते

रॉब्ब ग्रिये

"मैं समझता हूं—सार्त्र की अपनी पुस्तकें भूख से मरते हुए बच्चों की ज्यादा मदद नहीं करतीं. वास्तव में सार्त्र का विरोध नये उपन्यास से उतना नहीं जितना मात्र 'साहित्य' शब्द से है. वह साहित्य को सशंकित दृष्टि से देखते हैं. यह शायद इसलिए कि उन्हें स्वयं अपनी पुस्तकों (उपन्यासों) की श्रेष्ठता पर संदेह है. यदि उनकी पुस्तकों को 'साहित्य' की संज्ञा दी जाये, तो सार्त्र को स्वयं बहुत बुरा लगेगा, क्योंकि कहीं भीतर वह यह जानते हैं कि वह अच्छे साहित्यकार नहीं हैं. मुझे लगता है कि यदि साहित्य की जगह उन्हें दर्शन या विज्ञान पर नोबेल पुरस्कार दिया जाता, तो उसे स्वीकार करने में उन्हें कोई आपत्ति न होती. ." □

चलते-चलते

बॉब एंडरसन (नाटककार) ने किसी साहित्यिक समस्या के बारे में मेरी राय मांगी. मैंने उसे कविता लिखने के लिए कहा. . .छापने-बेचने के लिए नहीं, देखने-पढ़ने के लिए भी नहीं, बल्कि फेंक देने के लिए. वास्तव में, कविता साहित्य-लेखन का गणित है और वह संगीत के बहुत निकट है. वह सबसे बढ़िया इलाज भी है.

बॉब ने मेरी सलाह मान ली. वह छह महीने तक कविताएं लिखता रहा. . .और कविताओं ने अपना असर दिखाया.

—स्टेनबेक

गांव का हर आदमी इस बात को जानता था कि हेलेन टुरेल अपना फर्ज पूरी तरह निभाती थी और खासकर अपने इकलौते भाई के अनाथ बच्चे के प्रति तो और भी ज्यादा ईमानदार थी. गांववाले इस बात को भी जानते थे कि उठती जवानी से ही जार्ज टुरेल ने अपने परिवारवालों को खूब सताया था और बताने पर वे इस बात पर अचंभा भी नहीं करेंगे कि कई नये लाभ के अवसर देने और छीने जाने के बाद वह एक गैरकमीशन प्राप्त अधिकारी की लड़की से फंस गया और अपने बच्चे के जन्म से कुछ हफ्ते पहले घोड़े से गिरकर मर भी गया. दुखद बात तो यह थी कि जार्ज के माता-पिता दोनों स्वर्गवासी हो चुके थे. स्वतंत्र जीवनयापन करनेवाली हेलेन चाहती तो इस अशोभनीय कृत्य से किनारा काट सकती थी और खासकर ऐसे मौके पर जबकि उसे फेफड़ों की बीमारी का खतरा था. और... वह दक्षिणी फ्रांस चली आयी थी.

उसने बच्चे को मंगाने के लिए भाड़े और बंबई से एक धाय का बंदोबस्त किया और उनसे आकर मार्सेवेस में मिली. शैशव में पेचिस के दौरे से उसने बच्चे की रक्षा की.

नाटक करते-करते वह ऊब चुकी थी... और हेलन को अपनी जिंदगी भर का झूठ सच के रूप में बता देना चाहती थी... झूठ-सच के अंतर्द्वंद्व में आखिरकार इंसान के जेहन पर क्या गुजरता है?

आखिरकार उस दुबले-पतले लेकिन बीमारी पर विजय पानेवाले बच्चे को शरद के अंतिम दिनों में वह अपने हैंपशायर के घर में पूर्णतया स्वस्थ अवस्था में ले ही आयी.

ये सभी विवरण सार्वजनिक संपत्ति हैं चूंकि हेलेन खुले दिन की तरह खुली थी और उसका मानना था कि बदनामी दबाने से बढ़ती ही है. उसने कबूल कर लिया था कि जार्ज अत्यंत कमीना था लेकिन तब स्थिति और भी अधिक बदतर होती यदि कहीं बच्चे की मां बच्चे को अपने पास रखने के अधिकार पर जोर देती.

सौभाग्य से, ऐसा लगता है कि सचमुच उस वर्ग के लोग धन के लिए लगभग सभी कुछ कर सकते हैं और वैसे भी जार्ज संकट में हेलेन की शरण में जाता था. उसने खुद को सही महसूस किया. उसके मित्र भी उससे सहमत थे कि गैर-कमीशन प्राप्त अधिकारी से संबंध विच्छेद कर लिया जाये और बच्चे को हर तरह का लाभ दिया जाये. रेक्टर द्वारा बपतिस्मा में 'माइकेल' नामकरण से इसका श्रीगणेश हुआ और जहां तक वह खुद को जानती थी, उसका कहना था कि वह शिशु प्रेमी कभी नहीं रही. लेकिन अपने भाई की गलती की वजह से वह जार्ज पर आसक्त हो गयी थी और उसने यह भी संकेत किया था कि जार्ज का चेहरा-मोहरा और कद-काठी अपने पिता पर ही गयी है.

दरअसल, सच्चाई यह थी कि उसका माथा टुरेल वंश की तरह था—चौड़ा, छोटा, सुडौल और इसके नीचे बड़ी-बड़ी आंखें जिसे माइकेल ने अत्यंत ईमानदारी से दुबारा प्रकट किया था. उसके मुंह का कटाव उसके परिवारगत कटाव से बेहतर था. लेकिन हेलेन जिसका मानना था कि उसके मां के पक्ष में कुछ भी अच्छा नहीं है, दृढ़तापूर्वक कहती थी कि वह पूर्णतया टुरेल है.

कुछ ही सालों में माइकेल वैसा ही निकल आया जैसा हमेशा हेलेन चाहती थी—निडर, विवेकशील और सुदर्शन. छह वर्ष की उम्र में वह जानना चाहता था कि वह उसे मम्मी क्यों नहीं कह सकता जैसा कि दूसरे बच्चे अपनी-अपनी मांओं को कहते हैं. उसने समझाया कि वह सिर्फ उसकी आंटी है और आंटी हू-ब-हू वही नहीं होती है जैसी कि मम्मी. लेकिन यदि उसे यह पुकारने में अच्छा लगता हो तो वह रात को सोने के वक्त उसे मम्मी कह सकता है.

माइकेल ने इस राज को अत्यंत निष्ठा से छिपाये रखा जबकि हेलेन हमेशा की तरह इस सचाई को उसके दोस्तों को बता देती थी. इसकी जानकारी जब माइकेल को लगी तो वह क्रोध से बिफर उठा, "आपने क्यों कहा? आपने क्यों कहा?"

माली

• रुड्यार्ड किपलिंग

"चूंकि सच्चाई को कह देना हमेशा ही सबसे अच्छी बात होती है!" खाट पर कांपते हुए उसके शरीर को अपनी बांहों के घेरे में लेते हुए हेलेन ने कहा.

"यह तो ठीक है, लेकिन जब सच्चाई अप्रिय हो तो मेरे खयाल से यह अच्छी बात नहीं है."

"बुरा नहीं मानते, मुन्ने!"

"नहीं, मैं बुरा नहीं मानता लेकिन," हेलेन ने महसूस किया कि उसका शरीर तन गया है, "जब आपने कहा है कि मैं आपको मम्मी नहीं कह सकता तो आज से, अब कभी मैं आपको मम्मी नहीं कहूंगा. सोते वक्त भी नहीं."

"लेकिन क्या यह ज्यादती नहीं है?" हेलेन ने पूछा.

"मैं परवाह नहीं करता...बिलकुल नहीं करता. आपने मेरे मन को ठेस पहुंचायी है और मैं भी बदले में ठेस पहुंचाऊंगा. जब तक जीवित रहूंगा, तब तक ठेस पहुंचाऊंगा."

"ऐसी बात मत कहो, मेरे बच्चे! तुम नहीं जानते क्या..."

"मैं पहुंचाऊंगा और जब मैं मर जाऊंगा तो और भी ज्यादा सताऊंगा!"

"शुक्र है कि मैं तुमसे बहुत पहले ही स्वर्ग सिधार जाऊंगी बच्चे!"

"अपना भाग्य आप नहीं जानतीं." माइकेल, हेलेन की बुढ़िया और सपाट चेहरेवाली नौकरानी के सामने बात कर रहा था.

"बहुत से बच्चे कम उम्र में ही मर जाते हैं और मैं भी मर जाऊंगा तब तुम देखना!"

हेलेन की सांस रुक गयी और वह दरवाजे की ओर मुड़ गयी. लेकिन 'मम्मी, मम्मी' का विलाप सुनकर वह फिर लौट आयी और दोनों मिलकर रोने लगे.

दस वर्ष की उम्र में प्राइमरी स्कूल की दूसरी कक्षा में किसी ने उसे बताया कि उसका शहरी दर्जा बिलकुल ठीक नहीं है. इस बात को लेकर वह हेलेन से भिड़ गया और परिवारों से संबंधित हकलाते स्वरों में दी जानेवाली उसकी सभी दलीलों को ध्वस्त कर दिया.

"इसके एक शब्द पर भी यकीन न करो!" अंत में उसने प्रसन्नतापूर्वक कहा, "आंटी, चिंता मत करो. मैंने अंग्रेजों के इतिहास और शेक्सपियर के लेखन में अपने जैसे बहुत से उदाहरण खोज लिये हैं. शुरू करें, एक विलियम थे—महान विजेता और ढेर सारे व्यक्ति और ये लोग पहले दर्जे का हक पा गये. मेरे ऐसे होने से आप पर कोई फर्क नहीं पड़ेगा न! क्या पड़ेगा?"

"यदि ऐसा कुछ हो सकता!" हेलेन ने कहा.

"ठीक है! यदि आपको रोना आता है तो अब हम इस विषय पर बात नहीं करेंगे." इसके बाद उसने फिर कभी अपनी इच्छा का जिक्र नहीं किया. दो वर्ष बाद जब उसने चतुराई से अपने लिए चेचक का इंतजाम कर लिया और 104 डिग्री बुखार में वह और कुछ नहीं, सिर्फ इसी बात को तब तक बुदबुदाता रहा जब तक कि उसके कानों में हेलेन की दिलासा भरी यह आवाज नहीं पहुंची कि पृथ्वी पर या इसके परे कोई भी चीज उन दोनों के बीच फर्क पैदा नहीं कर सकती.

माइकेल मूर्ख नहीं था अतः युद्ध ने उसे उन्नतिपूर्ण जीवनवृत्ति की ओर उन्मुख किया. वह अक्तूबर में वजीफा लेकर ऑक्सफोर्ड चला आया. अगस्त के अंतिम दिनों में वह पब्लिक स्कूल के लड़कों के युद्ध के 'पूर्णाहुति' में शामिल होने जा रहा था, जिसमें सभी लोग अपने आपको झोंक रहे थे. लेकिन उसके ओ. टी. सी. के कप्तान, जहां वह एक साल सार्जेंट के रूप में रह चुका था, ने उसका इरादा बदल दिया और उसे सीधे उस बटालियन में कमीशन प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया जो एकदम नयी बनी थी और जिसमें आधे लोग पुरानी रेड आर्मी के थे और बाकी आधे लोग सीलन भरे तंबुओं में मानसिक रोगी हो गये थे. हेलेन को सीधी भर्ती के बारे में सुनकर धक्का लगा.

"लेकिन यह तो हमारे परिवार में है." माइकेल हंसा.

"तुम्हारा मुझसे कहने का आशय यह तो नहीं है कि तुम अभी भी उस पुरानी कहानी पर यकीन

■ रुड्यार्ड किपलिंग

जन्म : 30 दिसंबर, 1865 बंबई में.

नोबेल पुरस्कार : सन् 1907

'बैरेक रूम बैलेड', 'प्लेन टेल्स फ्रॉम द हिल्स', 'द लाइट दैट फेल्ड'...और 'दाइ सर्वेंट ए डॉग' जैसी कृतियों के चर्चित लेखक.

निधन : 18 जनवरी, 1936.

रखते हो?" हेलेन ने कहा, "मैं तुम्हें अपनी शपथ दे चुकी हूं और मैं इसे दुबारा देती हूं कि इतना काफी है."

"ओह! इसकी मुझे कोई परवाह नहीं. कभी थी भी नहीं." उसने ओजभरे स्वर में जवाब दिया, "मेरा मतलब यह था कि मुझे भर्ती कर लिया जाता तो मैं पहले ही चला जाता—अपने दादा की तरह!"

"एसी बातें मत करो! क्या तुम इतनी जल्दी खत्म होने से नहीं डरते?"

"ऐसे भाग्य कहां! जानती हैं, 'के' क्या कहता है?"

"हां, लेकिन मेरे बैंकर ने पिछले सोमवार को कहा था कि इसे क्रिसमिस से आगे जाने की संभावना नहीं है—आर्थिक कारणों से."

"उम्मीद कीजिए कि वह सच हो लेकिन हमारे कर्नल जो स्थायी नौकरी में हैं, कहते हैं कि यह काम अधिक दिनों का है."

माइकेल की बटालियन सुयोग से उस मायने में भाग्यशाली थी जिसका अर्थ होता है, बहुत-सी छुट्टियां. नारफोक तट की सुरक्षा के लिए इस बटालियन का उपयोग छिछली खाईयों के बीच किया गया. तदुपरांत उत्तर में स्कॉच के मुहाने की चौकसी के लिए इसे भेजा गया और अंत में दूरस्थ सेवा के आधारहीन अफवाह में आकर इसे हफ्तों रोके रखा गया. इसी दिन रेलवे जंक्शन पर चार पूरे घंटों के लिए माइकेल को हेलेन से मिलना था लेकिन एक व्यवधान आ

गया और उसने हेलेन के पास कुशलता का तार ही भेजा.

फ्रांस में भाग्य ने बटालियन का फिर साथ दिया. इसकी तैनाती सेलियंत के करीब की गयी और वहां पर इसने खुशहाल समय गुजारा. उन दिनों सोम्मे का निर्माण कार्य चल रहा था. आरमेंट्री और लेवेंटी क्षेत्रों की शांति का लाभ यह ले चुकी थी.

एक महीने बाद, और माइकेल के उस खत के ठीक बाद जिसमें उसने हेलन को लिखा था कि यहां पर कोई खास काम नहीं है, अतः चिंता की कोई बात नहीं है, एक भीगी सुबह में एक बम के परखच्चे के गिरने से उसकी मृत्यु हो गयी और शरीर पर मलबे का ढेर जमा हो गया.

अब तक गांव को युद्ध का अनुभव पुराना हो चला था और अंग्रेजी फैशन के मुताबिक उन्होंने इसकी आवश्यकतानुसार एक अनुष्ठान को भी खोज लिया था. जब महिला डाकपाल ने सात वर्षीय बच्ची को मिस टेरेल को देने के लिए सरकारी तार दिया तो उसने रेक्टर के माली को देखकर कहा, "अब मिस हेलन की बारी है," उसने अपने पुत्र के बारे में सोचते हुए जवाब दिया, "वह औरों से ज्यादा दिन जीवित रहा." वह बच्ची जोर-जोर से रोती हुई खुद ही तार देने आयी क्योंकि मास्टर माइकेल उसे प्रायः मिठाइयां दिया करते थे. उस वक्त हेलन कमरे की प्रत्येक अंधकारी पट्टियों को अत्यंत सावधानी से गिराते हुए व्यग्रता से कह रही थी, "खोने का मतलब मृत्यु है!" तत्पश्चात वह उस भयावह यात्रा में शामिल हो गयी जो कि भावनाओं की निष्प्रयोजन श्रृंखला में से गुजरने के लिए अनिवार्य रूप से उत्प्रेरित करता है. रेक्टर ने बेशक आशा बंधायी और ढाढ़स दिया कि कैदियों के शिविर से वह जल्दी ही आ जायेगा. कुछ लोगों ने उसे कुछ पूर्णतया सच्ची कहानियां सुनायीं जिनके मुताबिक दूसरी महिलाओं के बिछुड़े आत्मीय चमत्कारिक ढंग से मिल गये थे. बाकी लोगों ने उससे उन सचिवों को इस बारे में सूचित करने का आग्रह किया जो परोपकार के लिए तटस्थता से हूण कारागारों के कमांडरों से अत्यंत गुप्त और एकदम सही सूचना हासिल करके उसे सूचित कर सकते हैं. हेलन ने सभी कुछ किया, लिखा और उस पर दस्तखत किये जो उसे सुझाया गया.

एक बार माइकेल अपनी छुट्टियों में हेलन को एक गोला बारूद बनानेवाले कारखाने में ले गया था जहां हेलन ने एक बम का निर्माण खाली लोहे से लेकर निर्मित वस्तु में होते देखा था. उस समय उसके दिमाग में अचानक यह बात कौंधी थी कि इस कमबख्त चीज को एक भी सेकेंड के लिए अकेला क्यों नहीं रहने दिया जाता था, "मेरे ही सगे की जान लेकर इसने मुझे अनाथ बना दिया." उसने दस्तावेज को तैयार करते समय खुद से ही कहा.

यथासमय जब सभी संगठनों ने उसका पता न लगा पाने के बारे में असमर्थता के लिए अत्यधिक ईमानदारी से खेद व्यक्त किया तब उसके अंतर्मन से खुद ही आवाज आयी. माइकेल की मृत्यु हो गयी थी और उसका समूचा संसार जड़ हो गया था और वह उसके शोक में डूब गयी थी. अब वह जड़ हो गयी थी और सारा संसार आगे बढ़ रहा था.

फिर नजदीकी रिश्तेदार होने के कारण एक सरकारी सूचना आयी जिसके साथ अमिट पेंसिल से उसके लिए लिखते हुआ पत्र का एक पन्ना, चांदी का एक परिचय चक्र और एक घड़ी थी जिसमें बताया गया था कि लेफ्टिनेंट माइकेल टुरेल की लाश मिल गयी है, उसकी शिनाख्त कर ली गयी है और हगेनजीले के तीसरे फौजी कब्रिस्तान में दुबारा उनका नाम दर्ज हो गया है.

हेलेन को लगा, एक उल्लास से भरापूरा संसार था और दूसरी ओर टूटे संबंध वाले रिश्तेदार ... यह सब बातें शीघ्र ही उसे बता दी गयीं और समय सारणी द्वारा यह बात स्पष्ट हो गयी कि कितना सरल है और जीवन क्रम में कितना कम हस्तक्षेप होता है किसी के कब्र पर जाने में और देखने में!

"कितना फर्क होता," रेक्टर की पत्नी ने कहा, "यदि वह मेसोपोटामिया या गैल्लीपोली में भी मारे जाते!"

दूसरे किस्म के जीवनदान की पीड़ा ने हेलन को चैनल के पार पहुंचा दिया जहां संक्षेप में पदवियों की दुनिया थी. वहां उसे पता लगा कि तीसरे हेगेन जीले आराम से पूर्वाह्न की ट्रेन से पहुंचा जा सकता है जिससे सुबह की नाव पकड़ी जा सकती है और वहां एक आरामदायक छोटा होटल भी है. जहां कोई भी शांतिपूर्वक रात गुजार सकता है और दूसरी सुबह किसी की कब्र देख सकता है. यह सब जानकारी उसे एक केंद्रीय अधिकारी से प्राप्त हुई जो चूने के बुरादों और रद्दी कागजों के वात्याचक्र से भरे उजड़े हुए बेहर के एक बोर्ड में रहता था और जिसकी छतें कोलतार की बनी हुई थीं.

"वैसे," उसने कहा, "क्या आप अपनी कब्र जानती हैं?"

"हां, शुक्रिया!" हेलेन ने कहा, और माइकेल के खुद के छोटे टाइपराइटर पर टाइप उसकी कतार और संख्या को दिखाया. अधिकारी अपने पास की बहुत-सी बहियों में से इसकी मिलान करके जांच कर लेता अगर लंकाशायर की एक मोटी औरत इन दोनों के बीच में न आ टपकी होती. वह औरत पूछने लगी कि वह अपने लड़के को कहां पा सकती है जो कि ए. एस. सी. में कारपोरेल था. सुबकते हुए उसने कहा कि उसका सही नाम ऐंडरसन था लेकिन प्रतिष्ठित परिवार से आने की वजह से वह स्मिथ के नाम से भर्ती हुआ था और 1915 के शुरू में डिकीबुश में वह मारा गया था. उसके पास न तो उसकी संख्या थी और न ही उसे पता था कि उसने अपने कुलनाम के साथ अपने दो ईसाई नामों में से किसका प्रयोग किया था. उस महिला के आवधिक पर्यटन टिकट की अवधि ईस्टर सप्ताह के अंत में खत्म होनेवाली थी और तब तक उसे यदि अपने लड़के के बारे में पता नहीं चला तो वह पागल हो जायेगी. ऐसी हालत में वह हेलन की छाती पर गिर पड़ी. लेकिन दफ्तर के पीछे एक छोटे से सोने के कमरे से अधिकारी की पत्नी जल्दी से बाहर निकली और उन तीनों ने महिला को खाट पर लिटा दिया.

"ये लोग प्रायः ऐसा ही करते हैं," अपने घाघरे के कसे नाड़े को ढीला करते हुए अधिकारी की पत्नी ने कहा, "कल इसने बताया था कि वह हूज में मारा गया था. क्या आपको निश्चित रूप से पता है कि आपके आत्मीय की कब्र कहां है? इससे काफी फर्क पड़ता है."

"हां, शुक्रिया!" हेलन ने कहा और इससे पहले कि खाट पर लेटी महिला दुबारा अपना विलाप शुरू करती वह बाहर निकल आयी.

कासनी और नीले धारीदार लकड़ी की इमारत में बना भीड़ के बीच चाय ने उसे पुनः दूसरे दुःस्वप्न में पहुंचा दिया. उसने अपने बिल का भुगतान किया और उसके पास खड़ी निर्विकार और सपाट नाक नक्शवाली वह अंग्रेज औरत उसके साथ स्वेच्छा से हो ली, जो हगेनजीले जानेवाली ट्रेन के बारे में उसकी पूछताछ सुन रही थी.

"मैं भी हगेनजीले जा रही हूं," उसने स्पष्ट किया, "लेकिन तीसरी हगेनजीले नहीं. मेरा एक चीनी का कारखाना है. वह तीसरी हगेनजीले के ठीक दक्षिण में है. क्या आपको वहां होटल में कमरा मिल गया है!"

"हां, शुक्रिया! मैंने तार दे दिया है."

"अच्छा किया! कभी-कभी यह जगह पूरी तरह भर जाती है और कभी-कभी वहां एकाध ही आदमी होता है.

"मेरे लिए यह सूचना नयी है. मैं पहली बार वहां जा रही हूं."

"दरअसल, मैं युद्धविराम के बाद से नवीं बार जा रही हूं. अपने किसी के लिए नहीं. खुदा का शुक्र है मैंने किसी को नहीं खोया. लेकिन जैसे कि हर एक के मित्र होते हैं मेरे भी घनिष्ठ मित्र हैं जिन्होंने आत्मीयों को खोया है. प्रायः यहां आते हुए मैंने देखा है कि सिर्फ जगह दिखा देने से और बाद में उसके बारे में बता देने से उन्हें सुविधा होती है. कोई उनके लिए फोटो भी खींच सकता है." फिर वह बोली, "इस वक्त दो या तीन को चीनी के कारखाने पर देखना है और कब्रगाह के आसपास और भी बहुत से हैं. मेरी कार्यप्रणाली यह है कि मैं उसे सुरक्षित रखती हूं और उन्हें व्यवस्थित करती हूं. और जब एक क्षेत्र को उपयुक्त बनाने के लिए काफी कमीशन मिल जाता है तो मैं तुरंत दूसरे क्षेत्र में चली जाती हूं और कार्य करती हूं. इससे लोगों को सुविधा होती है."

"मेरा भी यही ख्याल है." हेलन ने कांपते हुए कहा.

"बेशक! इससे मदद मिलती है. मेरे पास यहां पूरे बारह या पंद्रह कमीशनों की सूची है," उसने कोडाक को पुनः थपथपाया, "मैं आज रात उनकी छंटनी करूंगी. ओह! मैं तो आपसे पूछना ही भूल गयी. वह आपके क्या थे?"

"मेरा भतीजा था," हेलन ने कहा.

"ओह! हां! मुझे कभी-कभी हैरानी होती है कि मृत्यु के बाद क्या वे हमें जानते हैं? आपका क्या विचार है?"

"मैं नहीं जानती! मुझे ऐसे विषयों पर सोचने का कभी साहस भी नहीं होता."

"शायद यह अच्छी बात है. मैं समझती हूं कि मृत्यु का ही दुख काफी है. ठीक है, मैं अब आपको और अधिक परेशान नहीं करूंगी."

▣

हेलन ने आभार व्यक्त किया लेकिन जब वह होटल पहुंची तो श्रीमती स्कार्सवर्थ ने उसे अपनी मेज पर खाना खाने का आग्रह किया और भोजन के पश्चात एक छोटे से घिनौने सभाकक्ष में अपने कमीशनों तथा मृतकों की जीवनी के माध्यम से ले गयी जहां रिश्तेदारों की फुसफुसाती आवाज गूंज रही थी. हेलन लगभग साढ़े नौ बजे तक इसे सहती रही.

थोड़ी देर बाद ही दरवाजे पर दस्तक हुई और स्कार्सवर्थ अपने हाथ में मृतकों की सूची लिये हुए दाखिल हुई. "हां, हां... मैं जानती हूं—" उसने शुरू किया, "आप मुझसे आजिज आ गयी हैं—लेकिन मैं आपसे कुछ कहना चाहती हूं, आप आप विवाहित नहीं हैं? तब शायद आप नहीं समझ पायें. लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ता है. मुझे किसी

भारत : किपलिंग के लिए एक विकल्प

▣ एंगस विल्सन

भारत अंत तक किपलिंग का पीछा करता रहा. वह कम समय में ही भारत से लौट गये थे, लेकिन वह भारत को कभी भूल नहीं पाये. वापसी में जब उनका जहाज मिस्र पहुंचा तब आंखों में आंसू भरकर किपलिंग ने कहा, "यहां पहुंचकर अनुभव होता है मैं भारत से कितनी दूर आ गया हूं. मैं इसे भारत का सम्मोहन मानता हूं." जो भारत को नहीं समझ सके या जिन्होंने उससे द्वेष किया वे भी इस देश से सम्मोहित हुए बिना नहीं रह सके. लेकिन किपलिंग को लेकर एक गलत मान्यता है कि उन्हें भारत से द्वेष था.

यह सही है कि किपलिंग पश्चिम की औपनिवेशिक परंपरा की देन थे. वह ऐसे समय में भारत आये क्योंकि ब्रिटिश साम्राज्यवाद अंतिम सांसें गिन रहा था. मगर उन्होंने ऐसा नहीं किया. भारतीय विश्वासों ने, परंपरा की अक्षुण्णता ने उन्हें विश्वस्त किया कि अंग्रेजों का वही हश्र होगा जो मुगलों का हुआ—उन्हें एक दिन भारत से वापस जाना होगा. भारत के प्रति किपलिंग का लगाव एक औपनिवेशिक व्यक्ति का लगाव नहीं था. भारत उनकी कल्पना और चेतना का स्थायी अंग बन चुका था. भारत उनके लिए एक विकल्प की तरह था. विविध विचारों, शिक्षाओं और चेतनाओं से निर्मित भारत. यह अंग्रेज शासकों का भारत नहीं, दरअसल किपलिंग का भारत था. जब उन्होंने कहा कि 'पूर्व और पश्चिम का मिलन संभव नहीं'. तब उन्होंने पश्चिम को चेतावनी दी कि वह अपने विचार पूर्व पर लादने का प्रयत्न न करे. □

—प्रस्तुति : धीरेंद्र अस्थाना

रोशनी का सहारा

विश्व प्रसिद्ध लेखक, किपलिंग ने पहाड़ी पर बना एक घर खरीदा और पत्नी के संग रहने लगे.

एक दिन पति-पत्नी पहाड़ी की ढलान पर सैर करते हुए एक छोटी-सी झोपड़ी के पास जाकर रुके, जिसमें एक बुढ़िया अकेली ही रहती थी.

बुढ़िया ने उन्हें देखकर पूछा, "वह मकान आपका है न, जिसकी खिड़कियां इस तरफ खुलती हैं."

"हां, हमारा ही है." किपलिंग ने कहा.

"रात को उन खिड़कियों में रोशनी दिखायी देती है, तो मुझे बहुत अच्छा लगता है. यहां चारों तरफ की वीरानी में वह रोशनी मुझे बहुत ही सुखद लगती है. . .क्या आप कुछ दिन और यहां रहेंगे. . .और खिड़कियों वाले कमरे में बत्तियां जलाया करेंगे?"

"हां, कुछ दिन रहने का खयाल तो है," किपलिंग ने कहा, "और उस कमरे में बत्तियां भी जलायेंगे."

कुछ दिनों के बाद जब वे वापस जाने लगे, तो किपलिंग ने घर की निगरानी करने वाले नौकर को हिदायत दी कि उस कमरे की बत्तियां रात-भर जलती रहने दिया करे. फिर उन्होंने खिड़कियों के परदे उतार देने के लिए कहा, ताकि उस अकेली बूढ़ी स्त्री को और ज्यादा रोशनी दिखायी दिया करे. □

—प्रस्तुति: सुखबीर

न किसी से कहना ही है. मैं अब इस तरह ज्यादा दिन नहीं रह सकती. "लेकिन कृपया. . ." स्कार्सवर्थ सीधे मुड़ी और उसने दरवाजे को बंद कर दिया. उसकी रूखी जबान चलने लगी थी, "एक मिनट में," उसने कहा, "आप. . .आप जानती हैं कि मैं अभी सीढ़ियों के नीचे अपनी उन कब्रों के बारे में बात कर रही थी. वे वास्तव में सभी कमीशन प्राप्त हैं. बहरहाल, इसमें अधिकांशतः वही लोग हैं." उसकी आंखें चारों तरफ घूम गयीं, "बेल्जियम में उनके पास क्या अद्वितीय भित्तिपत्र थे. तुम सोच भी नहीं सकती. हां, मैं कसम से कहती हूं कि वे सभी कमीशन प्राप्त थे. लेकिन उनमें से एक. . . तुम जानती हो. . . वह मेरे लिए संसार की दूसरी चीजों से ज्यादा महत्वपूर्ण था. समझ गयीं न!" हेलेन ने सिर हिलाया.

"किसी और से महत्वपूर्ण. . .और हां, वह मेरा कुछ भी नहीं था लेकिन वह था. वह है. इसीलिए मैं कमीशन का काम करती हूं. यही राम कहानी है."

"लेकिन तुमने मुझसे क्यों कहा?" हेलन ने पूछा.

"चूंकि मैं झूठ बोलते-बोलते थक गयी हूं. हमेशा झूठ बोलना सालों-साल. जब मैं झूठ बोलती नहीं हूं तो झूठा अभिनय करना पड़ता है. आप नहीं जानती कि इसका क्या मतलब होता है? वह मेरे लिए सब कुछ था जो उसे नहीं होना चाहिए था—एक सच्ची चीज—सिर्फ वह चीज जो इससे पहले मेरे संपूर्ण जीवन में घटित नहीं हुई थी. और मुझे ऐसा दिखावा करना पड़ता था कि जैसे वह मेरे लिए कुछ भी नहीं था. मुझे हर लफ्ज के बारे में ध्यान रखना पड़ता था.

"कितने वर्ष बीत गये? हेलन ने पूछा."

"छह साल और चार महीने पहले और इसके बाद तीन तिमाही. मैं तबसे आठ बार आ चुकी हूं. कल नवीं बार होगा. और मैं उसके पास दुबारा नहीं आ सकती जबकि दुनिया में इस बात को कोई जानता न हो. मैं जाने से पहले किसी के सामने दिल खोलना चाहती थी. क्या आप समझ गयीं? मुझे आपसे कहना ही पड़ा. मैं इसे और अधिक दबाकर नहीं रख सकती थी. . .आह! मैं नहीं रख सकती!"

अपने जुड़े हुए हाथ लगभग अपने मुंह के बराबर उसने ऊपर उठाये और तेजी से नीचे गिरा दिये. हेलन आगे बढ़ी और उसे पकड़ लिया फिर अपना सिर उस पर झुकाया. स्कार्सवर्थ पीछे हट गयी और उसका चेहरा स्याह हो गया, "हे खुदा! तुम इसे इस कदर महसूस कर रही हो!"

हेलेन कुछ भी न बोल सकी.

दूसरे दिन सुबह श्रीमती स्कार्सवर्थ कमीशन का चक्कर लगाकर तड़के ही चली गयी और हेलन तीसरे हेगेनजीले की ओर अकेले ही पैदल चल पड़ी.

अभी भी यहां पर निर्माण कार्य चल रहा था और पक्की सड़क से पांच या छह फुट ऊपर स्थित था. गहरी खाई के पार पुलिया, अधबनी दीवार में जाने के लिए प्रवेशद्वार का काम करती थी. वह काष्ठयुक्त मिट्टी की कुछ सीढ़ियों पर चढ़ी. उसे नहीं मालूम था कि तीसरे हगेनजीले में 21 हजार मृतकों की गणना हो चुकी है. वह भीड़ में किसी क्रम या व्यवस्था का भेद नहीं कर पा रही थी.

काफी दूरी पर सफेदी की एक रेखा थी जो यह साबित करती थी कि यह कुल दो-तीन सौ कब्रों का खंड है जिसमें कब्र का पत्थर लगाया जा चुका है, जिसमें फूल रोप दिये गये थे और जिसमें नवजात बोयी हुई घास हरी दिखायी दे रही थी. यहां कतारों के अंत में साफ-साफ अक्षरों को देख सकती थी और जब उसने अपनी पर्ची से उनका मिलान किया तो उसे लगा कि यह वह जगह नहीं है.

कब्र के पत्थर की सीध में पीछे एक आदमी झुका हुआ था. जाहिर था, वह माली रहा होगा. चूंकि वह मुलायम जमीन में एक नवजात पौधे को दबा रहा था. अपने हाथ में कागज लिये हुए वह उसकी ओर चली आयी. उसने सिर उठाया और किसी दुआ-सलाम या भूमिका के बिना उससे पूछा, "किसे खोज रही हैं आप?"

"लेफ्टिनेंट माइकेल टुरेल, मेरा भतीजा!" हेलन ने धीरे-से कहा. एक-एक शब्द को अलग करते हुए जिसे वह अपने जीवन में हजारों दफा दुहरा चुकी थी.

"मेरे साथ आइए!" उसने कहा, "मैं आपको दिखाऊंगा कि आपका बेटा कहां लेटा है."

जब हेलन कब्रगाह से जाने लगी तो अंतिम बार पीछे देखने के लिए मुड़ी. उसने देखा कि कुछ दूरी पर वह शख्स अपने नवजात पौधे पर झुका हुआ था. हेलन ने उसे माली समझा और चली आयी. □

अनुवाद: विनोद दास

फ्रांसीसी कहानी

शरीफज़ादे

• अनातोले फ्रांस

"देखा दोस्त, तुम हमेशा यह कह-कहकर खुश होते हो कि तुम्हें मुझसे प्यार है, पर आइंदा तुम ऐसा नहीं कहोगे!"—आदमी के जीवन में आनेवाली कोई भयावह परिस्थिति कभी-कभी उसके चरित्र को भी परिभाषित कर जाती है. एक ऐसे ही हादसे को रेखांकित करती कहानी.

मैं भीतर आया तो पाओलिन दे लूजी ने हाथ हिलाकर मेरा स्वागत किया. फिर कुछ देर चुप्पी छायी रही. उसका स्कार्फ और तीलियों का बना टोप आरामकुर्सी पर लापरवाही से पड़े थे.

"मादाम," मैंने अपनी बात जरा खोलकर कही, "क्या आपको याद है कि ठीक दो साल पहले, आज ही के दिन, पहाड़ी की तली में बहती नदी के किनारे, वहीं जहां आपकी आंखें इस समय देख रही हैं, आपने क्या कहा था? क्या आपको याद है कि पैगंबरी मुद्रा में आपने हाथ हिलाते हुए आप मेरे पास तक आयी थीं. मेरे प्रेम की स्वीकारोक्ति को आपने मेरे होठों के भीतर ही रोक दिया था और मुझे न्याय तथा स्वतंत्रता के लिए जीने और लड़ने के लिए छोड़ दिया था. मादाम, आपके जिस हाथ को मैं चूमते हुए अपने आंसुओं से भिगो देना चाहता था, उसी से आपने मुझे बाहर का रास्ता दिखाया था और मैं बिना कहे लौट गया था. मैंने आपकी आज्ञा का पालन किया. दो सालों से मैं बेवकूफ कंगलों के साथ रह रहा हूं जिनके लिए लोगों के मन में घृणा और अरुचि ही होती है,

जो दिखावे की सहानुभूति के हिंसक प्रदर्शन से लोगों को बहकाते हैं और जो चढ़ते सूरज को ही सलाम करते हैं. . ."

अपने हाथ के एक इशारे से उसने मुझे चुप करा दिया और संकेत किया कि मैं चुप हो जाऊं और उसकी बात सुनूं. फिर बगीचे से सटे उस सुगंधित कमरे में पक्षियों के कलरव के बीच दूर से आती चीखें सुनाई दीं—"मारो! इन शरीफजादों को फांसी पर चढ़ा दो. इनकी गर्दनें उतार दो!"

उसका चेहरा पीला पड़ गया था.

"कोई खास बात नहीं है," मैंने कहा, "किसी कमीने को सबक सिखाया जा रहा होगा. ये लोग चौबीस घंटे पेरिस में घर-घर जाकर गिरफ्तारियां कर रहे हैं. यह भी हो सकता है कि वे लोग यहां घुस आयें. तब मैं कुछ नहीं कर पाऊंगा. हालांकि आपके पड़ोस के लोग मेरे बारे में अधिक कुछ नहीं जानते, फिर भी, मैं अब एक खतरनाक मेहमान होता जा रहा हूं."

"रुको!" उसने मुझे टोक दिया.

दूसरी बार चीखों ने शाम की शांत हवा को चीरा. फिर एक आवाज चीखी, "रास्ते बंद कर दो, वह बदमाश भागने न पाये!"

खतरा जितना करीब आ गया था, उस अनुपात से मादाम दे लूजी कुछ अधिक ही शांत दिख रही थी.

"आओ, दूसरे माले पर चलते हैं." उसने कहा.

डरते हुए हमने दरवाजा खोला तो सामने से एक व्यक्ति अधनंगा-सा भागता हुआ आता दिखा. आतंक उसके चेहरे पर बुरी

तरह फैला हुआ था. उसके दांत कसे हुए थे और घुटने आपस में टकरा रहे थे. घुटे गले से वह चीख-सा रहा था, "मुझे बचा लो! कहीं छिपा लो! वे वहां हैं...उन्होंने मेरा दरवाजा और बगीचा उजाड़ दिया है. अब वे मेरे पीछे हैं..."

मादाम दे लुजी ने उस व्यक्ति को पहचान लिया था. वह प्लांचो था, एक बूढ़ा दार्शनिक जो पड़ोस में ही रहता था. मादाम ने फुसफुसाते हुए उससे पूछा, "कहीं मेरी नौकरानी की नजर तो तुम पर नहीं पड़ गयी. वह भी जैकोबिन है."

"नहीं, मुझे किसी ने नहीं देखा."

"सब ईश्वर की कृपा है."

वह उसे अपने सोने के कमरे में ले गयी. मैं उन दोनों के पीछे-पीछे चल रहा था. सलाह-मशविरा जरूरी हो गया था. छिपने की कोई ऐसी जगह ढूंढ़नी ही पड़ेगी. जहां प्लांचो को कुछ दिन नहीं, तो कुछ घंटों के लिए ही छिपाया रखा जा सके.

इंतजार के इन क्षणों में वह अपने को खड़ा न रख सका.

सारा ज्ञान

▣ अनातोले फ्रांस

पूर्व के किसी देश का राजा जब अपनी युवावस्था में गद्दी पर बैठा तो उसकी इच्छा हुई कि वह दुनियाभर का सारा ज्ञान सीख ले ताकि वह अपना राजकाज न्यायपूर्ण ढंग से चला सके. इस काम के लिए उसने अपने राज्य के तमाम विद्वानों को बुलवाया और कहा कि वे सारी दुनिया का ज्ञान पुस्तकों के रूप में इकट्ठा कर लायें.

विद्वान तत्काल यात्रा पर निकल गये और तीस साल बाद वे ऊंटों के काफिले पर पुस्तकों को लादकर आये. अब तक राजा अपने राजकाज में इतना व्यस्त हो गया था कि इतनी सारी पुस्तकें पढ़ने का उसे समय ही नहीं था. इसलिए उसने विद्वानों को आज्ञा दी कि इसे संक्षिप्त करके लायें.

पंद्रह साल और गुजर गये. इस बार विद्वान इस पूरे ज्ञान को दस गुना कम जिल्दों में समेट लाये, पर राजा तो अब और अधिक व्यस्त था और इतनी किताबों को नहीं पढ़ सकता था. विद्वानों से इनकी संख्या कम करने के लिए कहा गया.

दस साल बाद विद्वान और दस गुना कम में सारा ज्ञान समेटकर लौटे पर तब तक राजा कुछ बूढ़ा हो चला था और थक गया था. उसने कहा कि वे बहुत जरूरी ज्ञान को ही एक पुस्तक में बनाकर लायें. विद्वान फिर अपने काम पर चल दिये.

पांच साल बाद वे अपने इस पूरे काम का निचोड़ एक ग्रंथ में भरकर राजा के सामने लाये, पर तब राजा की मौत उसके करीब आ गयी थी और अब उसके पास एक पुस्तक पढ़ने का भी समय शेष नहीं था. □

आतंक से उसे जैसे लकवा मार गया था.

वह हमें समझाने की कोशिश करता रहा कि उस पर मोस्यों दे कजोत के साथ मिलकर संविधान के विरुद्ध षड्यंत्र करने का आरोप है. साथ ही 10 अगस्त को उसने पादरी तथा सम्राट के शत्रु को बचाने के लिए एक दल का गठन किया. ये सब आरोप गलत थे. सच्चाई यह थी कि ल्यूबिन अपनी घृणा उस पर निकाल रहा था. ल्यूबिन एक कसाई था जिसे वह हमेशा ठीक तौलने के लिए कहता रहा. कल का वह दूकानदार आज इस गिरोह का मुखिया है.

और तभी सीढ़ियों पर किसी के चढ़ने की आवाजें आने लगी थीं. मादाम दे लुजी ने जल्दी से चटखनी चढ़ायी और उस बूढ़े को परदे के पीछे धकेल दिया. दरवाजे पर थपथपाहट और आवाज से पाओलिन ने पहचान लिया कि यह उसकी नौकरानी थी. वह दरवाजा खोलने के लिए कह रही थी और बता रही थी कि बाहर गेट पर नगर पालिका के अधिकारी नेशनल गार्ड्स के साथ आये हैं और अहाते का निरीक्षण करना चाहते हैं.

"वे कहते हैं," वह औरत बता रही थी, "कि प्लांचो इस घर के भीतर है. मैं अच्छी तरह जानती हूं कि वह यहां नहीं है. मैं जानती हूं कि आप ऐसे धूर्त को शरण नहीं देंगी, पर ये लोग मेरे शब्दों पर यकीन नहीं करेंगे."

"ठीक है, उन्हें आने दो." दरवाजा खोले बिना मादाम दे लुजी ने कहा, "और घर का एक-एक कोना दिखा दो."

यह बात सुनते ही कायर प्लांचो पर्दे के पीछे ही बेहोश होकर गिर पड़ा. उसे होश में लाने में मुझे काफी दिक्कत हुई. उसके चेहरे पर पानी छिड़का तब कहीं जाकर उसने आंखें खोलीं.

जब वह होश में आ गया तो वह युवती अपने बूढ़े पड़ोसी के कानों में फुसफुसायी, "दोस्त, मुझ पर भरोसा रखो. मत भूलो कि औरत बड़ी पहुंचवाली है."

फिर उसने बड़ी शांति से, जैसे वह रोज का घर का काम कर रही हो, पलंग को थोड़ा खिसकाया और तीन गद्दों को उस पर इस तरह रखा कि बीच में एक आदमी की जगह बन जाये.

जब वह ये सारे इंतजाम कर रही थी, सीढ़ियों पर से जूतों और बंदूकों की खट-खट की आवाजें सुनाई दीं. हम तीनों के लिए ये भयानक क्षण थे. और फिर यह शोर ऊपर चढ़ता हुआ हल्का हो गया. वे ऊपर की मंजिल पर गये थे. हम जान गये कि जैकोबिन नौकरानी के मार्गदर्शन में वह पहले अटारी को छान मारेंगे. छत चरमरायी. डरावने ठहाके गूंज उठे थे. जूतों और संगीनों की चोटों की आवाजें हम तक आ रही थीं. हमने राहत की सांस ली. पर हमारे पास बरबाद करने के लिए एक भी क्षण नहीं था. मैंने प्लांचों को गद्दों के बीच की खाली जगह पर घुसने में मदद दी.

हमें यह करते देख मादाम दे लुजी ने नकारात्मक मुद्रा में सिर हिलाया. बिस्तर इस तरह से ऊबड़-खाबड़ हो गया था कि कोई भी शक कर सकता था.

उसने खुद जाकर ठीक करना चाहा पर फिजूल. वह स्वाभाविक-सा नहीं लग रहा था.

"मुझे खुद ही बिस्तर पर लेटना पड़ेगा." उसने कहा.

कुछ क्षणों के लिए वह सोचती रही फिर बड़ी शांति और शाही लापरवाही से उसने मेरे सामने ही अपने कपड़े उतारे और बिस्तर पर लेट गयी. फिर उसने मुझसे भी अपने जूते, कोट और टाई आदि उतारने के लिए कहा.

"कोई खास बात नहीं है, बस तुम्हें मेरे प्रेमी का अभिनय करना होगा. इसी तरह हम उन्हें धोखे में डाल सकेंगे."

हमारा इंतजाम पूरा हो गया था और उन लोगों के नीचे उतरने की आवाजें आने लगी थीं. वे चीख रहे थे—"डरपोक! चूहा!"

अभागे प्लांचों को जैसे लकवा मार गया हो. वह इतनी बुरी तरह कांप रहा था कि पूरा बिस्तर ही हिल रहा था.

उसकी सांसें इतनी जोर से चल रही थीं कि बाहर से ही कोई भी आदमी सुन सकता था.

"कितनी खेद की बात है," मादाम दे लुजी ने हल्की आवाज में कहा, "अपनी थोड़ी-सी चालाकी से मैं समझती थी कि काम बन जायेगा. फिर भी कोई बात नहीं. हिम्मत तो हम नहीं छोड़ेंगे. ईश्वर हमारी रक्षा करे."

किसी ने दरवाजे पर जोर से घूंसा मारा.

"कौन है?" पाओलिन ने पूछा.

"राष्ट्र के प्रतिनिधि."

"क्या थोड़ी देर रुक नहीं सकते?"

"जल्दी खोलो, नहीं तो हम दरवाजा तोड़ डालेंगे."

"जाओ दोस्त, दरवाजा खोलो."

अचानक एक जादू-सा हुआ. प्लांचों ने कांपना और लंबी सांसें लेना बंद कर दिया.

सबसे पहले ल्यूबिन अंदर आया. वह रूमाल बांधे हुए था. उसके पीछे-पीछे एक दर्जन लोग हथियार और बरछे लिये अंदर घुस आये. पहले मादाम दे लुजी और फिर मुझे घूरते हुए वह जोर से चीखे, "शी! लगता है, हम आशिकों के एकांत में बाधक बन रहे हैं. खूबसूरत लड़की, हमें माफ कर देना."

फिर वह बिस्तर पर आकर बैठ गया और प्यार से उस ऊंची नस्ल की औरत की ठुड्डी ऊपर उठाते हुए बोला, "यह तो साफ है कि इतना सुंदर चेहरा रात-दिन भगवान की प्रार्थना करने के लिए नहीं होता. ऐसा होता तो कितनी खेद की बात होती. लेकिन पहले अपने गणतंत्र का काम, बाकी काम बाद में: अभी तो हम देशद्रोही प्लांचों को ढूंढ़ रहे हैं. वह यहीं है, मैं निश्चत रूप से कह सकता हूं. मैं उसे ढूंढ़ कर रहूंगा. मैं उसे फांसी पर चढ़ा दूंगा. इससे मेरा भाग्य सुधर जायेगा."

"तो फिर उसे ढूंढ़ो."

उन्होंने मेजों और कुर्सियों के नीचे झांका, पलंग के नीचे अपने बरछे चलाये और गद्दों पर संगीनें घोंपी.

मैं उन्हें तहखाने में ले गया. वहां उन्होंने लकड़ी के ढेर को बिखेर दिया और शराब की कई बोतलें खाली कर दीं. काफी देर तक वे शराब पीते उधम मचाते रहे. जब वे पीते-पीते थक गये तो बाकी बची शराब की बोतलों को बंदूक के हत्थों से तोड़ते हुए ल्यूबिन ने तहखाने में शराब की बाढ़-सी लगा दी. उनके बाहर निकलते ही मैंने लपककर गेट बंद कर दिया. फिर मैं दौड़ता हुआ मादाम दे लुजीके पास आया और उसे बताया कि खतरा टल गया है.

यह सुनते ही उसने गद्दे को पलटा और पुकारा, "मोस्यो प्लांचों मोस्यो प्लांचो."

जवाब में एक हल्की-सी सिसकी सुनाई दी.

"ईश्वर का लाख-लाख शुक्र है." वह चीख-सी पड़ी. "मोस्यो प्लांचो, मैं तो समझी कि आप मर गये."

फिर मेरी ओर मुड़कर बोली :

"देखो दोस्त, तुम हमेशा यह कह-कहकर खुश होते हो कि तुम्हें मुझसे प्यार है, पर आइंदा तुम ऐसा नहीं कहोगे." □

▣ अनातोले फ्रांस

जन्म : सन् 1844 (फ्रांस)

सन् 1921 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित. सर्वाधिक चर्चित पुस्तक 'थाया.' अन्य चर्चित कृतियां 'द गॉड्स आर अथंस्ट,' लाइफ ऑफ जोन ऑफ आर्क' और रबेलायस आदि.

देहांत : सन् 1924

भूख

पास्तरनाक

एक लंबे-चौड़े, ऊबड़-खाबड़ चरागाह के सिरे पर एक बकरा हरी-भरी झाड़ी पर अपने दोनों पांव टिकाये इस प्रकार पत्तियां खा रहा था, जैसे बहुत ही भूखा हो.

मैं गौर से उसे देखता रहा. शाम की छाया ढल रही थी और हवा में मादकता भरी हुई थी. मैं सोचने लगा कि यह बकरा दिन भर खाकर भी इतना भूखा क्यों है? और अगर भूखा नहीं है, तो क्या इसका मन अभी तक अतृप्त है? मुझे लगा कि पेट भर जाने पर भी आदमी अगर खाता है, तो बात तन से हटकर मन पर आ जाती है. तन के मुकाबले में मन की भूख कहीं ज्यादा है. क्या मन की उस भूख को किसी सीमा में में बांधा जा सकता है? क्या उसे बांधना मनुष्य के लिए हितकर है? और क्या इससे मनुष्य की आत्मा की प्रगति रुक नहीं जायेगी?... वह बकरा बेतहाशा खाये जा रहा था. ढल रही शाम की भी उसे चिंता नहीं थी. और मैं सोचे जा रहा था. आखिर मैं इस नतीजे पर पहुंचा—मन को बांधो, लेकिन मन के आनंद को न बांधो. आनंद डुबोता नहीं, उबारता है—हमेशा उबारता है. □

● प्रस्तुति : सुखबीर

मेरी एक बेटी है नताशा, जो इसी महीने सत्रह वर्ष की हो जायेगी. एक दिन वह मुझसे कहने लगी, "बाबा! मैं तुम्हारे साथ एक ही मेज पर नहीं बैठ सकती. जब-जब मेरी नजरें तुम्हारे हाथों पर पड़ती हैं, मुझे याद आ जाता है कि तुमने मेरे दो भाइयों को इन्हीं हाथों से मारा है."

वह बेवकूफ और मूर्ख लड़की इतना नहीं समझती कि मैंने उन्हीं की भलाई के लिए ऐसा किया था, उसकी और अपने बच्चों की बेहतरी की खातिर!

मैंने युवावस्था में विवाह किया था. मेरी पत्नी बेहद उर्वरा सिद्ध हुई और मेरे लिए आठ बच्चे पैदा किये, किंतु नौवें बच्चे के जन्म के समय वह स्वर्ग सिधार गयी. बच्ची तो खैर उसने पैदा कर ली, परंतु प्रसूति के पांचवें दिन उसे बुखार आया और चल बसी. मैं अकेला रह गया, किसी दलदली प्रदेश में उगे-हुए अकेले पेड़ की तरह. उन बच्चों में ईवान सब से बड़ा था. सांवला और सुंदर! वह मुझसे बेहद मिलता-जुलता था. वह बुद्धिमान और आज्ञाकारी था. मेरा दूसरा बेटा उससे चार वर्ष छोटा था और अपनी मां से साम्यता रखता था. छोटा कद और गठा हुआ शरीर. उसके बालों की रंगत लगभग सफेद थी और आंखें भूरी रंगत लिये हुए थीं. वह मेरा सबसे लाडला बेटा था और उसका नाम डेनीला था. बाकी सात बच्चों में लड़कियां और अन्य छोटे बच्चे शामिल थे. मैंने ईवान की शादी कर दी और उसके हिस्से के खेत उसे दे दिये. उपयुक्त अवसर पर उसके बच्चे हो गये. डेनीला भी शादी करना चाहता था, पर उन्हीं दिनों कठिनाइयों का दौर शुरू हो गया. हमारे गांव में सोवियत के विरुद्ध आंदोलन चल पड़ा. दूसरे ही दिन ईवान भागा-भागा मेरे पास आया और बोला, "बाबा, बाबा! चलो हम सुर्ख क्रांतिकारियों से जा मिलें. बाबा! हमें ऐसा ही करना पड़ेगा. यह समय का तकाजा है. सही न्याय पर अधारित एक उचित सरकार हमारी उमंगों और आकांक्षाओं की एकमात्र पुकार है. हमें उस पुकार का स्वागत करना चाहिए!"

डेनीला ने भी बेहद आग्रह किया. वे दोनों काफी देर तक मेरे पीछे पड़े रहे. अंततः मैंने अपना निश्चय उन्हें सुना दिया, "तुम लोग जा सकते हो. मैं तुम्हारी राह में बाधक होने का प्रयत्न नहीं करूंगा, पर मैं स्वयं कहीं नहीं जाऊंगा, क्योंकि तुम्हारे अतिरिक्त सात भूखे पेट हैं, जिन्हें भरना मेरा कर्त्तव्य है!"

वे दोनों चले गये और हम बाकी बचे कोसाकियों को सरकार ने सेना में शामिल कर लिया. मुझे श्वेत दस्ते के साथ जोड़कर पहली पंक्ति में फर्ज-अदायगी के लिए भेज दिया गया.

विवश

• शोलोखोव

ऐसी कौन-सी मजबूरियां थीं जिनके रहते उसे अपने ही बेटों की हत्या करनी पड़ी .. .! और वह उम्रभर मौत की जिंदगी जीता रहा...! रूस की क्रांति के संदर्भ में तत्कालीन नागरिक जीवन को रेखांकित करती एक लोमहर्षक गाथा–

मैंने बचने का हर संभव प्रयत्न कर डाला, पर सब व्यर्थ. उन्होंने युद्धक्षेत्र में भेजकर ही दम लिया.

युद्ध हमारे खेतों से कुछ ही दूर ढलान पर जारी था और फिर ईस्टर के त्योहार की शाम नौ क्रांतिकारी मेरे खेत से पकड़े गये. डेनीला, मेरा प्रियतम और सबसे लाडला बेटा, मेरे जिगर का टुकड़ा बंदियों के बीच में मौजूद था. उन सबको शहर के चौक से गुजारकर तोपखाने के कमांडर के पास ले जाया गया.

मैं कंपकंपाते घुटनों से उस उत्तेजित जनसमूह के बीच घिरा खड़ा था, लेकिन मैंने किसी प्रकार भी अपनी भावनाओं और अनुभूतियों को लोगों पर प्रकट नहीं होने दिया. मैंने अपने चेहरे पर संज्ञाहीनता और बेपरवाही का बनावटी मुखौटा चढ़ा लिया और आसपास नजरें दौड़ायीं. कज्जाकी लोग आपस में खुसर-पुसर कर रहे थे और साथ ही मेरी ओर इशारे भी करते जाते थे. थोड़ी देर बाद सार्जेंट अरकाशका मेरे पास आया, "क्यों मेकीशारा, इन मरदूदों को नरक में पहुंचाने के बारे में तुम्हारा क्या विचार है?" उसने मुझसे प्रश्न किया.

"ठीक है. . .यह दुष्ट, सूअर. . .!"

"तो फिर यह संगीन लेकर वहां अहाते में आओ!" वह संगीन मेरे हवाले करते हुए मुसकराया, "और यह न भूलना कि हम तुम्हें देख रहे हैं. मेरा खयाल है कि तुम समझ गये होगे."

▣

मैं कुछ क्षण गुमसुम खड़ा सोचता रहा, "ए मेरे भगवान! क्या सचमुच मैं अपने जिगर के टुकड़ों को अपने ही हाथों से मारने जा रहा हूं!"

सहसा कमांडर के गरजने की आवाज मेरे कानों से टकरायी. मैंने आवाज की ओर देखा, बंदी बाहर लाये जा रहे थे और उनमें सबसे आगे मेरा बेटा डेनीला था.

डेनीला किसी शराबी की तरह झूमता हुआ गलियारे से निकला और मुझे देखते ही अपनी बांहें फैला दीं. उसने मुसकराने का प्रयत्न किया. उसकी आंखें खून में नहायी हुई थीं. उसी क्षण मुझे खयाल आया कि यदि मैंने उसे न मारा, तो कज्जाक मुझे मार डालेंगे और मेरे छोटे-छोटे मासूम बच्चे अनाथ और असहाय हो जायेंगे. डेनीला मेरे निकट पहुंच चुका था.

"बाबा! मेरे अच्छे बाबा! दया! ईश्वर के लिए दया!" वह बुरी तरह घिघियाया! उसकी आंखों से आंसू, रेखा के रूप में बहकर उसके खून भरे चेहरे को धोने लगे.

मेरा हाथ उठ चुका था. मैं एक क्षण के लिए आतंक से भरकर रह गया, मेरी पकड़ संगीन पर दृढ़ हो चुकी थी. दूसरे ही क्षण मैंने राइफल का दस्ता पूरी शक्ति से उसकी कनपटी पर मारा. वह हृदयविदारक आवाज में चीखा, और दूसरे प्रहार से बचने के लिए अपने चेहरे को हथेलियों से ढकने का प्रयास करता हुआ दूर जा गिरा.

कज्जाक लोगों ने जोरदार कहकहे और आवेशपूर्ण नारे भी लगाये, "इसे कुचल डालो मेकीशारा? तुम अपने बेटे से रिआयत क्यों कर रहे हो?" डेनीला अहाते में गिरा हुआ तड़प रहा था. अंततः सार्जेंट ने आगे बढ़कर संगीन उसके गले के आरपार कर दी. उसके गले से 'खर्र-खर्र' की आवाज निकल रही थी. डेनीला के संदर्भ में मेरे कारनामे के बदले मुझे उन्नति देकर सीनियर सार्जेंट बना दिया गया.

डान का पानी बह रहा था और बहता रहेगा, पर आज भी कभी-कभी रात की भयानक नीरवता में उस बहते हुए पानी से मुझे वैसी ही खरखराहट की आवाज आती लगती है, जैसे डेनीला के गले से अंतिम क्षणों में निकल रही थी. मैं जानता हूं कि यह मेरा अंत:करण है, जो मेरा पीछा कर रहा है.

▣

वसंत ऋतु तक उन्होंने मुझे क्रांतिकारियों से लड़ने के लिए युद्ध क्षेत्र पर रखा. उसके बाद जनरल सक्रेतेयोफ ने हमारी कमांड संभाल ली और हमने उसके नेतृत्व में डान के उस पार सारातोफ के स्थान तक क्रांतिकारियों का पीछा किया. मैं बाल-बच्चों वाला आदमी था, पर क्योंकि मेरे बच्चे बोलशेविक थे, अतः मुझे इन कर्त्तव्यों को पूरा करने के बदले कोई धनराशि नहीं दी जाती थी. हम निरंतर आगे बढ़ते हुए कुछ ही दिनों में बालाशोफ पहुंच गये. उस समय तक मुझे अपने बड़े बेटे ईवान के बारे में कुछ भी पता न था कि वह कहां है और किस अवस्था में है, पर भगवान सत्यनाश करे इन कज्जाकियों का कि उन्होंने किसी प्रकार इस बात का सुराग लगा लिया कि वह क्रांतिकारियों को छोड़कर छत्तीसवें तोपखाने में शामिल हो गया है.

कुछ दिनों के बाद हमने एक महत्त्वपूर्ण गांव पर अधिकार कर लिया. दुर्भाग्यवश छत्तीसवां तोपखाना वहीं मौजूद था. कोसाक के जो लोग सेना में थे, उन्होंने अंत में ईवान को ढूंढ निकाला और उसे रस्सियों से जकड़कर तोपखाने के कमांडर के पास ले आये. उन्होंने ईवान को मार-मारकर अधमरा कर दिया.

कमांडर ने एक कागज मेरे हवाले किया और मुझसे नजरें मिलाये बिना ही बोला, "मेकीशारा! यह आदेशपत्र तुम्हारे लिए है. अपने बेटे को रेजीमेंट हैडक्वार्टर ले जाओ. तुम्हारी देखरेख में न वह केवल सुरक्षित रहेगा, अपितु अपने पिता की हिरासत से फरार होने का प्रयत्न भी नहीं करेगा!"

"बंदी को मेरे हवाले कर दो. मुझे इस बंदी को हैडक्वार्टर पहुंचाने के आदेश मिले हैं." मैंने वहां मौजूद गार्ड से कहा.

▣ मिखाइल अलेक्सेंद्रोविच शोलोखोव
जन्म : 24 मई, 1905
नोबेल पुरस्कार : 16 अक्तूबर, 1965
'डान फ्लोज होम टु द सी' के प्रकाशन के बाद इनकी गणना यूरोप के प्रथम श्रेणी के लेखकों में होने लगी. पुरस्कार मिलने पर, "सुबह मैंने अपनी किताब लिखी, मध्याह्न में पुरस्कार मिला और शाम को मैंने दो कलहंस मारे."

कज्जाक लोग कौन थे?

▣ मिखाइल शोलोखोव

"मैंने यह उपन्यास (एंड क्वाइट फ्लोज द डॉन) सन 1925 ई. में लिखना शुरू किया था. आरंभ में मुझे इसके इतना विस्तृत होने का आभास नहीं था. . .मैंने क्रांति के समय कज्जाक लोगों ने जो काम किया था, उसका वर्णन आरंभ किया था. परंतु लगभग सौ पृष्ठ लिखने के बाद यह आभास होने लगा कि यह ठीक नहीं है. पाठक यह प्रश्न अवश्य पूछेगा कि कज्जाक लोगों ने क्रांति को दबाने में सहायता क्यों दी थी? ये कज्जाक लोग कौन थे? और डॉन कज्जाक का क्षेत्र कौन-सा था? मेरे दिमाग में यह शक पैदा हुआ कि क्या यह क्षेत्र पाठकों के लिए अपरिचित नहीं है?

". . .मैंने पहला विचार छोड़ दिया और इसे और अधिक विस्तार से लिखना शुरू किया. कज्जाक-जीवन के ज्ञान ने मुझे बहुत सहायता दी. मैंने 'एंड क्वाइट फ्लोज द डॉन' को इसके वर्तमान रूप में 1926 के अंत में फिर से लिखना शुरू कर दिया." □

● एंड क्वाइट फ्लोज द डॉन से

"ले जाओ! हमें इसके हैडक्वार्टर जाने का बिलकुल दुख नहीं!" गार्ड ने रूखे स्वर में उत्तर दिया.

ईवान ने अपना कोट कंधे पर डाल लिया और हाथ में पकड़ी हुई टोपी को भीतरी आवेश के कारण बेतहाशा मरोड़ने लगा. फिर उसे एक ओर उछाल दिया. हम शिविर से बाहर निकल आये और धीमी गति से पहाड़ियों की ओर चलने लगे.

सहसा ईवान मेरी ओर मुड़ा और पीड़ा भरी आवाज में बोला, "बाबा! मुझे इस बात का पूरा विश्वास है कि यह लोग मुझे हैडक्वार्टर में मार डालेंगे. तुम जानबूझकर मुझे मौत के कुएं की ओर ले जा रहे हो! क्या तुम्हारा अंतःकरण तुम्हें परेशान नहीं कर रहा?"

"हां, मेरे बच्चे! मेरा अंतःकरण मुझे व्याकुल किये दे रहा है!"

"तो फिर बाबा, क्या तुम्हें मेरी इस हालत पर दया नहीं आ रही है?"

"हां, मेरे बच्चे! मुझे तुम्हारी हालत पर बेहद दया आ रही है और मेरा दिल भीतर से रो रहा है!"

"यदि सचमुच तुम्हें मुझ पर दया आ रही है तो तुम मुझे. . .मुझे. . .फरार हो जाने दो बाबा! मैं अभी मरना नहीं चाहता! अभी मैं जवान हूं. मैं जवानी की मौत मरना नहीं चाहता. यह मेरे मरने की उम्र नहीं है बाबा." इतना कहकर वह सड़क के बीच गिर पड़ा और मेरे कदमों में तीन बार झुका.

"उठो मेरे बेटे! हम इस घाटी के सिरे तक जायेंगे. उसके बाद तुम दौड़ना मैं तुम्हारे पीछे दो फायर करूंगा!"

वह उठ खड़ा हुआ और हम फिर चुपचाप चल पड़े. हम चलते हुए घाटी के सिरे तक पहुंचकर रुक गये. वह बोला, "बाबा! अब हमें एक-दूसरे को विदा कहना चाहिए!" अब अगर मैं जीवित रहा, तो मरते दम तक तुम्हारा खयाल रखूंगा और तुम कभी मेरे मुंह से कोई कठोर शब्द नहीं सुनोगे!" इतना कहकर वह मेरे गले लग गया.

"दौड़ो बेटे!" मैं केवल इतना ही कह सका.

ईवान घाटियों में तेजी से दौड़ने लगा. सहसा वह रुककर पलटा, और मेरी ओर देखकर अपना हाथ लहराकर. फिर तेजी से मुड़कर भागने लगा. मैंने उसे बीच-पच्चीस गज तक भागने का अवसर दिया. और राइफल कंधे से उतारकर घुटने पर रखी, ताकि मेरे हाथ न कांपें और घोड़ा दबा दिया.

गोली ईवान की पीठ पर लगी. वह हवा में उछला और कई गज दूर जा गिरा. फिर पेट पकड़कर उठा और गिर पड़ा. एक बार फिर पीड़ा की तीव्रता से वह दुहरा होकर उठने का प्रयत्न करते हुए मेरी ओर मुड़ा. मैं भागकर उसके निकट पहुंचा, "यह तुमने क्या. . .किया बाबा? यह. . .तुम. . .ने. . ." उसका शरीर पीड़ा से ऐंठ गया. . .और वह गिर पड़ा.

मैं उस पर झुक गया. उसकी आंखें गतिशील थीं और होठों के कोनों से खून के बुलबुले उठ रहे थे. मैंने समझा कि वह खत्म हो चुका है, पर अचानक ही वह उठ बैठा और शब्द उसके होंठों से टूट-टूट कर निकलने लगे, ". . .बाबा. . .मेरी . . .एक. . .बीवी है. . .और. . .और. . .एक बच्चा. . .भी. . . है. . .वह. . ."

उसका सिर एक ओर ढुलक गया और वह पीठ के बल ढेर हो गया. फिर उसने अपना एक हाथ जख्म पर रख दिया और खून उसकी उंगलियों की सूराखों से बहने लगा. वह पीड़ा से कराहा और निश्चल नजरों से मेरी ओर देखते हुए कुछ कहने की कोशिश करने लगा. उसके होंठ थरथराये, "बब. . . बा. . .बब. . ." उसकी जीभ ऐंठकर खामोश हो गयी.

मेरी आंखों से आंसुओं का दरिया बह निकला. मैं मर्रायी हुई आवाज में बोला, "मेरी ओर से शहीदों का मुकुट स्वीकार करो मेरे बच्चे! मेरे जिगर के टुकड़े! तुम्हारी एक बीवी है और एक बच्चा, जबकि मेरे सात बच्चे हैं और उन सभी का पालन-पोषण मेरे जिम्मे है. मैं तुम्हें फरार होने का अवसर देता, पर मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूं कि यदि ऐसा करता मेरे बच्चे, तो तुम्हारे भाई-बहन अनाथ और असहाय हो जाते."

वह कुछ देर तक उसी प्रकार पड़ा रहा और फिर खत्म हो गया. उसका हाथ अब भी मेरे हाथ में था. मैंने उसका कोट उठाया, जूते उतारे. एक रूमाल से उसका चेहरा ढंका और गांव की ओर वापस हो लिया.

मैंने इन बच्चों की खातिर इतने दुःख उठाये हैं. इतनी यातनाओं के तपते हुए मरुस्थलों से गुजरा हूं कि मेरे बाल सफेद हो गये हैं. फिर भी यह बच्चे, यहां तक कि बेटी नताशा मुझसे यह कहती है, "बाबा! मैं तुम्हारे साथ एक ही मेज पर नहीं बैठ सकती. . .तुमने मेरे दो भाइयों को इन्हीं हाथों से मार डाला है!" □

अनुवाद : सुरजीत

जिस किसी भी साहित्यकार को नोबेल पुरस्कार मिल जाता है, वह रातों-रात साहित्य जगत का सितारा होकर न सिर्फ अपनी भाषा और मुल्क में, बल्कि दुनिया के तमाम मुल्कों में मशहूर हो जाता है. भारतीय साहित्यकारों में यह सम्मान सिर्फ रवींद्रनाथ ठाकुर को ही मिल सका. अब सवाल उठता है कि—

साहित्य पर रवींद्रनाथ के बाद किसी भारतीय को नोबेल पुरस्कार क्यों नहीं?

• आयोजक

यह तो पुरस्कारों की लाचारी है!

▣ भवानीप्रसाद मिश्र

रवींद्रनाथ के बाद साहित्य के क्षेत्र में सारी भारतीय भाषाओं को देखें तो भी मेरी समझ में उनसे बड़ा कोई दूसरा साहित्यकार नहीं हुआ. वैसे रवींद्रनाथ को उनकी जिस कृति पर नोबेल पुरस्कार मिला, वह उनकी सर्वोत्कृष्ट कृति नहीं है. रवींद्रनाथ ने अंग्रेजी 'गीतांजलि' में जो गीत संग्रहीत किये हैं, वे उन्होंने अपने विभिन्न बंगला गीत संग्रहों से चुने हैं और अनुवाद करते समय इस बात का ध्यान रखा है कि भारतीय मनीषा को पूरी तरह न जाननेवाले लोग भी उन गीतों के अविकल अनुवाद को ठीक तरह से समझ सकें. इस बात को ध्यान में रखते हुए उन्होंने पाश्चात्य समझ की मर्यादाओं के विचार से मूल गीतों में कुछ परिवर्तन भी किये हैं. रवींद्रनाथ कविता के क्षेत्र में कितने बड़े थे, इसका अनुमान उनकी समूची कविताओं को पढ़कर ही लगाया जा सकता है. हिंदी में अभी उनकी सर्वोत्तम कविताओं का अनुवाद प्राप्त नहीं है. ये कविताएं प्रायः लंबी हैं और छंद, विचार तथा शैली की दृष्टि से किसी भी काल में विरल ही गिनी जायेंगी. गुण और परिमाण दोनों की दृष्टि से रवींद्रनाथ ने गद्य और पद्य दोनों में इतना अधिक लिखा है कि यदि कोई अपने हाथ से उनकी प्रतिलिपि भी करना चाहे तो कठिन हो जाये, लेकिन उनके गीतों की संख्या तीन हजार के लगभग है. उन्होंने इन गीतों की स्वर लिपि भी दी है, जो अपने आप में एक अद्भुत घटना है. मैं नहीं जानता कि भारतीय साहित्य क्या, किसी भी भाषा के साहित्य में रवींद्रनाथ के बाद आज तक उनकी जोड़ का कोई साहित्यकार उत्पन्न हुआ है अथवा नहीं. यह बात अलग है कि उनके बाद उनसे कम योग्य साहित्यकारों को भी नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ होगा, किंतु यह तो पुरस्कारों की लाचारी है कि हर वर्ष दिये ही जाते हैं. हमारे यहां दिये जाने वाले पुरस्कारों का उदाहरण भी मेरी बात समझने के लिए पर्याप्त है जैसे कि ज्ञानपीठ पुरस्कार. ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त सभी साहित्यकारों का दर्जा थोड़ा बहुत कम ज्यादा नहीं, पर्याप्त विषम है, तथापि यह दिया जाता है और दिया जाता रहेगा. □

नोबेल पुरस्कार समिति के पास साधन नहीं हैं!

▣ जैनेंद्र कुमार

रवींद्रनाथ ठाकुर को यह नोबेल पुरस्कार सीधे बंगला कृति पर नहीं मिला था. अंग्रेजी अनुवाद कुछ प्रमुख पाश्चात्य साहित्यकारों को ऐसा भाया कि रवींद्रनाथ ठाकुर का नाम एकाएक ऊपर आ गया. नोबेल पुरस्कार समिति के पास ऐसे साधन नहीं हैं कि भारत और एशिया की भाषाओं का वे अनुवाद करें या करवा सकें. मूल भाषाओं के कृतित्व का परिचय तो उन्हें हो ही नहीं पाता. इसलिए भारतीय साहित्यकारों तक नोबेल पुरस्कार पहुंचे, इसकी संभावना कम ही है. अंग्रेजी में लिखनेवाले भारतीय लेखक बाहर जाने तो जाते हैं, पर साहित्यिक दृष्टि से भारतीय साहित्य का प्रतिनिधि उन्हें माना जा सकता है, यह कहना कठिन है. रवि बाबू ने मूल अंग्रेजी में लिखा होता तो वे शायद ही नोबेल पुरस्कार से विभूषित हो पाते. स्पष्ट है कि वो या कोई भी, जो मातृभाषा में लिख सकता है, अपनायी गयी भाषा में भी उस सहजता से अभिव्यक्ति नहीं पा सकता. सांस्कृतिक तो छोड़िए, राजनीतिक क्षेत्र में भी हिंदी अभी अंतर्राष्ट्रीय मान्यता नहीं प्राप्त कर सकी. बोलनेवालों की संख्या के लिहाज से उसे यह हक है कि संयुक्त राष्ट्र संघ में मान्य भाषा के रूप में स्थान पाये, पर साहित्य की श्रेष्ठता के लिहाज से भारत की अन्यान्य भाषाएं किसी भी प्रकार से कम नहीं ठहरतीं. भारत सरकार का प्रयत्न होना चाहिए कि हिंदी वो भाषा हो जाये, जिसमें शेष सभी भारतीय भाषाओं-उपभाषाओं का उत्कृष्टतम साहित्य उपलब्ध हो. □

वे सिर्फ आदर्शवादी लेखकों को देते हैं इसलिए!

▣ हंसराज रहबर

यह नोबेल प्राइज जो है, वो साम्राज्यवादी प्रचार का साधन है. यह उन्हीं लेखकों को देते हैं, जो आदर्शवादी विचारधारा का प्रचार करते हैं. टैगोर को भी इसलिए दिया गया था, क्योंकि 'गीतांजलि' में सब रहस्यवाद है. जो साहित्य संघर्ष का हो, जनवादी हो, उस पर कोई पुरस्कार नहीं देते. भारत ही क्या, किसी औपनिवेशिक देश में, किसी भी जनवादी लेखक और स्वाधीनता संग्राम के लिए लड़नेवाले को नहीं दिया गया. चीन में किसी लेखक को नहीं दिया गया. लू शुन एक महान क्रांतिकारी लेखक था. माओ त्सेतुंग ने उसे सांस्कृतिक मोर्चे का सेनापति कहा, उसे नहीं दिया, पर चीन के बारे में लिखनेवाली पर्ल बक को दिया गया. पर्ल बक ने चीन में लड़नेवाले किसान का कहीं चित्रण नहीं किया, उनको सिर्फ अंधविश्वासी, दूसरे से पिटते हुए दिखाया है, पर लड़ते हुए नहीं. चेखव आज तक दुनिया का माना हुआ कहानीकार है, पर उसको नहीं दिया, गोर्की को नहीं दिया. यहां तक कि तालस्तोय और तुर्गनेव को भी नहीं दिया. अगर दुनिया के तीन उपन्यासकारों के नाम लिये जायें तो उनमें से ये दो जरूर आयेंगे. टैगोर को पुरस्कार ही नहीं, 'सर' का खिताब भी दिया था. यह दूसरी बात है कि बाद में उन्होंने यह खिताब छोड़ दिया था और साहित्य में भी वह समय के साथ बदले. टैगोर के बाद भारती को मिल सकता था, प्रेमचंद को भी मिल सकता था, शरत चंद्र को मिल सकता था, लेकिन वे स्वाधीनता के पक्ष में थे, इसलिए नहीं मिला. □

प्रकाशन और अनुवाद की सुविधाएं नहीं!

▣ अमृता प्रीतम

इसका कोई खास कारण मेरी समझ में तो नहीं आता. इतना ही कह सकती हूं कि शायद यह कारण हो सकता है कि अच्छे भारतीय लेखकों की रचनाएं अनुवाद की शक्ल में सामने नहीं आयीं. हिंदुस्तान में अच्छे लेखक हैं, लेकिन वे अपनी-अपनी भाषाओं में हैं. विदेशों में वहां के श्रेष्ठ साहित्य को कितनी ही भाषाओं में अनुवाद करके विश्व के समक्ष रखा जाता है, जबकि हमारे यहां ऐसा कुछ नहीं होता. व्यक्तिगत प्रयासों से किसी की कोई पुस्तक पश्चिम में प्रकाशित हुई होगी, लेकिन इक्का-दुक्का छपने से पूरी प्रतिभा तो सामने नहीं आ पाती. हमारे पास पंजाबी का श्रेष्ठ साहित्य है, परंतु प्रकाशन सुविधाएं नहीं. साधारणतः मुझे यही कारण नजर आते हैं, जिसके कारण हम नोबेल पुरस्कार नहीं पा पाते. इसके अलावा यदि कोई राजनीतिक कंसीडरेशन हो तो मैं नहीं जानती. नोबेल पुरस्कार की बात सामने न भी हो, तब भी मैं चाहती हूं कि हिंदुस्तान का श्रेष्ठ साहित्य दूसरे देशों में जाना चाहिए. इसके लिए एक व्यक्ति या एक संस्था कुछ नहीं कर सकती, इसके लिए तो सरकार की योजना हो, तभी कुछ हो सकता है. □

लाटरी का टिकट और नोबेल पुरस्कार एक बराबर हैं

▣ रमेश बक्षी

नोबेल पुरस्कार की जो समिति है, उन्होंने किसी भारतीय लेखक या कवि को इस योग्य नहीं समझा. पांच-छह साल पहले श्री सच्चिदानंद वात्स्यायन

● रमेश बक्षी

'अज्ञेय' का नाम भी खबरों में था. एक ओर तो लोग इस बात के लिए चिंतित हैं कि किसी भारतीय को यह पुरस्कार एक बार के बाद फिर क्यों नहीं मिला तो दूसरी ओर ज्यां-पॉल सार्त्र जैसे लेखक भी थे, जिन्होंने नोबेल पुरस्कार की रकम को आलू के बोरे की तरह पैर से ठुकरा दिया था. बहुत सारी बातें भारतीय ज्ञानपीठ के एक लाख रुपये के पुरस्कार के बारे में भी कही जाती हैं, जिसमें अब पचास हजार रुपये की अतिरिक्त राशि भी जुड़ गयी है. मेरी दृष्टि में नोबेल पुरस्कार एक तरह से राजनीतिक पुरस्कार है और कुछ लेखक की भाग-दौड़ से और कुछ सिफारिशों से यह पुरस्कार मिलता है. इसकी चिंता न मुझ जैसे लेखक को है, न आम जनता को, जिनके लिए लाटरी का टिकट और नोबेल पुरस्कार एक बराबर हैं. □

दूसरी बातों का भी खयाल

▣ कर्तारसिंह दुग्गल

● कर्तारसिंह दुग्गल

नोबेल पुरस्कार कोई जरूरी नहीं कि हमेशा किसी बहुत प्रमुख साहित्यकार को ही दिया जाये. पिछले दिनों इस पुरस्कार के संबंध में चर्चा छिड़ी थी. उससे यह जाहिर हुआ था कि नोबेल प्राइज के लिए (भी) कई दूसरी बातों का (भी) खयाल रखा जाता है. रवींद्रनाथ ठाकुर के बाद फिर अगर किसी भारतीय साहित्यकार को नोबेल पुरस्कार नहीं मिला तो यह हैरानी की बात नहीं है, क्योंकि रवींद्रनाथ ठाकुर के स्तर का शायद ही हमने कोई साहित्यकार इन दिनों पैदा किया हो, जो नोबेल प्राइज का हकदार हो. रवींद्रनाथ एक साहित्यकार के रूप में उस वक्त सामने आये, जब हमारा देश एक मोड़ पर खड़ा था. इस तरह का एक मोड़ मेरी नजर में कुछ समय के बाद हमारे देश में फिर आने वाला है. हो सकता है, तब कोई साहित्यकार उभरकर आये और उसे नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया जाये. □

कलापूर्ण अनुवाद की सहायता का अभाव!

▣ डॉ. नगेंद्र

● डॉ. नगेंद्र

पुरस्कार प्राप्ति के पीछे तरह-तरह के कारण तथा बहुत-सी परिस्थितियां होती हैं. रवींद्रनाथ ठाकुर के बाद बहुमखी प्रतिभा तो शायद नहीं हुई. रवींद्रनाथ को 'गीतांजलि' पर 'नोबेल पुरस्कार' मिला, पर यह उनकी श्रेष्ठ काव्य कलाकृति है, यह कहना गलत है. अन्य जिन लोगों को यह पुरस्कार मिला, वह उनसे सर्वथा योग्य थे. इसके पीछे एक कारण यह भी है कि ऐसे कलापूर्ण अनुवाद की सहायता अन्य दूसरे लेखक को नहीं मिली, लेकिन पुरस्कार किसी प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं. अब तो अपने देश में एक लाख रुपये के पुरस्कार हो गये हैं. वे भी जिन ग्रंथों तथा जिस साहित्यकार को मिल रहे हैं, निश्चित ही अधिकांश पुरस्कार प्रचार के दम पर मिल रहे हैं. किसकी कहां तक पहुंच है, यह सब चलता है. रवींद्रनाथ जैसा प्रतिभावान कवि, लेखक न हुआ हो शायद, लेकिन 'गीतांजलि' के समकक्ष अनेक कृतियां इस दौरान प्रकाशित हुई हैं. अगर उन्हें पुरस्कार नहीं मिला तो वे साहित्य की दृष्टि से हीनतर हैं, यह कहना ठीक नहीं होगा. □

यही वह पुरुष है!

▣ वर्नर फान हाइडेन्स्टाम

(नोबेल पुरस्कार समिति के सदस्य की 'गीतांजलि' पर एक टिप्पणी)

मैंने उसे (गीतांजली को) गहरी भावुकता के साथ पढ़ा. यह एक अतुल्य अनुभव था.

इसकी तुलना मैं केवल एक ताजा, साफ सोते के पानी से कर सकता हूं. इनकी रचनाओं में जो मुलायम तथा सच्ची धार्मिक भावुकता है, जो हृदय की शुद्धता है, जो अच्छाई तथा स्वाभाविक शान है, वे सब गुण मिलकर एक गहरा तथा असाधारण आत्मिक सौंदर्य प्रदान करते हैं. उनकी कविता में कोई बात वाद-विवाद करने या उथल-पुथल करने की नहीं है, कोई झूठी बात नहीं है, कोई सांसारिक या छोटी बात नहीं है, और यदि कभी भी किसी कवि के विषय में यह कहा जाये कि उसमें वे सब गुण हैं, जिनके कारण वह नोबेल पुरस्कार का अधिकारी हो जाता है तो यही वह पुरुष है. अब जब कि हम लोगों ने आखिर में उच्च कोटि का एक आदर्शवादी लेखक खोज ही निकाला है तो अब हम लोगों को उसे छोड़ना नहीं चाहिए. प्रथम बार और शायद आनेवाले अनेक वर्षों के लिए, हम लोगों को इस बात का विशेष अधिकार मिला है कि एक बड़े नाम का पता लगा लें. और अब यह काम हमें इसके पहले करना है, जबकि उसका नाम दैनिक पत्रों व पत्रिकाओं के स्तंभों में रोज ऊपर-नीचे आना शुरू हो जाये. यदि इस खोज का पूरा उपयोग करना है तो हम लोगों को देर नहीं करनी चाहिए और साल भर और एक के लिए कहकर आज यह अवसर नहीं खो देना चाहिए. □

कितना उनका अपना है!

▣ डॉ. एंडर्स आस्टलिंग

अब तक (1912) पुरस्कार केवल यूरोप के लेखकों को प्रदान किया गया था, लेकिन जब 1913 में रवींद्रनाथ ठाकुर (1861-1941) इसके विजेता हुए तो क्षितिज एकाएक बहुत ही संतोषजनक रूप से फैल गया. इस समय ठाकुर की ख्याति अंग्रेजी बोलनेवाली दुनिया में बिलकुल नयी थी, लेकिन इनका नाम एक अंग्रेज टामस स्टर्ज मूर ने लंदन में रायल सोसाइटी के सदस्य होने के नाते इस पुरस्कार के लिए प्रस्तावित किया था और कमेटी की रिपोर्ट, जिसे कि नये-नये हुए प्रधान हेरॅल्ड जार्न ने लिखा था, यह प्रकट करती है कि इनकी (ठाकुर) उम्मीदवारी से उनको एक सुखद आश्चर्य हुआ. यह सच है कि जार्न ने एक पक्षपाती प्रेक्षक की तरह व्यवहार किया और यह मत प्रकट किया कि ठाकुर की सुंदर कविता में कितना इनका अपना है और कितना हिंदू धर्म की पुरानी तथा धार्मिक रचनाओं से लिया गया है, यह कहना कठिन है. जब तक कि इन ऐतिहासिक कड़ियों की ठीक-ठीक जानकारी करने के लिए पर्याप्त समय नहीं मिल जाता, तब तक इस बात का निर्णय करना कठिन है कि ठाकुर के धार्मिक रहस्यवाद तथा उनकी कविता में कितना उनका अपना है और कितना पुराना या दूसरों का. □

('नोबेल : द मैन एंड हिज प्राइजेज' से)

नदी के किनारे लकड़ी का एक बड़ा-सा टुकड़ा नाव के मस्तूल में परिवर्तित होने के लिए पड़ा था. सहसा, बच्चों की टोली के लीडर फटिकचांद के मन में एक नये खेल की बात उभरी. तय हुआ कि सब मिलकर लकड़ी के इस विशाल टुकड़े को नदी में बहायेंगे.

कमर कसकर जब सभी इस नये खेल की तैयारी में जुटे थे, तभी फटिक का छोटा भाई माखनलाल, बड़ी संजीदगी से उसपर जा बैठा. माखनलाल के इस आचरण से बच्चों की टोली में थोड़ी उदासी-सी छा गयी. किसी ने माखन को थोड़ा-सा धकेला, पर वह टस से मस न हुआ. किसी बुजुर्ग दार्शनिक की तरह माखन चुपचाप उसी तरह बैठा रहा.

"अब पीटूंगा तुझे, उठ जा माखन!" पास आकर फटिक ने उसे फटकारा. निःशब्द, थोड़ा हिल-डुलकर माखन और जमकर बैठ गया. नेता होने के नाते, टोली के सामने अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए भाई को एक थप्पड़ लगाना फटिक का लगभग फर्ज था, पर उसकी हिम्मत नहीं हुई. फिर भी, उसने अपने हाव-भाव से यह जाहिर कर दिया कि यदि वह चाहे तो इसी वक्त माखन को सबक सिखा सकता है. बहरहाल, फटिक ने निर्णय लिया कि माखन सहित लकड़ी के उस टुकड़े को लुढ़काया जाये. माखन को लगा, उसे बैठाकर साथियों द्वारा लकड़ी का धकेला जाना गर्व की बात है, पर इस पार्थिव गौरव में खतरे की संभावना पर न तो माखन ने और न ही बच्चों ने गौर किया.

"मार जवान—है यों! शाबाश जवान—है यों! !" कमर कसकर बच्चों ने ढकेलना शुरू किया. लकड़ी का थोड़ा-सा लुढ़कना था कि माखन अपने दर्प, गांभीर्य और तत्वज्ञान समेत जमीन पर चारों खाने चित्त गिरा. इतनी जल्दी आशातीत सफलता पाकर बच्चों में खुशी की लहर-सी दौड़ गयी, पर फटिक थोड़ा विचलित-सा दिखा. तभी माखन उठकर फटिक पर झपटा और उसे अंधाधुंध पीटकर रोता हुआ घर की ओर चला गया. खेल टूट गया.

इसी बीच एक विदेशी नाव घाट पर आ भिड़ी. काली मूछें और पके केशवाले एक प्रौढ़-से व्यक्ति ने नाव से उतरकर फटिक से पूछा, "चक्रवर्ती बाबुओं का घर किधर है?" घास चबाते हुए फटिक ने कहा, "उधर, उस ओर." उसका इशारा किस ओर था, यह किसी की समझ में आ ही नहीं सकता. सज्जन ने पुनः पूछा, "किधर?"

"पता नहीं." कहकर फटिक पूर्ववत घास चबाता रहा. सज्जन ने तब किसी और का सहारा लिया और चक्रवर्ती का घर ढूंढने चल पड़े.

बच्चा जब बढ़ने लगता है तो उसकी जिंदगी में एक उम्र ऐसी आती है, जब उसे औरत स्वर्ग से उतरी किसी अप्सरा-सी लगती है और औरत की तनिक भी उपेक्षा उसे बहुत त्रास देती है. वयःसंधि की उस तपती आयु का मनोवैज्ञानिक चित्रण करती एक यादगार रचना

छुट्टी

•रवींद्रनाथ ठाकुर

"फटिक दादा, मां बुला रही है." कुछ ही क्षणों में नौकर बाघा बागड़ी हाजिर हुआ.

"मैं नहीं जाऊंगा." फटिक ने कहा. बाघा बलपूर्वक फटिक को गोद में उठाकर घर की ओर चल पड़ा. निष्फल आक्रोश के साथ फटिक हाथ-पैर उछालता रहा. फटिक को देखते ही मां अग्निमूर्ति-सी होकर बोलीं, "तूने फिर माखन को पीटा है?"

"नहीं!"

"फिर झूठ बोल रहा है?"

"माखन से पूछो, मैंने नहीं पीटा." माखन से पूछने पर उसने अपनी शिकायत दोहरायी, "हां, पीटा है." यह सुनते ही फटिक आपे से बाहर हो गया. आगे बढ़कर माखन को एक थप्पड़ रसीदकर बोला, "झूठ बोलता है?" माखन का पक्ष

लेकर मां ने फटिक की पीठ पर दो-चार धौल जमाये. फलस्वरूप फटिक ने मां को धकेल दिया. मां चिल्लायी, "आयं, तू मुझ पर हाथ उठाता है?"

"कर क्या रहे हो तुम सब?" तभी उसी प्रौढ़ ने घर में कदम रखा. उन्हें देखकर विस्मय और खुशी से फटिक की मां अभिभूत-सी, साष्टांग प्रणाम करती हुई बोली, "दादा, तुम कब आये?"

"काफी दिन हुए." दादा काम से पश्चिम की ओर गये थे. इस बीच फटिक की मां दो बच्चों की मां बन गयीं, बच्चे बड़े हो गये, पति स्वर्ग सिधार गये, पर दादा के दर्शन नहीं हुए. आज न जाने कितने वर्षों बाद विश्वंभर बाबू अपनी बहन को देखने आये हैं. कुछ दिन हंसी-खुशी में बीत गये. लौटने के दो-एक दिन पहले विश्वंभर बाबू ने बहन से बच्चों की लिखाई-पढ़ाई तथा उनके मानसिक विकास के बारे में जानना चाहा. उन्हें बताया गया कि माखन जितना शांत, सुशील और विद्यानुरागी है, फटिक उतना ही उद्दंड, हठी और पठन-पाठन से जी चुरानेवाला है. बहन की शिकायत थी, "फटिक दिनभर मेरी जान खाता रहता है."

सब कुछ सुनकर विश्वंभर बाबू का प्रस्ताव था कि वे फटिक को कलकत्ता ले जायेंगे और वहीं तालीम देंगे. असहाय विधवा ने इस प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर लिया. फटिक से उन्होंने पूछा, "फटिक, मामा के साथ कलकत्ता जायेगा?" खुशी से झूमता हुआ फटिक बोला, "जाऊंगा."

फटिक की मां हमेशा आशंकित-सी रहती. न जाने कब फटिक माखन को नदी में धकेल दे अथवा उसका सिर ही फोड़ दे. अतः फटिक को दादा के साथ भेजने में आपत्ति का कोई प्रश्न ही न था. तथापि न जाने क्यों पुत्र की सहर्ष स्वीकृति से मां थोड़ा अप्रसन्न हुई. 'कब जाऊंगा—कब जाऊंगा' रटकर फटिक ने मामा को परेशान करना शुरू कर दिया.

कलकत्ता पहुंचकर मामी से फटिक का परिचय हुआ. परिवार में इस अनावश्यक वृद्धि से मामी प्रसन्न हुई थीं, ऐसा नहीं कहा जा सकता. तीन बच्चों को लेकर मामी ने अपने ढंग से अपनी गृहस्थी बसा ली थी. इस व्यवस्थित परिवेश में सहसा एक तेरह वर्षीय गंवई, अपरिचित और अशिक्षित बच्चे को छोड़ देने से हड़बोंग मचने की संभावना थी. इतनी उम्र में भी विश्वंभर ने कुछ भी नहीं सीखा था. तेरह-चौदह वर्षीय एक बालक को 'मुसीबत' की आख्या भी दी जा सकती है. उसे देखकर न तो स्नेह उमड़ता है और न ही कोई वयस्क उसका सान्निध्य चाहता है. चुनांचे वह शैशव छोड़ चुका होता है, अतः उसके मुख से निकली तुतली बोली को ढोंग कहा जाता है. अगर वह परिपक्व बातें करे तो उसे मूर्ख कहा जाता है. उसके शैशव का लालित्य और कंठ की मिठास जाती रहती है. दर्शक इस परिवर्तन से खुश नहीं होते. शैशव अथवा यौवन की अनेक खामियां माफ की जा सकती हैं, पर वयःसंधि के इस काल में छोटी-मोटी गलतियां भी असहनीय-सी लगती हैं. वैसे वह बालक यह समझता है कि दुनिया में वह कहीं भी फिट नहीं हो पा रहा है. तभी अपने अस्तित्व के लिए वह लज्जित और क्षमाप्रार्थी-सा रहता है. यद्यपि यही वह आयु है, जब थोड़ा-सा अधिक स्नेह पाने के लिए मन आतुर रहता है. इस समय किसी सहृदय व्यक्ति का अगर उसे साहचर्य मिले तो वह उसके प्रति समर्पित-सा रहता है.

इन हालात में मातृक्रोड़ के अलावा और कोई भी स्थान बच्चे के लिए नरक समान है. चारों ओर स्नेह-विहीन विराग कांटे की तरह बिंधता रहता है. इस उम्र में नारी जाति स्वर्ग से उतरी किसी अप्सरा की तरह लगती है. अतः उनकी ओर से आयी उपेक्षा बहुत दुखदायी होती है. तभी फटिक को लगता है कि मामी की स्नेहहीन आंखों में वह किसी दुराग्रह की तरह छाया रहता है. कभी-कभार मामी अगर उसे कोई काम सौंपती तो फटिक खुशी-खुशी जरूरत से ज्यादा काम कर देता. अंततः उसके उत्साह पर तुषारापात करती हुई मामी कहती, "बस-बस, बहुत हो चुका. अब तुम अपना काम करो. पढ़ने बैठो." उसकी सामर्थ्य पर मामी की ऐसी उपेक्षा उसे व्यथित करती. घर में ऐसा अनादर वह चुपचाप सहता जाता. साथ ही कलकत्ते की सघन आबादी में जैसे फटिक की सांसें घुटतीं. चार दीवारों में घिरकर उसे निरंतर अपना गांव याद आता.

एक विशाल पतंग लेकर दिगंत तक विस्तृत मैदान में दौड़ते रहना, स्वरचित धुन में गीत गाते हुए नदी-तीर पर यूं ही भटकते रहना, जब-तब नदी में डुबकी लगा लेना और तैरना फटिक को याद आते. याद आती, गांव में अपने दोस्तों की वह उपद्रवी टोली. वह अत्याचारिणी, अविचारिणी मां भी हमेशा याद आती. उस शंकित, लज्जित, शीर्ण और असुंदर बालक का हृदय किसी मातृहीन बालक की तरह ही हमेशा मां के लिए रोता.

स्कूल में, जहां वह पढ़ता था, उस जैसा इतना निर्बोध बालक और दूसरा न था. कुछ पूछने पर वह फटी-फटी आंखों से चारों ओर देखता रहता. शिक्षक जब उसे पीटते तो किसी भारवाही गधे की तरह वह चुपचाप मार सहता रहता. खेलने की छुट्टी के समय वह खिड़की के पास आ खड़ा होता और दूर, मकानों की छतों को निहारता. उन छतों पर खेलता हुआ जब कोई बच्चा दिख जाता तो फटिक बेचैन हो उठता. एक दिन बहुत साहस जुटाकर वह मामा के पास आकर बोला, "मामा, मैं मां के पास जाऊंगा." मामा बोले, "स्कूल की छुट्टियां हों, तब जाना."

स्कूल में एक दिन फटिक से एक किताब खो गयी. यूं ही लिखना-पढ़ना हो नहीं पा रहा था. किताब खो जाने से फटिक असहाय-सा हो उठा. शिक्षक प्रतिदिन उसे पीटते, अपमान करते. स्कूल में उसकी हालत ऐसी हुई कि उसके ममेरे भाई

रवींद्रनाथ ठाकुर : 6 मई 1861 में कलकत्ता में जन्म. 1913 में साहित्य पर नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाले एकमात्र भारतीय और प्रथम एशियाई लेखक. कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक-सब पर समान अधिकार. विश्व भारती विश्वविद्यालय के संस्थापक.

उसके साथ उसके रिश्ते को भी नकारने लगे. फटिक के अपमान से उन्हें मजा आता. एक दिन जब यह सब सहा नहीं गया तो फटिक ने मामी से कहा, "मुझसे किताब खो गयी है."

होंठों पर बंकिम विरक्ति लाकर मामी बोलीं, "अच्छा हुआ. मैं तुम्हें महीने में पांच बार किताब खरीदकर नहीं दे सकती?" फटिक से और कुछ न सुना गया. वह इस घर के पैसे बरबाद कर रहा था. यह सब याद आते ही अपनी मां याद आयी. उसकी आंखें भर आयीं. अपनी दीनता और हीनता—दोनों अनुभूतियों ने उसे जैसे मिट्टी में मिला दिया. स्कूल से लौटकर उसी रात उसका सिर दुखने लगा, बदन में सिहरन भी महसूस हुई. वह समझ गया कि बुखार आ रहा है. मामी इस बुखार से अत्यंत रुष्ट होंगी. इस अनर्थक उपद्रव से परिवार की शांति नष्ट होगी. बुखार होने पर अपनी मां के अलावा किसी और से सेवा स्वीकार करने की बात उस निर्बोध, अकर्मण्य बालक को लज्जाजनक लगी.

■

अगली सुबह फटिक वहां दिखा नहीं. पड़ोसियों के घर पर भी वह न मिला. उस रात मूसलाधार बारिश होती रही. फटिक को ढूंढते-ढूंढते लोग भीग गये, पर वह न मिला. हारकर विश्वंभर बाबू ने पुलिस को सूचित किया. दिन बीते, शाम को एक गाड़ी आकर उनके घर के सामने आ रुकी. बारिश तब भी थमी नहीं थी. सड़क पर घुटने तक पानी जमा था. पुलिस के दो आदमी फटिक को सहारा देकर विश्वंभर बाबू के सामने ले आये. फटिक का सारा शरीर भीगा था. बदन कीचड़ से सना था. बदन थर-थर कांप रहा था. विश्वंभर बाबू ने फटिक को गोद में उठाया और उसे अंदर ले आये. उसे देखते ही मामी बोली, "दूसरे के बच्चे को लेकर यह क्या मुसीबत खड़ी की है तुमने. इसे इसके घर भेज दो." फटिक के लिए विश्वंभर बाबू दिनभर परेशान रहे.

"मैं मां के पास जा रहा था. ये मुझे लौटा लाये." फटिक रो उठा. बुखार बढ़ता गया. रातभर फटिक आयं-बायं बकता रहा. विश्वंभर बाबू चिकित्सक ले आये. पलभर के लिए फटिक अपनी लाल-लाल आंखें खोलकर छत की ओर देखकर बोला, "मामा, मेरी छुट्टियां शुरू हो गयी हैं?"

विश्वंभर बाबू ने रूमाल से अपनी आंखें पोंछकर फटिक का शीर्ण-तप्त हाथ अपने हाथों में ले लिया. उनसे कुछ न कहा गया. बेहोशप्राय फटिक बुदबुदाता रहा, "मां, मुझे मत मारो मां, सच कह रहा हूं, मेरा कोई दोष नहीं."

अगले दिन कुछ क्षण के लिए उसे होश आया. न जाने किसे देखने की आस लिये उसने अपनी आंखें खोलीं. फिर निराश होकर करवट बदलकर, दीवार की ओर मुंह फेरकर लेट गया. विश्वंभर बाबू उसके मन की बात समझ गये. फटिक के कान के पास मुंह ले जाकर बोले, "फटिक, तुम्हारी मां को मैंने बुलवा भेजा है." अगला दिन भी इसी तरह बीत गया. डॉक्टर ने कह दिया कि फटिक की हालत चिंताजनक है. रोग शैया के पास बैठकर विश्वंभर बाबू प्रतिक्षण फटिक की मां का इंतजार करने लगे.

रवींद्रनाथ ठाकुर का पहला प्यार

प्रथम दृष्टि में ही, धीर-गंभीर स्वभाव के रवींद्रनाथ को वह चंचला तरुणी भा गयी थी. घर के लोग प्यार से उसे अन्नपूर्णा न कहकर 'अना' कहते थे, पर उसे वह नाम रुचता न था, सो एक दिन अपने मन की बात उसने रवींद्रनाथ से कह ही डाली, "आप ही मुझे कोई अच्छा-सा नाम दे दीजिए न!" और प्यार में रवींद्रनाथ ने उसे नया नाम दिया—नलिनी.

दोनों के भीतर एक-दूसरे के प्रति उमड़ आये प्रेमांकुर जब पूरे प्रभाव में आये तो नलिनी ने एक और अभिलाषा व्यक्त करते हुए कहा, "आप मुझ पर कुछ लिखिए न!" और रवींद्रनाथ की लेखनी ने उनके मन की थाह पकड़ते हुए निम्न प्रेम-कविता को जन्म दिया.

सुन नलिनी, खोलो गो आंखि
घूम रखनों भांगिल ना कि.
देख, तोमार दुयार-धारे
सीख ऐसे-छे, तोमार रवि.
सुनि प्रभातेर गाथा मोर
देख भेंगे छे घुमेर मोर,
जगत उठे छे नयन मलिया नूतन जीवन लाभ
तबे तुमिकी सजनी जागिबे नाको
आमि जे तोमार कवि.

तब नलिनी को क्या पता था कि यही रवींद्रनाथ एक दिन गुरुदेव बनेंगे और उसके साथ हुआ उनके जीवन का पहला प्यार जीवन-भर उनके भीतर बसा रहेगा! □

■ प्रस्तुति : महेश

कलकत्ता आते वक्त फटिक ने कुछ रास्ता जहाज से तय किया था. जहाज के खलासी गीत गाकर पानी नापते हुए जहाज का संचालन करते. बेहोश-सा फटिक बीच-बीच में आंखें खोलकर उन्हीं खलासियों के गीत के टुकड़ों की नकल करता. लगता, फटिक घर लौटने की तैयारी में किसी विशाल दरिया को लांघने की तैयारी कर रहा है.

इन्हीं हालात में फटिक की मां आंधी की तरह आयीं. आते ही वे बदहवास-सी रोने लगीं. विश्वंभर ने उन्हें किसी तरह शांत किया. फिर भी, वे शैया पर कटे पेड़ की तरह गिर पड़ीं और पुकार उठीं, "फटिक, मेरे राजा बेटे!"

एक सहज-सा स्वर फटिक के मुंह से निकला, "ऊं?" मां ने पुनः पुकारा, "बेटा फटिक, मेरे फटिक बेटे!" धीरे, बहुत धीरे फटिक ने करवट बदली. उसने किसी की ओर नहीं देखा. उसकी स्वप्नाच्छन्न-ज्वरग्रस्त दृष्टि में पीछे छूट गयी नदी थी, गांव था, अपना घर भी अंकित था. करवट बदलकर धीमी कांपती-सी शेष होती हुई आवाज में उसने कहा, "मां, अब मेरी छुट्टियां आ गयी हैं मां, अब मैं अपने घर जा रहा हूं मां!" □

● अनुवाद : शिखा सिन्हा

वह सुनहरा दिन कब आयेगा?

■ जेसला मिलोज

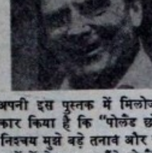

नोबेल पुरस्कार पाने के बाद पोलैंड से निष्कासित कवि-कथाकार जेसला मिलोज जब हाल ही में वापस अपने देश पोलैंड गये तो लोगों ने उन्हें सिर पर उठा लिया. उनकी पुस्तकों की डेढ़ लाख से अधिक प्रतियां हाथों-हाथ बिक गयीं. रेडियो, टेलीविजन और समाचारपत्रों ने उन्हें अपार उत्साह से अपनाया, पर इन प्रचार-माध्यमों के सामने अपने को अभिदर्शित करते समय वे तटस्थ और उदासीन-से थे.

लेकिन, स्वभाव से तटस्थ और उदासीन रहनेवाले मिलोज उस समय द्रवित हो उठे, जब उन्होंने 'सोलिडेरिटी' द्वारा अपने सम्मान में सड़क पर लगायी गयी एक ध्वजा पर यह लिखा देखा—'लोग अपने कवि को शक्ति देंगे.' उन्होंने अपने सम्मान में आयोजित एक सार्वजनिक सभा में कहा, "मेरी कविता आज धन्य हुई, क्योंकि उसे उन लोगों ने अपनाया है, जिनके लिए मैं लिखता आया हूं. जब मुझे मालूम पड़ा कि 'सोलिडेरिटी' के नेता वालेसा मेरी कविताओं को बड़े चाव से पढ़ते हैं तो मैं गद्गद् हो गया."

१९८० का साहित्य का नोबेल पुरस्कार पानेवाले निर्वासित पोलिश साहित्यकार मिलोज स्वतंत्र पोलैंड में झोंपड़ी में एक किसान सा जीवन बिताने को तैयार हैं.

'कैप्टिव माइंड' (बंदी मानस) में मिलोज ने लिखा है: "बीते दिनों में बहुत अपराध हुए हैं. 1940-41 में लाखों पोलैंडवासियों को, जिनमें मैं भी था, निर्वासित होने को बाध्य होना पड़ा. न जाने कितनों को गोली से मार कर ठंडा कर दिया गया और न जाने कितनों को आर्कटिक महासागर में डुबा दिया गया. मैं इन अपराधों को, जो हो रहे हैं, और संभवतः अब भी होते रहेंगे, लेकर बहुत चिंतित हूं, लेकिन हमें क्षमा करना सीखना चाहिए, उस अपराध को भी, जो ज्योतिर्मय मानव के नाम पर किये जा रहे हैं."

अपनी इस पुस्तक में मिलोज ने स्वीकार किया है कि "पोलैंड छोड़ने का निश्चय मुझे बड़े तनाव और कष्ट के क्षणों में लेना पड़ा. मैंने पोलैंड में 1951 में जो कुछ देखा, वह इतना भयानक और कुरूप था कि उससे पलायन करना ही मुझे उस समय ठीक लगा. यदि मैं ऐसा न करता तो शायद उन लोगों की तरह, जो वहां रह गये थे, विकुंचित, विकृत और प्रभावहीन हो जाता और कम्युनिज्म के 'नये मत' की शर्तों को मान लेता. मैं यह सब कुछ कर सकता था, लेकिन न कर सका. अपनी पीढ़ी के बहुत से लोगों के समान अपने सोचने के ढंग को नहीं बदल सका. यदि कर सकता तो वार्सा में आराम से रहकर सोलहवीं सदी के इंग्लैंड का मार्क्सवादी अध्ययन या किसी विश्वविद्यालय में अध्यापन करता और बीच-बीच में क्रांति, क्रांतिकारियों और क्रांति के जन्मदाताओं के प्रति अपनी निष्ठा और सराहना व्यक्त करनेवाली रचनाएं प्रकाशित करवाना भी न भूलता. अपने आरामदेह घर में बाख का संगीत सुनते हुए और फ्लावेयर या स्विफ्ट का साहित्य पढ़ कर गुजारता.

1953 में जब वे पेरिस में थे और उनके पास कोई काम नहीं था, उन्होंने 'द सीजर ऑफ पावर' नामक एक राजनैतिक नाटक का सृजन कर डाला. "मैं पोलिश भाषा में सुबह एक अध्याय लिखता था और शाम को मेरा एक मित्र फ्रेंच में उसका अनुवाद कर डालता था." इस उपन्यास ने जहां एक ओर उनकी तात्कालिक आर्थिक आवश्यकता की पूर्ति की, वहां फ्रांस का प्रतिष्ठित साहित्यिक पुरस्कार भी पाया, लेकिन जब फ्रांस के पत्रों और प्रकाशकों ने ऊंची रकम देकर उनसे ऐसी ही कुछ और रचनाएं लिखवानी चाहीं तो उन्होंने साफ मना कर दिया.

"और जब मेरा मन हुआ तो विरोधी दिशा में बहने के उद्देश्य से मैंने बैठकर 'इस्सा वैली' नामक आत्मकथात्मक उपन्यास लिखना आरंभ कर दिया. यह उपन्यास एक विशिष्ट प्रकार का मनोरंजन पाने के इरादे से खरीदकर पढ़नेवाले पाठकों को ध्यान में रखकर नहीं, बल्कि निर्धन पोलिश को ध्यान में रखकर लिखा गया था, जो पुस्तकालयों से उधार लेकर ही पुस्तकें पढ़ते हैं. इस उपन्यास के लेखन से मुझे भी बहुत लाभ हुआ, क्योंकि उसने मेरे अति अशांत मन पर एक शामक की भांति काम किया और मैं एक बार उपन्यासकार से कवि बन गया. उपन्यास लिखने के लिए आदमी को थोड़ा विचारक होना भी जरूरी है, लेकिन कविता का विचार से कोई लेना देना नहीं है."

विएना के निकट एक छोटे से कस्बे में जन्मे जेसला मिलोज के पिता एक इंजीनियर थे. उनके माता-पिता दोनों हिम्मती और जोखिम उठाने के शौकीन व्यक्ति थे. जेसला मिलोज एक बार रेडियो में नौकरी करने लगे, मगर अपने क्रांतिकारी विचारों के कारण उन्हें वह नौकरी छोड़नी पड़ी और इन्हीं विचारों के कारण अंततः उन्हें पोलैंड भी छोड़ना पड़ा. आजकल वे अमरीका में रहते हैं और एक कॉलेज में पोलिश साहित्य के प्राध्यापक हैं.

अमरीका के प्रति उनकी भावनाएं बड़ी मिश्रित हैं. "अमरीका विश्व भर के निर्वासितों का देश है, इसलिए मुझे यहां खपने में कोई कठिनाई नहीं हुई. अमरीका में मुझे सब सुख हैं, लेकिन मातृभूमि में रहने का सुख नहीं है. मैं स्वतंत्र पोलैंड में एक झोंपड़ी में, एक साधारण कृषक-सा जीवन बिताने को सहर्ष तैयार हूं. मालूम नहीं, वह सुनहरा दिन कब आयेगा?" □

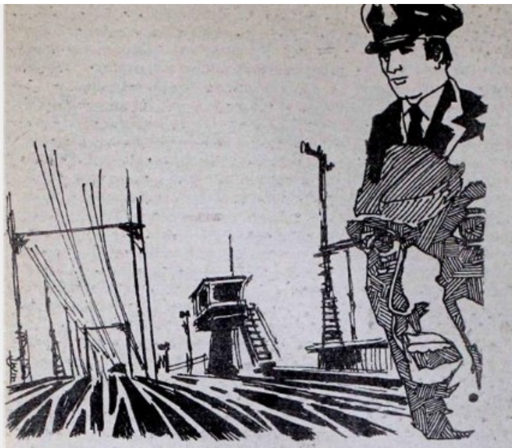

कहां जाना है?

पर्ल एस. बक

अमरीकी कहानी

'पीकिंग की पुरानी दीवारें वर्तमान प्रगतिशील दौर में गिरा दी जायें या स्मारकों के रूप में संभालकर रखी जायें?'. . .इस विषय पर लेख लिखकर, अफसर बनने का ख्वाब देखने वाले युवक की अंतर्व्यथा कि जब किसी को अपनी योग्यता के अनुसार काम नहीं मिलता तो उस पर क्या बीतती है! और वह क्या-क्या कर गुजरता है!

युवान को नौकरी की तलाश थी. वह कई महीने शंघाई की सड़कों पर मारा-मारा फिरता रहा, मगर कोई अच्छी नौकरी नहीं मिली. कुछ छोटी-मोटी नौकरियां, जो उसे मिल सकती थीं, उसने खुद ही ठुकरा दीं. इसलिए अचानक वह रेलवे स्टेशन पर गेट-कीपर का काम करने लगा तो सबको हैरानी ही हुई.

कालेज की पढ़ाई खत्म होते ही वह अपने बारे में कई-कई भविष्यवाणियां करता हुआ, एक आला अफसर बनने के ख्वाब देखने लगा था. उसे भरोसा था कि जल्द ही वह अफसर न भी बना तो किसी अफसर का पी. ए. तो जरूर हो जायेगा, क्योंकि अंग्रेजी पर उसे महारत हासिल थी. अंग्रेजी में ही उसने कई लेख भी लिखे थे. उसके लेखों का विषय था—'पीकिंग की पुरानी दीवारें वर्तमान प्रगतिशील दौर में गिरा दी जायें या स्मारकों के रूप में संभालकर रखी जायें?' उसने बड़े पुष्ट तर्कों से सिद्ध कर दिया था कि पुरानी दीवारों को गिरा देना ही बेहतर होगा. वह और उसके साथी नये दौर और उसके नवीनतम विकास में यकीन रखते थे. फिर भी स्नातक होने के बाद उसे जो नौकरी मिल सकती थी, उसका आधार उसका अंग्रेजी में निपुण होना ही था.

युवान के पिता एक बस्ती में मामूली-सी दूकान चलाते थे. वह हालांकि विदेशी वस्तुएं जैसे कि पुराने साइकिल वगैरह भी बेचते थे, किंतु आमदन इतनी कम थी कि वह युवान के लिए चाहकर भी कुछ नहीं कर सकते थे. उनका बहुत-सा समय तो अफसरों को मिलने-जुलने में ही खप जाता था. इसके लिए उन्होंने परिचय-कार्ड भी छपवा रखे थे, जिनसे यह जाहिर होता था कि वह हर प्रकार की मशीनरी का व्यापार करते हैं, जबकि मशीनों के नाम पर उनकी दूकान दरअसल, कबाड़ी की दूकान ही अधिक लगती थी. इसलिए वह भी चाहते थे कि युवान अब जल्द से जल्द किसी काम-धंधे में लग जाये.

एक दिन वह अपने मिलने-जुलने वाले अफसरों में से एक का नाम अपनी डायरी में देखकर युवान की नौकरी की खातिर उससे मिलने जा पहुंचे, जबकि वह तो न जाने कब का शंघाई से तबदील होकर किसी दूसरी जगह जा चुका था.

युवान को पिता की इस हरकत के बारे में ज्ञात हुआ तो वह पिता के अज्ञान पर लज्जित होकर तमतमाता हुआ उनके कमरे में पहुंचकर चिल्लाने लगा... "मुझे अब तक कोई अच्छी नौकरी नहीं मिली, इसका कारण तुम ही हो. . . तुम यानी मेरा बूढ़ा और बेवकूफ बाप!". . . बार-बार ताव खाता हुआ वह कितनी ही देर उन लोगों के लिए अंट-शंट बोलता रहा, जो दिखने में तो चुस्त और समझदार लगते हैं, लेकिन असल में मूर्ख और गंवार होते हैं.

युवान यह भी जानता था कि पिता उसकी नौकरी के लिए काफी चिंतित रहते हैं. . . और सचमुच वह अपनी सामर्थ्य से कहीं ज्यादा दौड़-धूप भी कर रहे थे. उन्होंने युवान की बातों का बुरा नहीं माना. चुपचाप अपने ढंग से इस काम में लगे रहे. एक दिन वह बड़ी प्रसन्न मुद्रा में ठहाके लगाते हुए आये. वह इस कदर खुश थे कि लग रहा था मानो पागल हो जायेंगे. मगर ऐसा कुछ नहीं हुआ. वह बड़े गर्व से बोले, "युवान! आखिर मैंने तुम्हारे लिए एक सरकारी नौकरी ढूंढ ही ली."

युवान मुस्करा दिया. मगर नौकरी के बारे में सुनते ही उसकी मुस्कान जाती रही. यह नौकरी उसकी कल्पना की नौकरी के मुकाबले तुच्छ थी. उसने मुंह बिचका दिया. पिता बेचारे सकपकाये-से खड़े रह गये.

▣

दरअसल, कुछ ही दिन पहले युवान के पिता की दूकान पर एक ग्राहक आया था जो सरकारी वर्दी में था. उसे सिर से पांव तक नजर में उतारकर वृद्ध ने उससे पूछा, "आप कहां काम करते हैं?"

"रेलवे." अफसरनुमा ग्राहक दो टूक जवाब देकर अपने लिए साइकिल पसंद करने में व्यस्त हो गया. उसे वहां रखी सबसे कीमती साइकिल पसंद आयी. इस बीच वृद्ध उसे साइकिलों के बारे में बताता-बताता अपने लायक बेटे की चर्चा भी करता रहा. उसने यह भी बताया कि उसके होनहार बेटे पर एक सरकारी अफसर बनकर जनता की सेवा करने का जनून सवार है.

फिर वह अफसर साइकिल की कीमत को लेकर भाव-ताव करने लगा तो सहसा वृद्ध को न जाने क्या सूझी कि एकदम मुस्कराता हुआ बोला, "अगर आप बुरा न मानें तो एक बात कहूं?"

"कहिए."

"अगर आप मेरे बेटे को रेलवे में अच्छी-सी नौकरी दिलवा दें तो यह साइकिल मैं आपको भेंट-स्वरूप दे दूंगा."

रेलवे अफसर साइकिल के आकर्षक लाल रंग पर मुग्ध हो चुका था. वह इनकार नहीं कर सका. उसने यह पेशकश मंजूर कर ली. . . और अब उसी ने युवान की नौकरी का प्रबंध भी कर दिया था.

पिता ने युवान को समझाया, "ऐसा नहीं करते बेटा! बेकार रहने से तो बेगार भली. तुम काम करोगे, अनुभव हासिल होगा, धीरे-धीरे तरक्की करने लगोगे . . . और देखना एक दिन तुम बहुत बड़े अफसर बन जाओगे! . . . तुमने वर्दी तो देखी ही होगी इस नौकरी वाली?. . बहुत शानदार है. . . चमकदार नीली. . . जगह-जगह पर सितारे टंके हैं. . .टोपी तो शायद यूरोप की बनी हुई है. . . पहनोगे तो तुम्हें बहुत पसंद आयेगी. . . ."

युवान पहले तो हिचकिचाया, लेकिन फिर उसने हिचक तोड़ दी. . . कि चलो, जो होगा देखा जायेगा!

युवान के जीवन का नया दौर शुरू हुआ. अब उसका काम उन ग्रामीणों को संभालना था जो प्रायः तीसरे और चौथे दर्जे में यात्रा करते हैं. अब उसे शांत और स्वच्छ कमरे में बैठकर अंग्रेजी भाषा और साहित्य का अध्ययन करने की बजाय, अपढ़ ग्रामीणों को संभालने के लिए स्टेशन के गेट पर खड़ा होना पड़ता था.

उस स्टेशन से चलने वाली गाड़ी के यात्री प्रायः मूढ़ भी थे. वह सुबह-सुबह आकर ही टिकट मांगने लगते, जबकि गाड़ी दोपहर से पहले रवाना नहीं होती थी. तिस पर वे गाड़ी में सवार भी नहीं हो पाते थे, क्योंकि स्टेशन का दरवाजा वक्त से पहले बंद ही रखा जाता था.

वे आते रहते और जमघट बनाकर जमीन पर ही बैठ जाते. दरवाजा खुलते ही वे हड़बड़ाये हुए-से भेड़-बकरियों की तरह धक्का-मुक्की करते. हर किसी की कोशिश होती कि सबसे पहले गाड़ी में जा बैठे. अब युवान का एक काम यह भी था कि वह गला फाड़-फाड़कर चीखे और उनसे पूछे, "क्या तुम्हारे पास टिकट है?. . .कहां जाना है?. . .गलत गाड़ी पर बैठ जाओगे तो उलटी तरफ जा पहुंचोगे. . ."

हर रोज यही कुछ होता. धीरे-धीरे उसे अपनी इस दिनचर्या से नफरत होने लगी. वह तमाम ग्रामीणों को पहले की अपेक्षा कहीं अधिक हेठी नजर से देखने लगा. वह समझ ही न पाता कि उन उजड्ड लोगों को रेलवे के आदेशों की जानकारी किस तरह करवायी जाये ताकि वह ठीक-ठीक समझ जायें और नियमों का पालन करें.

एक बार उसने दो दिन तक मेहनत करके रेलवे के आदेश बहुत सरल और स्पष्ट भाषा में लिखकर जगह-जगह टंगवा दिये. परंतु ग्रामीण यात्री उसका एक शब्द तक नहीं पढ़ सके. युवान ने बड़े उत्साह से लोगों का ध्यान आदेशों की तरफ दिलाया तो एक चौड़े मुंह वाला युवक खेद प्रकट करते हुए बोला, "माफ करें, मेरे मां-बाप बहुत गरीब हैं इसलिए मैं कभी स्कूल नहीं गया."

इस तरह दिन बीते, सप्ताह बीते, महीने बीते और कई

▣ **पर्ल एस. बक**
जन्मः 26 जून, 1882, हिल्सबारो. 1938 की नोबेल पुरस्कार विजेता. प्रमुख कृतियां: 'ईस्ट विंडः वेस्ट विंड', 'द गुड अर्थ,' 'संस,' 'द मदर' एवं 'ए हाउस डिवाइडेड' आदि.

अलाव और चींटियां

▣ सोल्जेनित्सिन

मैंने एक गला हुआ लट्ठा, बिना यह ध्यान किये कि इस पर जीवित चींटियां हैं, जलते अलाव में फेंक दिया.

लट्ठा चटचटाने लगा, चींटियां हड़बड़ाकर निराशा से चारों तरफ दौड़ पड़ीं. वे ऊपर की ओर दौड़ीं, लेकिन लपटों से झुलस जाने के कारण छटपटाकर रह गयीं. मैंने लट्ठे को पकड़ा और उसे एक तरफ कर दिया. तब उनमें से काफी चींटियों ने स्वयं को रेत पर या चीड़ की सुइयों में सुरक्षित कर लिया.

लेकिन, यह बेहद आश्चर्य की बात थी, वे आग के पास से भागी नहीं.

वे तब तक भयाक्रांत नहीं हुईं जब तक कि वे पलटीं, उन्होंने चक्कर काटे. कोई अबूझ ताकत उन्हें बार-बार अपने परित्यक्त देश की तरफ खींचती रही. उनमें से बहुत-सी ऐसी भी थीं जो जलते लट्ठे पर चढ़ गयीं, उस पर चारों तरफ तड़फड़ायीं और उसी पर जलकर शहीद हो गयीं. □

अनुवाद : राजकुमार गौतम

साल गुजर गये. हर चीज बदल गयी, मगर उन लोगों को न बदलना था और न वे बदले. यह भी मुमकिन नहीं था कि हर रोज नये चेहरों से पाला पड़े, क्योंकि जो लोग वहां से बाहर जाते थे, वही लोग वापस भी लौटते थे और युवान को उनसे हर बार वावास्ता होना ही पड़ता था. यह सब सहते-सहते युवान उदास होता गया. अपनी जिस योग्यता और निपुणता पर उसे गर्व होता था, वही उसे बोदी लगने लगी. देश और समाज को इसकी कोई जरूरत नहीं थी. वह रोजाना भीड़ से टकराता और मुंह की खाकर रह जाता!

उसे लगने लगा कि वह लगातार पराजित होता जा रहा है. . . सिर्फ और सिर्फ एक चीखने-चिल्लाने वाली मशीन बनकर रह गया है!

वह चिड़चिड़ा होने लगा. गेट पर लोगों की भीड़ देखते ही उसके गुस्से का ठिकाना न रहता और वह उन्हें गालियां दे-देकर कोसने लगता.

मगर एक दिन क्या हुआ कि वह स्टेशन पर पहुंचा तो वहां कोई भी नहीं था, जबकि रोजाना इतनी भीड़ होती थी कि कानों पड़ी आवाज भी समझ नहीं आती थी. वह हैरान रह गया. . . गाड़ियों के रवाना होने का वक्त होने के बावजूद स्टेशन पर एक यात्री तक नहीं था. इसलिए यह सोचते हुए कि पता नहीं आज क्या होने वाला है, वह स्टेशन के गेट से टेक लगाकर खड़ा हो गया.

उसने देखा कि एक बूढ़ा किसान चला आ रहा है. उसके नंगे और छलनी पांव धूल से अटे हुए थे. रंग-बिरंगे पैबंदों से टंका उसका नीला कोट बहुत भद्दा प्रतीत हो रहा था.

इस डर से कि कहीं गाड़ी छूट न जाये, वह लगभग भागता हुआ दरवाजे पर पहुंचा. उसने बिना कुछ कहे दरवाजों को धकेलकर खोलने की कोशिश की, किंतु दरवाजा नहीं खुला, क्योंकि युवान उस पर झुककर खड़ा हुआ था.

बूढ़े किसान ने युवान को तेज निगाह से घूरा, मगर युवान उलटा उसे ही घूरता हुआ स्थिर खड़ा रहा. उसके चेहरे में उसे हजारों अन्य चेहरे दिखायी दे रहे थे. . . हर चेहरे में ऐसी ही भयानक आंखें, हर कंधे पर ऐसे ही पैबंद लगे कोट और हर जिस्म में ऐसे ही छलनी पांव! उसे लगा कि हजारों आंखें, कोट और पांव सब मिलकर उसकी हंसी उड़ा रहे हैं.

इतनी सीनाजोरी! उसकी सांस खिंच आयी. मारे गुस्से के वह पागल होने लगा. सहसा उसने होंठ भींच लिये और बूढ़े पर पिल पड़ा.

वह पशुओं की तरह बूढ़े को नोचता और पीटता रहा और. . .और फिर खुद ही रोने भी लगा.

▣

दो-तीन कर्मचारियों ने यह सब देखा तो भागे आये. उन्होंने बूढ़े को छुड़वाने की कोशिश की, किंतु युवान बेकाबू हो चुका था. उसने बूढ़े को नहीं छोड़ा और इस तरह वह उन लोगों के प्रति अपने मन में बरसों से दबी भड़ास निकालता रहा. लोगों ने उसे पकड़ा, खींचा, सब कुछ किया, मगर वह छूट-छूटकर उस बूढ़े को मारता-पीटता हुआ अनाप-शनाप बकता रहा.

ऐन इसी वक्त पर उसकी अंग्रेजी में हासिल की गयी निपुणता काम आयी, जबकि बाद में उसे अफसोस हुआ कि उसकी योग्यता काम भी आयी तो किस काम आयी! उसने एक आवाज सुनी, "देखो, वह बदमाश बेचारे बूढ़े को किस बेरहमी से पीट रहा है."

युवान एकदम संभला और उसने तनिक उछलकर बूढ़े को छोड़ते हुए पीछे मुड़कर देखा, कुछ ही कदम पर एक यूरोपी औरत खड़ी उस बूढ़े की पिटाई पर खेद प्रकट कर रही थी. युवान उसे देखता ही रह गया. बूढ़ा किसान मौका मिलते ही जान बचाकर भाग खड़ा हुआ और दस-पंद्रह मीटर दूर जाकर खड़ा हो गया. उसे समझ नहीं आया कि यह उसे किस जुर्म की सजा मिली है. फिर यह पाकर कि उसे पीटने वाला और बचाने वाले सबके सब स्तब्ध खड़े हैं, वह धीरे-धीरे दरवाजे की तरफ बढ़ने लगा.

युवान को ऐसे महसूस हुआ जैसे उसके गले में कुछ अटक गया है. तभी वह बूढ़ा उसके पास आ पहुंचा. युवान ने हाथ से अपने होंठों को साफ करके एक ठंडी सांस ली और हमेशा की तरह तनकर दरवाजे पर खड़ा हो गया. फिर एक क्षण बाद जैसे उसे कुछ याद आ गया और वह चिल्लाने लगा. . . "कहां जाना है? . . . क्या तुम्हारे पास टिकट है. . . .? इतनी जल्दी क्यों आ गये? . . . अभी बहुत देर है!. अरे-अरे, यह तुम्हारी गाड़ी नहीं. . . ." □

रूपांतर : जया रमेश

यही है वह

• पार लागरक्विस्त

स्वीडी कहानी

बरबास ने उसे अपनी आंखों से सूली पर चढ़ते देखा था. वह मर गया था. तो क्या यह कहानी झूठ थी कि वह मुर्दों में भी जान डाल देता है?

बरबास बार-बार अपने आपसे पूछ रहा था कि वह जेरुसलम में क्यों ठहर गया. विशेषकर उस समय, जब उसे यहां कुछ भी नहीं करना. वह नगर में एक स्थान से दूसरे स्थान बिना किसी काम के घूम रहा था और कोई भी काम करने की नहीं सोच पा रहा था. वह यह भी सोच रहा था कि पर्वतों पर उसकी प्रतीक्षा करनेवाले साथी चिंतित होंगे कि आखिर उसे इतनी देर क्यों हो रही है. वह क्यों रुका हुआ है, वह खुद नहीं जानता था.

उस मोटी औरत ने पहले तो सोचा कि बरबास उसकी वजह से ठहरा है, लेकिन वह शीघ्र ही इस नतीजे पर पहुंच गयी कि वह उसकी वजह से शहर में नहीं रुका. उसे यह बात कुछ बुरी लगी, लेकिन ईश्वर जानता है, यह पुरुष जाति सदैव अपनी काम और क्षुधा की वासनाएं शांत कर लेने के बाद और भी कृतघ्न हो जाती है. पता नहीं, वह क्यों बरबास को इतना अधिक प्यार करने लगी थी कि वह उसका साथ अधिक से अधिक समय के लिए चाहती थी. बरबास उसी के पास सोता था और उसे यह अच्छा लगता था. केवल खाने-पीने-कपड़े का इंतजाम कर देने भर से इतना अच्छा पुरुष मिल जाये तो इससे अच्छी और क्या बात हो सकती है! और बरबास के साथ एक बात यह भी थी कि यदि वह उसकी परवाह नहीं करता था तो किसी दूसरी औरत की भी चिंता उसे नहीं थी. उसने ऐसा कभी किया ही नहीं था. और एक हद तक वह इस बात से खुश भी थी कि बरबास उसकी बहुत अधिक परवाह नहीं करता. कुछ भी हो, फिलहाल तो दोनों का प्रेम संबंध चल ही रहा था.

लेकिन बरबास जेरुसलम में पागलों की तरह क्यों घूमता फिर रहा है—यह बात उसकी समझ में बिलकुल नहीं आ रही थी. दिन भर वह क्या करता रहता है? कम से कम वह उन व्यक्तियों में तो नहीं ही था, जो सड़कों पर आवारा की तरह चक्कर लगाते रहते हैं. वह तो उन आदमियों में से था जो सदैव सक्रिय रहते हैं और खतरों से भरे साहसिक जीवन का स्वागत करते हैं. ऐसे फालतू घूमना उसके स्वभाव के विपरीत था.

नहीं, जबसे वह सूली से बचकर लौटा है, तबसे वह सामान्य नहीं हो सका. ऐसा लगता है जैसे उसे सचमुच ही फांसी लग गयी है. कभी-कभी बरबास को ऐसा अनुभव करने में भी कठिनाई होती थी कि सचमुच उसे ही सूली पर नहीं चढ़ा दिया गया है. दोपहर में जब वे दोनों लेटते थे तो वह औरत बरबास के संबंध में बार-बार यह बात दोहराती थी कि उसे सूली पर नहीं चढ़ाया गया है. और इसके बाद वे दोनों खूब हंसते थे.

बरबास कभी-कभी उस शहीद व्यक्ति के शिष्यों के बीच भी चला जाता था. यह तो कोई नहीं कह सकता कि वह ऐसा जान-बूझकर किया करता था. दरअसल शिष्यों की संख्या इतनी अधिक थी कि वे सड़कों पर या बाजारों में अथवा इधर-उधर कहीं न कहीं झुंड के रूप में मिल ही जाते थे. यदि इस प्रकार के भक्तों से उसकी कभी भेंट हो जाती तो वह

उनके पास रुक जाता था और शहीद के बारे में पूछताछ करता. उसकी शिक्षाएं जानने की कोशिश करता, हालांकि उसकी समझ में उन शिक्षाओं का एक शब्द भी न आता था—एक दूसरे से प्रेम करो?. . .वह एक स्थान से दूसरे स्थान को जाता. रास्ते में उसे दूकानें मिलतीं. सौदागर मिलते. कारीगर मिलते, जो अपने-अपने स्थानों में बैठे-बैठे काम कर रहे होते. खोमचेवाले फेरियां लगाते हुए मिलते. इन सामान्य और अतिसाधारण लोगों में उसकी शिक्षाओं में विश्वास करनेवाले बरबास को मिल जाते. इन लोगों को बरबास व्यावसायिक रूप से प्रचार करनेवालों से कहीं अधिक चाहता था. वह हर तरह से शिक्षाओं को समझाने की कोशिश करता, लेकिन वह ठीक-ठीक ढंग से कुछ भी नहीं समझ पाता था.

कैसे अजीब थे वे लोग?

वे लोग यह भी देखते थे कि बरबास उन्हीं की तरह प्रभु में विश्वास नहीं करता—इसलिए वे उससे सतर्क भी रहते थे. कुछ लोग तो साफ-साफ अपना अविश्वास प्रकट करते हुए बरबास से यह कह भी देते थे कि वे उससे कोई संबंध नहीं रखना चाहते. बरबास को ऐसी बातें सुनने की आदत पड़ गयी थी, लेकिन इस बार उसे बहुत बुरा लगा. लोग प्रायः उसके रास्ते में आड़े न आते थे और यह प्रकट करते कि वे उससे कोई वास्ता नहीं रखना चाहते. संभवतः ऐसा उसकी शक्लसूरत की वजह से होता था—या आंख के नीचे छुरे के घाव का जो निशान उसके चेहरे पर था—उसकी वजह से ऐसा होता था—या फिर उसकी गड्ढे में धंसी आंखों की भयानकता की वजह से लोग दूर ही रहना चाहते थे. बरबास यह सब भली-भांति जानता था, लेकिन उसके बारे में लोग क्या सोचते हैं, इसकी उसे बहुत कम परवाह रहती थी.

अभी तक इस तरह की बातें सुनकर उसे किसी प्रकार का दुःख नहीं होता था, लेकिन अब स्थिति दूसरी थी.

वे लोग अपने धार्मिक विश्वासों द्वारा पारस्परिक एकता और जीवन-यापन संबंधी सामंजस्य बनाये रखते थे. वे अपने बीच किसी ऐसे व्यक्ति को न आने देते थे, जो उनके संप्रदाय से भिन्न हो. उनका अपना एक पारस्परिक भ्रातृत्व भाव था और उसके प्रसार के लिए वे प्रीतिभोजों का भी आयोजन करते रहते थे. यद्यपि उनका सिद्धांत सबको प्रेम करना सिखाता था, लेकिन यह कहना कठिन था कि वे अपने समूह से बाहर अन्य किसी को भी प्यार करते थे.

बरबास को उनके प्रीतिभोजों में भाग लेने की तनिक भी इच्छा न होती थी. उसे अपनी स्वतंत्रता में बाधा डालनेवाले विचार तक से अरुचि थी. वह अपने आपको किसी भी चीज से जरा-सा भी बांधना नहीं चाहता था. वह अपनी स्वतंत्रता का सबसे बड़ा प्रेमी था.

तब भी वह उनसे किसी न किसी प्रकार बात करने का समय निकाल ही लेता था.

कभी-कभी वह यह दिखलाने का बहाना भी करता था कि वह भी उनके संप्रदाय में दीक्षित हो जाना चाहता है, लेकिन उसकी शर्त यही रहती थी कि वह संप्रदाय में दीक्षित होने से पहले उनके धार्मिक-सिद्धांतों को समझ लेना चाहता है. यह बातें सुनकर वे प्रकटतः खुश होते, लेकिन उनका अंतर हर्षित नहीं होता था. यह बड़ी अजीब बात थी. वे अपने आपको धिक्कारते और कहते थे कि वे बरबास से आगे बढ़ने पर भी क्यों नहीं प्रसन्न होते हैं.—वे अपने संप्रदाय की संख्या में वृद्धि करनेवाले एक व्यक्ति के आगमन पर हर्षित क्यों नहीं होते—जितना उनको होना चाहिए. इसका क्या कारण हो सकता है? लेकिन बरबास इसका कारण जानता था. वह अचानक उनके बीच से उठता और तेजी से एक ओर चला जाता. उसके चेहरे के घाव का निशान गहरा लाल हो जाता था.

विश्वास! उस आदमी पर वह कैसे विश्वास कर ले, जिसे उसने अपनी आंखों से सूली पर लटका हुआ देखा है. वह शरीर, जो बहुत पहले प्राणहीन हो चुका है, जिसे अपनी आंखों से उसने मरते हुए देखा है, उसकी बातों पर वह कैसे विश्वास कर ले. यह सब कपोल कल्पना के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था. ऐसा कोई व्यक्ति नहीं था—जो मृत होकर जीवित हो उठा हो—वह चाहे उनका 'प्रभु' हो अथवा अन्य कोई. लोग कहते हैं, उन्होंने कहा था :

"इस आदमी को छोड़ दो और मुझे इसकी जगह सूली दे दो."

स्पष्ट है कि वह ईश्वर पुत्र नहीं था.

उसने अपनी शक्तियों का सर्वाधिक असाधारण ढंग से प्रयोग किया था. यह प्रयोग ऐसा नहीं था, जिसे शक्तियों का प्रयोग कहा जा सके, बल्कि ऐसा था, जिसमें अन्य व्यक्ति जैसा चाहें, वैसा सोच सकें और उसके संबंध में अपनी धारणा बना सकें. वे हस्तक्षेप करने से बराबर बचे थे, यद्यपि हुआ सब कुछ वैसा ही था, जैसा उन्होंने चाहा था. यह बात इसी से प्रकट थी कि वे बरबास के स्थान पर सूली पर चढ़ गये थे.

वे लोग कहते थे कि प्रभु ने उन लोगों के लिए अपने प्राणों का विसर्जन किया है. ऐसा हो सकता है, लेकिन बरबास के ही स्थान पर वे सूली पर चढ़े —इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता. वस्तुतः बरबास उन लोगों की अपेक्षा प्रभु के अधिक समीप था. वह प्रभु से बिलकुल दूसरी तरह से संबद्ध था, हालांकि वे लोग कहते थे कि उससे वे कोई संबंध नहीं रखना चाहते. लेकिन कोई यह भी तो कह सकता है कि उसे कष्ट भोगने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया गया. असलियत यह थी कि वही सबसे चुना हुआ व्यक्ति था. उसे छोड़ दिया गया—देवपुत्र की आज्ञा से—क्योंकि वह ऐसा ही चाहता था, यद्यपि उन लोगों को कोई संदेह नहीं हुआ.

लेकिन उसे उनके 'भ्रातृत्व' और 'प्रीतिभोजों' की जरा भी परवाह न थी. उसका अपना एक स्वतंत्र व्यक्तित्व था. वह उन लोगों की भांति दास न था. वह उन लोगों में न था जो गहरी सांसें भरते निकालते जायें और उनकी प्रार्थना करते जायें.

नहीं, वह मरना नहीं चाहता था. वह मौत को नहीं मानता था और सोचता था कि वह शायद अमर रहेगा. यही कारण है कि शायद वह सूली तक जाकर भी नहीं मरा. नहीं तो उसे छोड़ने की ही क्या आवश्यकता थी? एक क्षण के लिए यदि यह मान भी लिया जाये कि सूली पर चढ़ा वह व्यक्ति देवपुत्र ही था—तब भी उसे यह कैसे मालूम हो गया कि वह न तो मरना चाहता है और न कष्ट ही भोगना चाहता है. और इस प्रकार उसने उसके स्थान पर अपने प्राण दे दिये और सूली का कष्ट भी झेला. इतने पर वह मौत से समझौता करने के लिए तैयार न था.

हां, वह सचमुच देवपुत्र ही रहा होगा, क्योंकि उसने उसके स्थान पर अपनी जान दी थी. यह बात केवल उसी के लिए कही गयी थी.

▣

जेरुसलम की एक बड़ी सड़क से गली में जाते समय बरबास के मस्तिष्क में तेजी के साथ ऐसे विचार घूम रहे थे. कुछ ही देर पहले कुछ लोगों ने स्पष्ट शब्दों में उससे यह कहा कि वे उसे पसंद नहीं करते और न यही चाहते हैं कि बरबास उनके बीच आया-जाया करे.

बरबास ने उन लोगों से बिलकुल ही न मिलने का निश्चय कर लिया था.

लेकिन दूसरे दिन बरबास उधर से जब पुनः गुजरा तो उन्हीं लोगों ने उससे यह पूछा कि उनके धर्म की ऐसी कौन-सी बात है, जो उसकी समझ में नहीं आती. उन लोगों ने यह स्पष्ट कर दिया कि उसके अपमान के लिए वे दुखी हैं और उन्हें इसका भी खेद है कि वे लोग उसका वैसा स्वागत न कर सके, जैसा उन्हें करना चाहिए. उन्होंने इस पर भी दुख प्रकट किया कि वे अभी तक उसे वह ज्ञान नहीं दे पाये हैं, जिसके लिए वह इतना प्यासा है.

बरबास अपने कंधों को उचकाते हुए यह कहना ही चाहता था कि उसके लिए सभी कुछ रहस्यमय है और वस्तुतः अब उस रहस्य के तथ्यों को भी जानने के लिए अधिक उत्सुक नहीं है, लेकिन वह कह बैठा कि उसे मरे व्यक्ति के जीवित हो जाने की कल्पना में विश्वास नहीं है. उसकी समझ में ही नहीं आता—वह कैसे यह बात मान ले.

वे लोग कुम्हार के चाक पर बैठे मिट्टी के बर्तन बनाने के लिए उसे घुमा रहे थे. उन्होंने अपनी दृष्टि उस चाक पर से उठाकर उस पर डाली. इसके बाद उनमें जो व्यक्ति सबसे अधिक बुजुर्ग था, वह बोला, "क्या तुम ऐसे व्यक्ति से मिलना चाहोगे—जो मर गया था, लेकिन बाद में प्रभु ने उसे जीवित कर दिया? यदि तुम चाहो तो उस व्यक्ति से मिलाया जा सकता है, लेकिन यह मुलाकात संध्या के बाद हो सकेगी. इसलिए अपना काम खत्म करने के बाद ही उस व्यक्ति के पास चल सकेंगे. वह आदमी नगर से कुछ दूर एक स्थान पर रहता है."

बरबास अब भयभीत हो गया. उसे इसकी आशा न थी. वह समझता था कि वे लोग तर्क द्वारा उसे समझाने की चेष्टा

नार्वेजियन कहानी

अंगूठी

■ नट हैम्सन

एक पार्टी में मैंने प्रेम में उन्मत्त एक युवती को देखा. उसकी आंखें नीली और चमकदार थीं. और वह अपनी भावनाएं छिपा नहीं पा रही थी. भला उसे किससे प्यार हो गया था? मेजबान के नौजवान बेटे से, जो खिड़की के पास खड़ा था? वह बहुत सुंदर लिबास पहने हुए था और उसकी आवाज में गरज थी. हां, उस युवती की दृष्टि उस पर जमी हुई थी और वह कुर्सी पर बैठी अपने आपको जैसे भूली हुई थी.

"कितना सुहाना मौसम है!" उस रात घर जाते हुए मैंने अपनी मंगेतर से कहा, "क्या आज पार्टी में आनंद आया?" और उसके उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही अपनी उंगली से मंगनी की अंगूठी उतार डाली. फिर, उसे दिखाते हुए कहा, "यह अंगूठी जो तुमने मुझे दी थी, मेरी उंगली में तंग पड़ती है. इसे जरा खुला करा दोगी?"

उसने अंगूठी लेते हुए कहा, "जल्दी ही करवा दूंगी."

एक महीने के बाद उससे फिर मुलाकात हुई. मैंने अंगूठी के बारे में पूछना चाहा कि अचानक कुछ सोचकर चुप रहा. मैंने अपने मन में कहा, आखिर ऐसी जल्दी भी क्या है? इसे कुछ समय और देना चाहिए.

तभी उसने कहा, "ओह, मुझे याद आया! वह अंगूठी—दरअसल वह अंगूठी बड़ी अभागिन है. मैं उसे कहीं रखकर भूल गयी हूं या वह शायद कहीं खो गयी है."

मैं चुप रहा.

"मुझसे नाराज हो?" उसने मुझे चुप देखकर पूछा.

मैंने जवाब नहीं दिया.

और जब वह मुझसे विदा हुई, तो कितनी खुश थी.

▣

इसके बाद एक साल बीत गया. मैं फिर से अपनी जानी-पहचानी जगहों पर जाने लगा. एक शाम मैं उसी जाने-पहचाने रास्ते पर सैर कर रहा था कि सामने उसे अपनी ओर आते हुए देखा. उसकी आंखें अब और भी ज्यादा नीली और चमकदार थीं, लेकिन उसका चेहरा कुछ उदास और पीला-सा था.

उसने दूर से ही ऊंची आवाज में कहा, "यह रही तुम्हारी अंगूठी. आखिर मिल ही गयी. और मैंने उसे खुला भी करवा लिया है."

मैंने एक क्षण उस निराश और पीले चेहरेवाली स्त्री की ओर देखा और फिर अंगूठी पर नजर डाली. फिर मैंने कहा, "यह अंगूठी सचमुच ही बड़ी अभागिन है. अब यह इतनी खुल गयी है कि मेरी उंगली में अटकी नहीं रह सकती." □

● संक्षिप्त रूपांतरण : सुखबीर

नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने के बाद एक इंटरव्यू में सोल्जेनित्सिन :

मेरा सैनिक जीवन निष्कलंक था !

सबसे पहले 1965 में मेरी आवाज बंद करने का फैसला लिया गया. मेरा संग्रहालय जब्त कर लिया गया. यदि स्तालिन युग रहा होता तो स्थिति पता नहीं क्या होती, लेकिन मेरी किताबें मेरे देश में और दूसरे देशों में फैल रही हैं. मेरी आवाज बंद करने का अब उनके पास कोई रास्ता नहीं है. हमारे देश में पार्टी का घना जाल फैला हुआ है. भाषणों तथा अन्य उपायों के द्वारा जनता को मनचाही बात समझायी जाती है. मुझे बदनाम करने की साजिश आज भी इन माध्यमों से हो रही है. पश्चिम के लोग यह नहीं समझ सकते कि यह कर्म किस तरह से किया जाता है. इन भाषणों में तमाम बेसिर-पैर की बातें की जाती हैं. पहले ये लोग मेरे घर-परिवार के बारे में बिना कुछ जाने हुए गंदी बातें करते थे. 1920 में, उनके अनुसार मैं 'प्रतिक्रांतिकारी' था. 1930 में मैं जनता का शत्रु हुआ. 1940 से मैं देश का विश्वासघाती हूं. मेरे सैनिक कार्यकाल को लेकर भी काफी कीचड़ उछाली गयी है, लेकिन सोवियत अखबारों ने यह स्वीकार किया कि मेरा सैनिक जीवन निष्कलंक था. इसके बाद नोबेल पुरस्कार को लेकर टंटा उठ खड़ा हुआ. कहा गया कि नोबेल पुरस्कार देश के साथ विश्वासघात करने पर दिया जाता है. वे इसे बार-बार दोहराते रहे, बिना यह सोचे कि चिली के मार्क्सवादी कवि पाब्लो नेरूदा भी इस लपेट में आ जायेंगे, जिन्हें 1971 का नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ था. □

करेंगे. यह सच है कि वह घटना शिष्यों की कल्पना से अधिक कुछ नहीं है. वह व्यक्ति वस्तुतः मरा ही नहीं होगा. फिर भी वह मिलने से डर रहा था.

जिस व्यक्ति से इन दोनों को मिलना था, वह पहाड़ी ढाल पर बसे एक गांव के छोर पर रहता था. जब कुम्हार युवक ने उस व्यक्ति की झोंपड़ी के दरवाजे की चिक उठायी तो वह व्यक्ति कुर्सी पर बैठा दरवाजे से बाहर की ओर देख रहा था, लेकिन ऐसा लगता था कि जब तक युवक ने अपने मधुर कंठ से नमस्कार नहीं किया, तब तक उसने इन लोगों में से किसी को भी नहीं देखा. युवक ने अपने आने का कारण बतलाते हुए अपनी बस्ती के मुखिया का संदेश सुनाया. संदेश सुनने के बाद युवक तथा बरबास को उस व्यक्ति ने बैठ जाने का संकेत किया.

बरबास उस व्यक्ति के ठीक सामने बैठा और इसके बाद उसने उस व्यक्ति का चेहरा-मोहरा भली-भांति देखने का प्रयत्न किया. उस व्यक्ति का वर्ण गेहुंआ था और चेहरा इतना कठोर था जैसे हड्डी. खाल बिलकुल चिपकी हुई हुई थी. बरबास ने कल्पना भी नहीं की थी कि ऐसे चेहरे-वाले व्यक्ति से उसकी जिंदगी में कभी मुलाकात होगी. उसके मुंह पर एक भी भाव न था. चेहरा ऐसा उजाड़ दिखलायी दे रहा था, जैसे रेगिस्तान हो.

युवक के प्रश्न का उत्तर देते हुए उस व्यक्ति ने कहा, "यह बिलकुल सत्य है कि मैं एक बार मर चुका हूं, लेकिन प्रभु ने कृपा कर मुझे पुनः जीवन दान दिया. मैं चार दिन और चार रात कब्र में दबा पड़ा रहा, लेकिन मेरी शारीरिक और मानसिक शक्तियों पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा. इससे महाप्रभु ने अपनी असीम शक्ति का परिचय दे दिया और उनका यश चारों ओर फैल गया. इससे प्रभु ने अपने देवपुत्र होने की बात भी सिद्ध कर दी." वह व्यक्ति मंद स्वर में बिना किसी उतार-चढ़ाव के बोल रहा था. जितनी देर वह बोला, अपनी पीली और बिना चमकवाली आंखों से लगातार बरबास की ओर देखता रहा.

जब उस व्यक्ति ने अपनी बात कह दी, तब वे लोग थोड़ी देर अपने प्रभु और भगवान की बातें करते बैठे रहे. इसके बाद वह युवक उठकर खड़ा हो गया और उसने जाने की आज्ञा मांगी. उस युवक के माता-पिता भी उसी गांव में रहते थे. वह उन्हीं से मिलने जा रहा था.

बरबास यह नहीं चाहता था कि वह उस आदमी के साथ अकेला रह जाये, लेकिन वह ऐसा कोई बहाना न खोज सका, जिसकी वजह से वह तुरंत विदा ले सके.

वह आदमी थोड़ी देर तो कुछ भी न बोला, लेकिन थोड़ी देर बाद उससे पूछा, "क्या तुम्हें उनके देवपुत्र होने में विश्वास है?" पहले तो बरबास उत्तर देने में थोड़ा-सा हिचकिचाया, लेकिन बाद में उसने इनकार कर दिया. वह उस व्यक्ति से झूठ नहीं बोलना चाहता था.

बरबास के उत्तर से वह व्यक्ति तनिक भी रुष्ट नहीं हुआ और थोड़ा-सा सिर हिलाते हुए बोला :

"नहीं? हां, ऐसे बहुत से लोग हैं, जो विश्वास नहीं करते. मेरी मां भी इस बात में विश्वास नहीं करती. वह कल तक तो यहां थी, लेकिन प्रभु ने मुझे मृत से जीवित कर दिया और ऐसा इसलिए किया, जिससे मैं उनका प्रमाण बन सकूं."

बरबास ने कहा, "ऐसी अवस्था में मेरे लिए प्रभु में विश्वास करना बिलकुल स्वाभाविक है. यही नहीं, मुझे सदैव जीवनदान प्राप्त करने के लिए उनका कृतज्ञ होना चाहिए."

उस आदमी ने उत्तर दिया, "मैं इसके लिए अपने प्रभु को प्रति दिन धन्यवाद देता हूं—इसलिए कि उसने मुझे मृतकों के संसार से बचा लिया."

"मृतकों का संसार?" बरबास के मुंह से अकस्मात निकल पड़ा. उसका स्वर कांप उठा था, यह स्वयं उससे भी छिपा न था. "मृतकों का संसार? . . .वह कैसा है? तुम तो वहां हो आये हो. बताओ, वहां कैसा लगता है!"

"क्या तुम चाहते हो कि मैं तुम्हें मृतकों के संसार के

संबंध में कुछ बताऊं? तो सुनो, सच्ची बात यह है कि मैं कुछ भी नहीं बतला सकता. मृतकों के संसार में कुछ भी नहीं होता. होता तो वहां है लेकिन वहां होता कुछ भी नहीं."

बरबास अब भी केवल उसकी ओर घूरता ही रहा. उसे वह चेहरा बड़ा डरावना प्रतीत हो रहा था. लेकिन वह अपनी दृष्टि उस व्यक्ति पर से हटा नहीं सका.

कमरे में क्रमशः अंधेरा बढ़ता जा रहा था. वह व्यक्ति उठा. उसने दीया जलाया. इसके बाद वह रोटी और नमक उठा लाया. उसने मेज पर दोनों के बीच नमक की कटोरी और रोटियों की तश्तरी रख दी. रोटी का एक टुकड़ा तोड़कर उसे नमक के स्पर्श कराते हुए उस आदमी ने बरबास से भी वैसा ही करने को कहा. बरबास मना तो न कर सका लेकिन रोटी का टुकड़ा तोड़ते समय उसके हाथ कांप रहे थे. वे दीये के मद्धिम प्रकाश में बैठे नमक के साथ रोटी खाते रहे.

बरबास ने देखा कि वह आदमी भोजन में इस बात का कोई ध्यान नहीं रखता कि वह किसे अपने साथ खिला रहा है. उसे मनुष्य-मनुष्य के बीच अंतर करना नहीं आता.—जैसा कि जेरुसलम की कुम्हार गली में रहनेवाले उसके बंधु-बांधवों को बरबास ने करते देखा था. लेकिन जब उसने देखा कि उस आदमी की पीली मृत उंगलियों से छुआ हुआ भोजन वह भी कर रहा है तो उसको लगा जैसे सड़ी लाश की बदबू उसके मुंह में भर गयी है.

जब भोजन समाप्त हो गया तो वह आदमी दरवाजे तक बरबास को पहुंचाने आया और उससे शांतिपूर्ण अपने निवास-स्थान तक जाने के लिए कहकर विदा कर गया. बरबास ने मंद स्वर में कुनमुनाकर कुछ कहा और जल्दी से उससे विदा लेकर चल दिया. वह तेज कदम बढ़ाता हुआ अंधेरे में जाकर खो गया और पहाड़ी ढाल पर से नीचे उतरकर शहर में आ गया. लेकिन इस बीच उसके मस्तिष्क में तरह-तरह के विचार बराबर चक्कर काट रहे थे.

▣

जब वह अपने डेरे पर पहुंच गया तो उसने मोटी औरत को अपने सीने से लगा लिया. उसका यह व्यवहार देखकर वह औरत विस्मय मुग्ध हो गयी. उसे बरबास के इस व्यवहार का कोई कारण मालूम नहीं था. लेकिन उस रात उस औरत ने महसूस किया कि बरबास को नियंत्रित करने की भी आवश्यकता है. और यदि कोई बरबास को नियंत्रित कर सकता है—उसे अपने हाथ में ले सकता है तो केवल वही है. वह रात भर अपने प्रेम विभोर सपनों में ही डूबी रही. वह पुनः तरुणी हो गयी थी और कोई उससे प्रेम करता था. . .

दूसरे दिन बरबास जेरुसलम के दक्षिणी भाग में नहीं गया और अपने आपको कुम्हार गली की ओर जाने से भी बचाता रहा. लेकिन शहर के उत्तरी भाग में उसे एक आदमी ने पकड़ ही लिया. वह उसकी निगाहों से बच न सका. उसने बरबास से उसके पास आकर पिछले दिन के अनुभव के बारे में प्रश्न किया. बरबास ने कह दिया, "मुझे इसमें संदेह है कि वह व्यक्ति मर गया था और उसे प्रभु ने पुनः जीवन दे दिया."

▣ पार लागरक्विस्त. जन्म 1891 में स्वीडन के एक छोटे से शहर वाक्सवो में. नोबेल पुरस्कार 1951 में. 1912 में सबसे पहले इनकी कविताएं प्रकाशित हुई थीं. 1940 में स्वीडी अकादमी के सदस्य चुने गये. इन्होंने कविताओं और उपन्यासों के अतिरिक्त नाटक भी लिखे हैं.

उस व्यक्ति का चेहरा बरबास के इस उत्तर के कारण राख की तरह सफेद हो गया. अपने प्रभु के अपमान का यह धक्का उसे बड़े जोर से लगा था. कुम्हार एकदम स्तब्ध रह गया था. बरबास ने उसकी तरफ अपनी पीठ करते हुए मुंह फेर लिया और उसे चला जाने दिया.

ऐसी प्रतिक्रिया केवल कुम्हार गली में ही नहीं, तेलियों, चमारों तथा बुनकरों के मुहल्लों में भी अवश्य हुई होगी, क्योंकि कुछ दिन बाद जब वह उन मुहल्लों में गया तो उससे किसी ने सीधे मुंह बात नहीं की. सबने अपनी मुखमुद्रा से स्पष्टतः अविश्वास का भाव प्रकट किया दिया. एक आदमी ने तो उससे यहां तक कह दिया कि अब वह उन लोगों के बीच आना बंद कर दे. बरबास वहां चुपचाप खड़ा रहा. जिस आदमी ने उससे यह सब कहा वह गंजा और बूढ़ा था. उसका चेहरा एकदम लाल था. बरबास उसे जानता नहीं था. उसे यह भी ज्ञान न था कि वह कौन हो सकता है. इसके पहले बरबास ने उस बूढ़े को पहले कभी नहीं देखा था.

बरबास समझ गया कि उसने इन लोगों को रुष्ट कर दिया है और इन सबका भाव अब उसके प्रति बिलकुल बदल गया है. वह जहां जाता, वहां कठोर मुखमुद्राएं और झिड़कियां उसका स्वागत करतीं. और एक दिन ऐसा हुआ कि यह खबर चारों ओर दावाग्नि की भांति फैल गयी कि यही वह व्यक्ति है जिसके स्थान पर देवपुत्र को फांसी दी गयी थी. यही है वह! यही है वह!!

रोषभरी कनखियों से उसे देखा जाता. हर एक की दृष्टि से घृणा बरसती. लोगों का क्रोध इतना बढ़ गया था कि बरबास के सामने न होने पर भी वह कम न होता. □

चलते-चलते

विश्वप्रसिद्ध अमरीकी नाटककार, यूजीन ओ'नील को उन दिनों की प्रसिद्ध अभिनेत्री, जीन हार्लो की ओर से तार मिला कि उसने एक फिल्म में काम करना स्वीकार किया है और उसकी पटकथा वह अमरीका के सर्वश्रेष्ठ नाटककार से लिखवाना चाहती है. सो, क्या यूजीन ओ'नील यह पटकथा लिखने के बारे में तार द्वारा बीस शब्दों में सूचित करेंगे?

ओ'नील ने जो तार भेजा, उसमें उन्नीस बार नहीं लिखा हुआ था, और बीसवां शब्द था : 'ओ'नील'. □

● सुखवीर

नोबेल पुरस्कार : कितना प्रकाश कितना अंधकार

▣ सुरेश उनियाल

साहित्य पर मिलने वाले नोबेल पुरस्कार पर अक्सर उठ खड़े होने वाले विवाद और असंतोष को देखते हुए क्या यही मान लिया जाये कि यह सम्मान उसके सही दावेदारों तक नहीं पहुंचता?

साहित्य के लिए पहला नोबेल पुरस्कार 1901 में दिया गया, फ्रांस के कवि रेने-फ्रांसुआ अर्मा प्रूधों को. और इस पुरस्कार के दिये जाते ही दुनियाभर के लेखकों में विरोध की लहर उमड़ पड़ी. अधिकांश लोगों का खयाल था कि इस पुरस्कार के सबसे तगड़े हकदार लियो ताल्स्तोय थे. स्वीडन के 42 लेखकों, कलाकारों और आलोचकों ने ताल्स्तोय को एक पत्र भी लिखा और कहा कि यह पुरस्कार उन्हें ही मिलना चाहिए था. पर नोबेल पुरस्कार देनेवाली अकादमी भी तो कुछ नियमों से बंधी थी. वह सिर्फ उन्हीं नामों पर विचार कर सकती है जिनके नाम उस वर्ष के पुरस्कार के लिए गठित नोबेल पुरस्कार कमेटी प्रस्तावित करती है. ताल्स्तोय का नाम जब प्रस्तावित ही नहीं हुआ तो उनके नाम पर विचार ही नहीं हो सका.

रेने-फ्रांसुआ अर्मा प्रूधों

1902 में साहित्य के लिए नोबेल पुरस्कार प्राप्त करनेवाले लेखक थे थ्योडोर मामसन. ये इतिहासकार थे, रचनात्मक साहित्यकार नहीं. इस बात को लेकर भी काफी रोष रहा.दरअसल पश्चिम में लिट्रेचर शब्द की परिभाषा इतनी विस्तृत है कि इतिहासलेखन ही क्या किसी वस्तु के विज्ञापन के लिए तैयार की गयी प्रचार सामग्री भी इसमें आ जाती है, और गनीमत है कि किसी ऐसी 'रचना' पर अभी तक नोबेल पुरस्कार नहीं दिया गया. जिस पुस्तक के लिए मामसन को यह पुरस्कार मिला था वह 1850 में प्रकाशित हुई थी, जबकि इस पुरस्कार के संस्थापक अल्फ्रेड नोबेल के वसीयतनामे के अनुसार पिछले वर्ष प्रकाशित रचना को ही इस पुरस्कार के लिए प्रस्तावित किया जा सकता है.

इतिहासलेखन के लिए नोबेल पुरस्कार प्राप्त करनेवाले मामसन एकमात्र लेखक नहीं थे. ब्रिटेन के भूतपूर्व प्रधानमंत्री विंस्टन चर्चिल को भी यह पुरस्कार इतिहासलेखन के लिए ही 1953 में दिया गया.

इसी प्रकार दर्शन के लिए भी क्रिस्तोफ यूकेन (1908) हेनरी बर्गसन (1927) तथा बर्ट्रेंड रसेल (1950) को यह पुरस्कार दिया गया.

इस पुरस्कार को लेने से कोई इनकार भी कर सकता है, यह दुनिया को 1920 में ही पता चला जब प्रख्यात नाटककार जार्ज बर्नार्ड शॉ ने इसे लेने से इनकार कर दिया. पर बाद में वे इस बात के लिए सहमत हो गये कि इस राशि को वे साहित्य के हित में लगायेंगे और उन्होंने इससे एंग्लो स्वीडिश लिट्रेरी फाउंडेशन की स्थापना कर दी. बाद में तीन और लेखकों ने भी यह पुरस्कार नहीं लिया. इनमें पहले थे रूस के बोरिस पास्तरनाक.

पास्तरनाक के लिए यह पुरस्कार 1950 में घोषित हुआ. उन्हीं दिनों उनके उपन्यास 'डाक्टर जीवागो' को लेकर काफी शोर हो रहा था. इसमें लेखक ने रूसी क्रांति के प्रति निराशा प्रकट की थी. रूस में तो यह उपन्यास नहीं छप सका था पर इसकी पांडुलिपि किसी तरह इटली भेज दी गयी. वहां के एक प्रकाशक ने इसे प्रकाशित किया. इसके बाद इसका अनुवाद यूरोप की लगभग सभी भाषाओं में प्रकाशित हुआ. जब पास्तरनाक को उनकी कविताओं के लिए नोबेल पुरस्कार की घोषणा हुई तो पश्चिमी साहित्यकारों ने प्रचार यह किया कि यह 'डाक्टर जीवागो' के लिए दिया गया है. इस तरह का प्रचार उठ खड़ा होने पर पास्तरनाक ने यह पुरस्कार लेने से इनकार कर दिया.

पुरस्कार ठुकरानेवालों में दूसरे थे फ्रांस के लेखक, दार्शनिक ज्यां पॉल सार्त्र. 1964 में सार्त्र के लिए यह पुरस्कार घोषित हुआ था. उन्होंने पुरस्कार ठुकरा दिया था. कुछ लोगों का मानना है कि कामू को (1960 में) उनसे पहले पुरस्कार मिल जाने के कारण चिढ़कर सार्त्र ने इस पुरस्कार को ठुकराया था.

नोबेल पुरस्कार न लेने वालों में तीसरे हैं अलेक्जेंडर सोल्जेनित्सिन. रूस में रहते हुए रूस सरकार विरोधी लेखन के लिए तरह-तरह की सजाएं भोगते सोल्जेनित्सिन को पुरस्कार लेने के लिए जाने ही नहीं दिया गया था. इस समय वे रूस से निर्वासित हैं. यों निर्वासित लेखकों में वे पहले नहीं हैं. उनसे पहले के ईवान बुनिन, जिन्हें 1939 के लिए पुरस्कार मिला था, 1919 में ही अपना देश छोड़कर फ्रांस में निर्वासित जीवन बिता रहे थे. हालांकि वे नोबेल पुरस्कार पानेवालों में पहले रूसी थे.

सबसे कम उम्र में नोबेल पुरस्कार

प्राप्त करनेवाले लेखक थे ब्रिटेन के रुडयार्ड किपलिंग. इन्हें यह पुरस्कार 1907 में 42 वर्ष की आयु में मिला था, हालांकि उस समय तक स्विंबर्न, जॉर्ज मैरिडिथ, जॉन मार्लो, टामस हार्डी, जेम्स बारी और राबर्ट ब्रिजेज जैसे वरिष्ठ लेखकों के नाम नोबेल फाउंडेशन और स्वीडी अकादमी के सामने रखे जा चुके थे. किपलिंग नोबेल पुरस्कार पानेवाले पहले ब्रितानी थे.

एक सवाल यहां पर और भी उठता है. किपलिंग के माता-पिता हालांकि अंग्रेज थे पर उनका जन्म बंबई में हुआ था. लेखक-पत्रकार के रूप में उन्होंने अपना जीवन भारत में ही शुरू किया था और उनका अधिकतर लेखन भारत के ही विषय में है. तो फिर उन्हें भारतीय लेखक क्यों नहीं माना गया? जार्ज बर्नार्ड शॉ आयरलैंड में पैदा हुए थे, पर अंग्रेजों के बारे में लिखने के कारण उन्हें ब्रिटेन का लेखक माना गया.

इस पुरस्कार को लेकर तृतीय विश्व के देशों में अक्सर संदेह का माहौल रहा है. मसलन अफ्रीका में यह पुरस्कार आज तक किसी को नहीं मिला. एशिया में सिर्फ तीन नाम हैं—रवींद्रनाथ ठाकुर (भारत), यासुनारी कावाबाता (जापान) और युसूफ एग्नान (इजराइल) लातीनी अमरीका की स्थिति भी खास अच्छी नहीं है. वहां अब तक केवल ग्रैब्रीला मिस्त्राल (चिली), मिगेल आंखेल अस्तूरियास (गुआतेमाला) और पाब्लो नेरूदा (चिली) को ही यह पुरस्कार मिला है, जबकि फ्रांस (11), अमरीका (7) और ब्रिटेन (7) को यह कई-कई बार मिल चुका है. स्वीडन के 6 लेखकों को भी यह पुरस्कार मिल चुका है. जबकि रूस जैसे देश के सिर्फ चार लेखकों को ही यह पुरस्कार मिल पाया है. क्या स्वीडी अकादमी यह सिद्ध करना चाहती है कि पिछले अस्सी सालों में रूस ने सिर्फ चार अच्छे लेखक पैदा किये हैं और स्वीडन ने छह. ताल्स्तोय, गोर्की, चेखव जैसे लेखक पश्चिमी दुनिया के लेखकों में छोटे पड़ते हैं! यदि अकादमी अपने नियमों की दुहाई देती है तो क्यों नहीं नियमों में संशोधन कर लेती? □

कैसे दिया जाता है नोबेल पुरस्कार

● अल्फ्रेड नोबेल

नोबेल पुरस्कार के संस्थापक अल्फ्रेड नोबेल ने अपने वसीयतनामे में स्पष्ट लिखा था कि यह पुरस्कार "... उस स्त्री या पुरुष को दिया जायेगा जिसने गत वर्ष साहित्य के क्षेत्र में सबसे महत्त्वपूर्ण और आदर्शवादी स्वभाव की रचना लिखी होगी. . . मेरी अत्यंत प्रबल इच्छा है कि इन पुरस्कारों को प्रदान करने में उम्मीदवारों की राष्ट्रीयता का कोई भी ध्यान नहीं रखा जायेगा और पुरस्कार उसी को प्रदान किया जायेगा जो उसका अधिकारी होगा, चाहे वह स्कंडिनेविया का निवासी हो या न हो."

इसकी व्याख्या यह की गयी कि साहित्य को मात्र रचनात्मक साहित्य तक सीमित न रखकर आदर्शवादी स्वभाव की किसी भी विषय की रचना को इसके अंतर्गत लिया जायेगा. पुरस्कार के लिए नाम गत वर्ष में तैयार की गयी, लिखी या छपी हुई पुस्तक होने पर ही प्रस्तावित किया जा सकेगा. यदि लेखक की मृत्यु हो चुकी हो तो उसका नाम प्रस्तावित नहीं किया जा सकता. हां, यदि नाम प्रस्तावित किये जाने के बाद लेखक की मृत्यु हो जाये, तब भी उसे पुरस्कार दिया जा सकता है. ऐसा अब तक एक ही उदाहरण है—स्वीडन के लेखक एरिक एक्सेल कार्लफेल्ट को 1931 में उनकी मृत्यु के बाद पुरस्कृत किया गया था.

पुरस्कार समिति हर वर्ष सितंबर के महीने में जानकार व्यक्तियों से नाम प्रस्तुत करने के लिए कहती है. ये व्यक्ति निम्नलिखित ही हो सकते हैं : 1. स्वीडी अकादमी या ऐसी अन्य संस्था के सदस्य जो स्वीडी अकादमी के विधान तथा मत से सहमत हों. 2. साहित्य तथा भाषा विज्ञान के विश्व-विद्यालय स्तर के प्राध्यापक. 3. पिछले वर्षों के नोबेल पुरस्कार विजेता. 4. विभिन्न देशों की प्रतिनिधि साहित्य समितियों के सदस्य.

इनको अगले वर्ष की फरवरी की पहली तारीख से पहले अपनी सिफारिशें तथा उसके लिए प्रमाण देने होते हैं. इसके बाद सितंबर से पहले नोबेल कमेटी अपने प्रस्ताव स्वीडी अकादमी के सम्मुख प्रस्तुत करती है और अक्तूबर के अंत तक स्वीडी अकादमी उन प्रस्तावों पर विचार करके नवंबर के मध्य तक अपना निर्णय जारी कर देती है.

10 दिसंबर को, नोबेल फाउंडेशन की जयंती के अवसर पर एक बहुत बड़ा पुरस्कार समारोह आयोजित किया जाता है. इसका स्थान होता है स्टाकहोम कंसर्ट हॉल. इस अवसर पर स्वीडी अकादमी का एक सदस्य पुरस्कार विजेता को लोगों के सामने प्रस्तुत करता है और उसे एक डिप्लोमा और पुरस्कार राशि के चेक के अतिरिक्त स्वर्ण पदक भी दिया जाता है. इस स्वर्ण पदक के एक ओर डा. अल्फ्रेड नोबेल की तस्वीर अंकित होती है तथा दूसरी ओर लेखक के लिए प्रशस्ति लेख होता है. पुरस्कार विजेता के लिए यह जरूरी है कि पुरस्कार पाने के छह महीने के भीतर अपने विषय से संबंधित एक व्याख्यान तैयार करे. यह व्याख्यान भी स्टाकहोम में ही होता है.

यदि किसी वर्ष पुरस्कार के योग्य कोई काम पाया ही न जाये तो वह राशि अगले वर्ष के पुरस्कार के साथ जोड़ दी जाती है. □

साधारण शक्ल-सूरत वाली ल्योरा में ऐसा क्या था कि मार्टिन ने खूबसूरत, पढ़ी-लिखी, ऊंची सोसायटी की मैंडेलिन के मुकाबले उसी का चुनाव किया? प्रस्तुत है सुप्रसिद्ध उपन्यास 'एरोस्मिथ' का एक महत्त्वपूर्ण अंश

अमरीकी उपन्यास अंश

तुम मुझे पसंद हो

• सिंक्लेयर लेविस

मैंडेलिन के साथ जेनिथ तक की यात्रा में लगभग आधा घंटा लगा. पर मार्टिन को इतना समय किसी तूफानी बादल के समान भयावह और बोझिल जान पड़ा. उसे आनेवाले एक-एक क्षण से अलग-अलग नहीं जूझना था, बल्कि तीस मिनट लंबा समय एक साथ उसके सामने खड़ा था. दो मिनट बाद कहने वाली बात जब वह मन ही मन याद कर रहा होता तो दो मिनट पहले कही हुई अपनी भोंडी बात उसके कानों में सुनाई दे जाती. वह पूरी कोशिश कर रहा था कि मैंडेलिन का ध्यान अपने इस 'घनिष्ठ मित्र' पर से हटाये रख सके, जिससे वे मिलने जा रहे थे.

"कौन है यह आदमी जिससे हम मिलने जा रहे हैं? तुम उसके बारे में छिपा क्यों रहे हो? मार्टिन, सच बताना, तुम कहीं मुझसे मजाक तो नहीं कर रहे?"

"खैर, मैं तुम्हें बता ही दूं, वह कोई मर्द नहीं, औरत है."

"ओह!"

"तुम जानती ही हो, अपने काम से मुझे अक्सर अस्पतालों में जाना पड़ता है, और जेनिथ के सार्वजनिक अस्पताल की कुछ नर्सों ने मेरी बहुत मदद की. . ." इतना कहते-कहते वह हांफने लगा, "खास तौर से, वहां एक नर्स है, जो विलक्षण है. वह रोगी-परिचर्या के संबंध में इतना कुछ जानती है और इतनी कुछ काम की बातें उसने मुझे सिखायी है कि मैं बता नहीं सकता. वह एक नेक लड़की है—मिस टोजर. उसका पहला नाम शायद 'ली' या कुछ ऐसा ही है. उसके पिता उत्तरी डकोटा के एक बड़े आदमी हैं. काफी धनी हैं. मेरा खयाल है कि इस लड़की ने समाज सेवा की भावना से प्रेरित होकर ही नर्सिंग का पेशा अपनाया होगा. मैंने सोचा, तुम दोनों एक-दूसरे से परिचित होना पसंद करोगी."

"हां—आं." मैंडेलिन की निगाहें बहुत दूर किसी चीज पर टिक गयी थीं. अरुचि की रेखाएं उसके चेहरे पर फैल गयी थीं. "बेशक, मैं उससे मिलकर बहुत खुश होऊंगी. तुम्हारी कोई मित्र है वह. . . पर मार्ट, कहीं तुम उसके साथ इश्क तो नहीं लड़ा रहे हो. इन नर्सों के साथ ज्यादा मेलजोल बढ़ाना अच्छा नहीं है. मैं इनके बारे में कुछ भी नहीं जानती, लेकिन मैंने सुना है कि इनमें से कुछ नर्सें एक के बाद दूसरे मर्द की तलाश में रहती हैं."

"हो सकता है, लेकिन मैं तुम्हें अभी बता दूं कि ल्योरा ऐसी नहीं है!"

"मैं भी ऐसा ही सोचती हूं, लेकिन. . . मार्टिकिस, कहीं ऐसा न हो कि ये नर्सें तुमसे केवल अपना दिल बहलाती रहें. मैं तुम्हारे भले के लिए ही कहती हूं. उनके पास दिल बहलाने के ऐसे कई साधन होंगे. तुम समझते हो कि तुम्हें औरतों के मनोविज्ञान का अच्छा ज्ञान है, लेकिन मार्ट, सच कहती हूं, कोई भी तेज औरत तुम्हें अपनी उंगली पर नचा सकती है."

"खैर, मेरा खयाल है, मैं अपनी हिफाजत खुद कर सकता हूं."

"ओह, मेरा मतलब है. . . मेरा मतलब यह नहीं है. . . लेकिन मुझे उम्मीद है कि मैं इस टोजर नाम की लड़की को पसंद कर सकूंगी, क्योंकि तुमको वह पसंद है. लेकिन यह मत भूल जाना कि मैं ही तुम्हारी सच्ची प्रियतमा हूं. मैंने सदा तुम्हें अपने अंतरमन से प्यार किया है."

यह सच है कि उसने किया था. इसलिए जब उसने मार्टिन के हाथ को अपने हाथों में थाम लिया, तो उसने आसपास बैठे मुसाफिरों की निगाहों की उपेक्षा कर दी. ल्योरा के विषय में उसने जो कुछ कहा था उससे मार्टिन को गुस्सा तो आया था, पर अब वह इतनी डरी-सी लग रही थी कि उसका क्रोध हवा हो गया.

▣

ग्रांड 1907 में जेनिथ का सर्वोत्तम होटल था. अब तो विशाल होटल थार्नली की शान-शौकत के आगे इसका रंग फीका पड़ गया है. अब मोजेक के कामवाले इसके फर्श गंदे पड़े रहते हैं. रंग-रोगन और मुलम्मों पर खरोंचें पड़ गयी हैं और वे बदरंग हो गये हैं. चमड़े की भारी-भारी कुर्सियों की सीवनें उधड़ गयी हैं. उनमें सिगरेट की राख झड़ी रहती है और घोड़ा बेचनेवाले उनका उपयोग करते हैं. लेकिन अपने दिनों में यह शिकागो और पिटसबर्ग के बीच एकमात्र ऐसी शरणगाह थी जिस पर सबको गर्व था. यह होटल वस्तुतः एक पश्चिमी स्थापत्य कला का एक नमूना है. इसके प्रवेश-मार्ग पर मूरिश शैली के बीस के लगभग मेहराब बने हुए हैं.

▣ सिंक्लेयर लेविस
जन्म : 7 फरवरी, 1885 (अमरीका)
नोबेल पुरस्कार (1930) से सम्मानित. सर्वाधिक चर्चित उपन्यास 'बैबिट' तथा 'अवर मिस्टर लेन,' 'द ट्रेल ऑफ ए हॉक', 'द इन्नोसेंट', 'द जॉब' आदि अन्य चर्चित कृतियां.
मृत्यु : 10 जनवरी, 1951

मार्टिन ने देखा कि ल्योरा उस दिन बहुत ही बेढंगे कपड़े पहनकर आयी थी. उसने अपने शहद के रंग जैसे बालों को अनाड़ी की तरह अपने हैट के भीतर खोंस रखा था. हैट भी क्या था, हैटनुमा चटाई की टोपी थी. लेकिन मार्टिन को उसके हैट और बालों की उतनी परवाह न थी, उसे तो जो चीजें अखरीं, वे थीं उसकी शर्टवेस्ट, जिसका तीसरा बटन ही गायब था. मार्टिन मन ही मन उसके इस पहनावे से खीझ गया था, क्योंकि मैंडेलिन के नीले सर्ज की चमकदार पोशाक के आगे यह उसकी पोशाक बहुत साधारण और भद्दी लग रही थी. ल्योरा को अधिक अच्छी तरह वस्त्राभूषण से सज-धजकर आना चाहिए था. यह बात उसके मन में केवल इसलिए उठी क्योंकि वह ल्योरा को मैंडेलिन की अपेक्षा तनिक भी घटाकर नहीं देखना चाहता था. उसका स्नेह ल्योरा को अपने आंचल में समेटकर, अपने संरक्षण में लेने के लिए आतुर हो उठा.

यह सोचने के साथ-साथ वह मन ही मन कह रहा था—'मैंने सोचा, तुम दोनों लड़कियों को एक-दूसरे से परिचित हो ही जाना चाहिए—मिस फाक्स, मैं मिस टोजर से तुम्हारा परिचय कराना चाहता हूं. . .'

ल्योरा और मैंडेलिन ने एक-दूसरे से कोई विशेष बात नहीं की. मार्टिन उनको मार्ग दिखाता ग्रांड के प्रसिद्ध भोजन-कक्ष में ले गया. उसमें मखमली कुर्सियां और चांदी के भारी बर्तन रखे थे. हरे तथा सुनहले रंग के वास्केट पहने हुए प्रौढ़ नीग्रो बैरे इधर से उधर दौड़-भाग रहे थे.

"कितना शानदार कमरा है!" ल्योरा ने चहकते कहा.

मैंडेलिन ने ऐसे देखा, मानो वह भी इसी बात को अधिक लंबे शब्दों में कहने का इरादा रखती हो, लेकिन उसने भित्तिचित्रों पर एक बार फिर अपनी दृष्टि डाली और कहा, "हां, लेकिन यह बहुत बड़ा है. . ."

वह बैरे को खाने की चीजों का ऑर्डर दुखते हुए जी के साथ दे रहा था. उसने इस ऐय्याशी के लिए किसी तरह चार डालर का इंतजाम किया था, और इसी में बैरे को 'टिप' भी देनी थी. अच्छे भोजन का उसका स्टैंडर्ड यही था कि उसे चार के चार डालर इस मद में खर्च कर देने हैं. 'मीनू कार्ड' को देखता हुआ वह सोच नहीं पा रहा था कि क्या मंगवाये, जबकि घिनौना-सा बैरा उसके कंधों के पीछे ऑर्डर की प्रतीक्षा में खड़ा था. तभी मैंडेलिन बोल पड़ी. वह अति औपचारिक

नम्रता के साथ बोली, "मिस्टर एरोस्मिथ ने मुझे बताया है कि आप नर्स हैं मिस टोजर."

"हां, नर्स का ही काम कर रही हूं."

"क्या आपको नर्सिंग का पेशा दिलचस्प लगता है?"

"हां, यह दिलचस्प तो है."

"मेरा खयाल है कि दूसरों को कष्ट में राहत पहुंचाना एक अच्छा काम है. जहां तक मेरे काम का सवाल है—मैं अंग्रेजी साहित्य में डाक्टर ऑव फिलासिफी की डिग्री के लिए शोधकार्य कर रही हूं. . . " उसने इसको कुछ ऐसे लहजे में कहा मानो वह पीएच. डी. नहीं लेने जा रही, किसी अर्ल का पद प्राप्त करने जा रही है— "बहुत रूखा और निष्पक्ष भाव से किया जानेवाला काम है. मुझे अंग्रेजी भाषा के उद्‍भव और विकास का सांगोपांग अध्ययन करना है और कुछ इसी तरह के अन्य काम करने हैं. आप तो प्रयोगिक प्रशिक्षण प्राप्त कर रही है, इसीलिए आपको यह काम बेतुका-सा लगेगा."

"हां, हो सकता है ऐसा. . . नहीं, यह जरूर बहुत ही दिलचस्प होगा."

"क्या आप जेनिथ की रहनेवाली हैं, मिस. . . टोजर?"

"नहीं, मैं एक छोटे-से कस्बे. . . उसे मुश्किल से ही कस्बा कहा जा सकता है—उत्तरी डकोटा की रहनेवाली हूं!"

"ओह,. . . उत्तरी डकोटा!"

दिनारंभ

▣ सोल्जेनित्सिन

सूर्योदय के वक्त तीस युवक दौड़ते हुए एक खुले मैदान में पहुंचे, भक्तगणों की तरह उनके चेहरे सूर्य की तरफ घूमे, वे झुकने शुरू हुए, घुटनों तक झुके, और झुके, मुंह के बल औंधे लेट गये, अपनी बाजुओं को खींचकर सीधा तान, हाथ ऊपर उठाये और फिर से घुटनों के बल पर आ गये. इस सबमें उन्हें करीब पंद्रह मिनट लगे.

थोड़े फासले से यह सब देखकर आप सोच सकते हैं कि वे प्रार्थना कर रहे हैं.

आधुनिक युग में किसी को भी अजीब नहीं लगेगा, यदि लोग जिंदगी में हर रोज अपने शरीर को निरोग और सतर्कता से संजोकर रखने के लिए यह सब करने लगें.

लेकिन यह उन्हें ताना लगेगा कि ऐसा करना भी अपनी आत्मा ही को सम्मान देना है.

नहीं, ये लोग प्रार्थना नहीं कर रहे हैं. ये प्रातः काल का व्यायाम कर रहे हैं. □

● प्रस्तुति : राजकुमार गौतम

"हां, . . . पश्चिम की ओर."

"अच्छा, अच्छा. . . आप क्या इधर पूरब में कुछ समय तक रुकेंगी?" ठीक यही बात मैंडेलिन के एक चचेरे भाई ने उससे कही थी और मैंडेलिन को उसकी यह बात पसंद नहीं आयी थी.

"जी नहीं. . . हां, लेकिन कुछ समय तक तो मैं यहां हूं ही."

"आप. . . आपको क्या यह जगह अच्छी नहीं लगी?"

"क्यों नहीं, यह काफी खूबसूरत है. बड़े शहरों में तो देखने के लिए ज्यादा कुछ नहीं होता."

"बड़ा? खैर, यह तो अपने-अपने दृष्टिकोण पर निर्भर है. मैं तो न्यूयार्क जैसे शहर को बड़ा कहती हूं, लेकिन आपके उत्तरी डकोटा के मुकाबले तो यह बड़ा ही है. अपने कस्बे से बड़ा और आकर्षक होने के कारण ही शायद यह आपको अच्छा लगता है."

"जी हां, इससे उसकी तुलना ही क्या!"

"बताइए तो सही, आपका उत्तरी डकोटा है कैसा? इन पश्चिमी राज्यों के बारे में मेरे मन में सदा से कुतूहल रहा है." मैंडेलिन ने यह दूसरी बार अपने चचेरे भाई की नकल की थी. "इसको देखकर आप क्या सोचती हैं?"

"आपका आशय मैं ठीक से समझी नहीं."

"मेरा मतलब है कि इस नगर को देखकर आपको कैसा लगा?"

"यहां पर गेहूं और स्वीडिश शलजम काफी पैदा होता है."

"लेकिन मेरा मतलब है. . .मेरा अनुमान है कि आप पश्चिमी लोग हम पूर्वी लोगों की तुलना में बहुत ही शक्तिशाली और स्फूर्तिमय होते हैं."

"मैं नहीं कह सकती. . . हां, संभव है, ऐसा होता हो."

"जेनिथ में तो आप काफी लोगों को जानती होंगी."

"नहीं, मेरा परिचय बहुत कम लोगों से है."

"क्या आप डा. बिर्चहाल से मिल चुकी हैं? वे आपके अस्पताल में ऑपरेशन करते हैं. बहुत नेक आदमी हैं. सर्जक तो उतने अच्छे नहीं हैं किंतु हैं बड़े प्रतिभाशाली. गायक तो वे गजब के हैं, उनका खानदान भी बहुत इज्जतदार माना जाता है."

"नहीं, उनसे मिलने का सुअवसर अभी तक मुझे नहीं मिल पाया है." ल्योरा ने मिमियाती-सी आवाज में कहा.

"आप उनसे जरूर मिलिए. वे टेनिस के बहुत शानदार खिलाड़ी हैं, लखपतियों की ओर से दी जानेवाली दावतों में उनको बराबर निमंत्रित किया जाता है. वे बहुत फुर्तीले और चुस्त-दुरुस्त आदमी हैं."

मार्टिन ने अब पहली बार टोका, "क्या कहा चुस्त-दुरुस्त? और वह? उस आदमी के पास तो दिमाग नाम की कोई चीज है ही नहीं."

"मैंने 'चुस्त' उस अर्थ में नहीं कहा जिस अर्थ में तुमने समझा." यह कहकर मैंडेलिन फिर ल्योरा की ओर उन्मुख हो गयी और मार्टिन अकेला पड़ गया. मैंडेलिन ने पहले से

भी अधिक उत्सुकता और उल्लास के साथ ल्योरा से पूछा कि क्या वह कारपोरेशन के वकील के लड़के को, अमुक हैट की दूकान को और अमुक क्लब को जानती है? काउक्सेस, वान ऐंट्रिप और डाइसवर्थ जैसे लोगों के विषय में जो जेनिथ के सामाजिक नेता माने जाते थे और 'एडवोकेट टाइम्स' के सामाजिक कालमों में जिनके नाम प्रायः नित्य ही चर्चित होते थे. मैंडेलिन ऐसे बात कर रही थी, जैसे वह उन्हें काफी नजदीक से जानती हो. बड़े लोगों से उसकी इस घनिष्ठता का परिचय पाकर मार्टिन भी आश्चर्यचकित था. निश्चय ही ल्योरा ने इन बड़े-बड़े लोगों का नाम तक नहीं सुन रखा था, न उसने कभी ऐसी संगीत-गोष्ठियों, ऐसे भाषणों और ऐसी कवि-गोष्ठियों में भाग ही लिया था, जिनमें मैंडेलिन की सारी शानदार शामें बीतती थीं.

कुछ क्षण सोचने के बाद मैंडेलिन फिर बोली, "खैर यह बताइए, अस्पताल में आकर्षक और मोहक डाक्टरों तथा दूसरे लोगों से मिलने-जुलने के बाद आप लोगों को लेक्चर तो फीके लगते होंगे!" इसके बाद उसने ल्योरा से बात करना छोड़कर प्रोत्साहन देने की भंगिमा के साथ मार्टिन को देखा और कहा, "तुम क्या बता रहे थे . . . खरगोशों पर कोई और प्रयोग करने की योजना बना रहे हो?"

मार्टिन गंभीर था. यही मौका था जब वह अपनी बात कह सकता था. "मैंडेलिन! तुम दोनों को मैंने इसलिए मिलाया, क्योंकि, मैं नहीं जानता तुम दोनों ने एक-दूसरे को पसंद किया या नहीं, लेकिन मेरी इच्छा थी कि तुम ऐसा करतीं, क्योंकि मैं. . . मैं अपने को दोषमुक्त सिद्ध करने के लिए कोई बहाना नहीं बनाना चाहता. मैं ऐसा किये बिना रह न सका. मैं तुम दोनों से प्रेम करता हूं, और मैं जानना चाहता हूं. . . "

मैंडेलिन सहसा उठ खड़ी हुई. इतनी गर्वीली और इतनी सुंदर वह कभी नहीं दिखाई दी थी. उसने उन दोनों की ओर स्थिर दृष्टि से कुछ क्षणों तक देखा, और फिर बिना एक शब्द बोले, पीठ फेरकर वहां से चल दी. फिर, तुरंत ही लौट आयी, ल्योरा के कंधे को उसने छुआ और चुपचाप ल्योरा को चूम लिया, "मुझे तुम्हारे लिए दुख है. अब तुम्हें एक काम मिल गया है! मेरी प्यारी बच्ची!" इतना कहकर वह चल दी. जाते समय उसके कंधे गर्व से सीधे थे.

शंकित, भयभीत मार्टिन सकते में आ गया. वह आंख उठाकर ल्योरा की ओर देख न सका.

उसने अपने हाथ पर ल्योरा के हाथ का स्पर्श अनुभव किया. उसने आंखें ऊपर उठायीं. वह मुस्करा रही थी. उसकी आंखें प्रसन्न थीं और उसका उपहास-सा कर रही थीं.

"सैंडी, मैं तुम्हें चेतावनी देती हूं कि मैं तुम्हें त्याग नहीं रही हूं. मैं मान लेती हूं कि तुम उतने ही बुरे हो जितना वह कहती है, मैं यह भी मानती हूं कि मैं मूर्ख और उद्धत हूं. लेकिन तुम मेरे हो! मैं तुम्हें बता देना चाहती हूं कि अगर तुम अब किसी और से फंसे, तो तुम्हारे हक में ठीक न होगा. मैं उस चुड़ैल की आंखें बाहर निकाल लूंगी! समझे? अब तुम अपने बारे में भी मुगालते में मत रहो. मैं जहां तक

बाकी सब कुछ

नोबल-पुरस्कार विजेता, सिक्लेयर लेविस को एक बार किसी स्त्री का पत्र मिला, जिसमें उसने उनकी सेक्रेटरी बनने की इच्छा प्रकट की थी. साथ ही, उसने लिखा था : "टाइपिंग, शार्टहैंड, पत्र-व्यवहार आदि के अलावा मैं और भी सब कुछ कर सकती हूं." "और भी सब कुछ" शब्दों को उसने रेखांकित किया हुआ था.

लेविस ने यह पत्र अपनी पत्नी, डोरोथी थांपसन को दिखाया और कहा, "अच्छा हो कि इसका उत्तर तुम खुद दो."

डोरोथी थांपसन ने उस स्त्री को बहुत आदरपूर्वक लिखा : ". . . मिस्टर सिंक्लेयर लेविस के पास पहले से ही एक बहुत योग्य सेक्रेटरी मौजूद है, जो टाइपिंग, शार्टहैंड, पत्र-व्यवहार आदि का काम करती है. और इस काम के अलावा बाकी सब कुछ मैं खुद करती हूं." 'बाकी सब कुछ' शब्दों को उन्होंने रेखांकित करके पत्र डाक में डाल दिया. □

● प्रस्तुति : सुलवीर

समझ पायी हूं तुम्हें, तुम काफी स्वार्थी हो. लेकिन मुझे इसकी परवाह नहीं. तुम मेरे हो, केवल मेरे!"

मार्टिन ने अस्फुट स्वर में कई बातें कहीं जो उस अवसर पर कही जा सकती थीं.

कुछ सोचकर ल्योरा ने कहा, "मैं जरूर यह महसूस करती हूं कि तुम और वह जितने निकट थे, मैं और तुम उससे अधिक निकट हैं. शायद तुम इसलिए मुझे ज्यादा पसंद करते हो, क्योंकि तुम डरा-धमकाकर मुझसे काम करा सकते हो, मुझ पर तुम्हारी धौंस चल सकती है—क्योंकि मैं तुम्हारी पिछलग्गू बन सकती हूं और वह कभी नहीं बन सकती थी. मैं यह भी जानती हूं कि तुम्हारा कार्य तुम्हारी दृष्टि में मुझसे भी अधिक महत्त्व रखता है. संभव है, तुम्हारा काम खुद तुमसे भी ज्यादा महत्त्व रखता हो. लेकिन मैं गंवार हूं, सीधी-सादी हूं, और वह ऐसी नहीं है. मैं तुम्हारी अनन्य प्रशंसिका हूं (क्यों, यह तो ईश्वर जाने, पर मैं तुम्हारी प्रशंसा करती हूं), जबकि उसमें इतनी समझदारी है कि वह तुमसे अपनी प्रशंसा कराने और तुम्हें अपना पिछलग्गू बनाने की सोच सके."

"नहीं! मैं सौगंध खाकर कहता हूं ल्योरा, मैं तुम्हें इसलिए पसंद नहीं करता कि मैं तुम पर अपनी धौंस जमा सकता हूं और उस पर नहीं—मैं सौगंध खाता हूं, यह बात नहीं है, बिलकुल नहीं! और तुम कभी यह मत सोचना कि वह तुमसे अधिक चतुर और समझदार है. वह कैंची की तरह जबान जरूर चलाना जानती है लेकिन. . . ओह, उसका जिक्र अब बंद करो! तुम मुझे मिल गयी हो! मेरा नया जीवन आज से शुरू हुआ!" □

स्विस कहानी

वहमी

•हरमन हेस

तब क्या होता है जब पिता और पुत्र तथा मां और बेटी जिंदगी के एक ही मोड़ पर आकर एक दूसरे के लिए मुसीबत बन खड़े होते हैं! . . . जिंदगी के एक 'शापित' मंजर से पहचान कराती दिल और दुनिया की अछूती दास्तान—

मार्टिन सिड ने अपने पिता की स्टडी के दरवाज पर दस्तक दी. तत्काल एक गुर्राहट उभरी और उसके पिता की आवाज आयी, "अंदर आ जाओ!"

आम तौर पर मार्टिन अपने पिता के आराम या अध्ययन में हस्तक्षेप नहीं करता था. उसका पिता किताबों का कीड़ा था और उसे यह बात बिलकुल पसंद नहीं थी कि कोई उसे अध्ययन के समय परेशान करे, किंतु आज समस्या दूसरी ही थी. कर्नल टाउन सिड ने नौकर को भेजकर उसे बुलाया था, क्योंकि वह उससे किसी महत्वपूर्ण मामले पर बातचीत करना चाहता था.

"आओ मार्टिन!" कर्नल सिड ने कहा, "बैठ जाओ!" उसने एक कुर्सी की ओर संकेत किया और मार्टिन चुपचाप कुर्सी पर बैठकर जिज्ञासु दृष्टि से अपने पिता की ओर देखने लगा. उसके चेहरे से प्रकट होता था कि वह इस प्रकार बुलाये जाने पर परेशान है.

"कहिए डैडी!" मार्टिन ने अंततः कहा.

मार्टिन सोच रहा था कि कोई विशेष बात अवश्य है जो उसके पिता ने उसे बुलाया है. वह अभी किसी निष्कर्ष पर न पहुंच सका था कि कर्नल की आवाज उसके कानों से टकरायी, "मैं तुमसे एक महत्वपूर्ण मामले पर बातचीत करना चाहता हूं." मार्टिन की बायीं आंख की पलक जिज्ञासु अंदाज में कमान का रूप धारण कर गयी. वह मन ही मन सोच रहा था कि गत कई दिनों के अंतराल में उससे ऐसी कौन-सी गलती हुई है, जो इस समय सामने आने वाली है.

"तुम इन दिनों स्नेडरा मेक्स टेड से बहुत मिलते रहे हो!" कर्नल की आवाज अधिकारपूर्ण थी.

"जी हां! वह. . . वास्तव में. . ." मार्टिन ने स्वीकार किया, "पर वह तो एक ठीक-ठाक लड़की है!"

"ठीक-ठाक से तुम्हारा क्या मतलब है?" कर्नल ने पूछा.

"मेरा मतलब है, वह अच्छी लड़की है. वह मॉडलिंग नहीं करती, शो-गर्ल नहीं है. इसके अतिरिक्त. . . इस प्रकार की कोई अन्य खराबी भी उसमें नहीं है."

"शटअप!" कर्नल गुर्राया, "यह सब बातें मुझे भी पता हैं कि वह ऐसी लड़की नहीं है, क्या मैं उसे या उसकी मां को अच्छी तरह नहीं जानता? जो कुछ मैं कहना चाहता हूं, वह यह है कि तुम कुछ समय से उस लड़की के साथ बहुत अधिक दिखायी दे रहे हो!"

"जी हां!" मार्टिन ने कहा, "मैं उसके बहुत समीप

रहा हूं, पर अन्य भी बहुत-सी लड़कियां मेरे आस पास मौजूद हैं डैडी!"

"मुझे अन्य लड़कियों में कोई दिलचस्पी नहीं है." कर्नल का स्वर अधिक कठोर हो गया, "मैं केवल तुम से यह पता करना चाहता हूं कि क्या तुम स्नेडरा से प्रेम करते हो?"

"मैं इस संबंध में कुछ नहीं कह सकता!" मार्टिन ने गुद्दी सहलायी और सिर झुकाकर कहा.

"क्या वह तुमसे प्रेम करती है?" कर्नल ने पता करना चाहा.

"उसने अब तो तक ऐसी कोई बात नहीं कही है."

"इन सब बातों को मस्तिष्क से झटक दो." कर्नल का मूड खराबी की चरम सीमा तक पहुंच गया, "क्या तुम दोनों में चुंबन-आलिंगन होता रहा है या इस प्रकार की अन्य बातें?"

"आखिर इन बातों से आपका क्या मतलब है? क्या आप मेरी और स्नेडरा की शादी करना चाहते हैं? मैं जानता हूं कि वह एक अच्छी लड़की है. वह साफ-सुथरी और समझदार लड़की है. इसके अतिरिक्त वह एक ऊंचे परिवार से संबंध रखती है और. . ."

"मैं तुम्हारी शादी के लिए प्रयत्न कर रहा हूं. इसके प्रतिकूल मैं यह परामर्श देना चाहता हूं कि स्नेडरा से शादी करना मूर्खता है, पागलपन है."

"वह क्यों डैडी?" मार्टिन ने विस्मय से पिता की ओर देखा.

"एक शाप का चक्कर है!" कर्नल ने कहा.

"शाप?" मार्टिन ने विस्मय से पलकें झपकायीं.

"आज से दो सौ वर्ष पूर्व टाउन सिड परिवार का एक नवयुवक स्नेडरा के परिवार की एक लड़की के प्रेम में फंस गया था. उन्होंने सभी के विरोध के बावजूद शादी कर ली. बाद में स्थिति खराब हो गयी. लड़के ने विष खाकर आत्म-हत्या कर ली थी. उसने मृत्यु-शैया पर यह शाप दिया कि यदि हमारे परिवार के किसी नवयुवक ने स्नेडरा परिवार की किसी लड़की से शादी की, तो उनका गृहस्थ जीवन कटु हो जायेगा. इस संबंध में एक उदाहरण मिसेज मेक्स टेड से मुझे मिल चुका है."

"देखिए डैडी!" मार्टिन हाथ उठाकर बोला, "मैं जानता हूं कि कई वर्ष तक आप पुरातत्व विशेषज्ञ रहे हैं, पर मुझे आशा है कि आप इस प्रकार की गलत धारणाओं पर विश्वास नहीं रखते होंगे. क्या मैं ठीक कह रहा हूं डैडी?"

"यदि तुम चाहो, तो इसे वहम भी कह सकते हो, पर अतीत में ऐसा हो चुका है. वह लड़का बेहद असहायावस्था में मौत का शिकार हुआ था. इसके अतिरिक्त दुलहिन एक महीने के अंदर-अंदर मर गयी थी. संभवतः उसे किसी घोड़े ने कुचल दिया था. इसलिए मैं इस मामले में अपनी भावनाओं को स्पष्ट रूप में प्रकट कर देना चाहता हूं." कर्नल ने गहरी गंभीरता से कहा.

"और वे भावनाएं क्या है डैडी?"

"तुम्हें इस लड़की स्नेडरा से मिलना-जुलना छोड़ देना चाहिए. यदि तुम उसे बहुत अधिक पसंद करने लगे, तो संभव है, तुम्हारे मस्तिष्क में उससे शादी का उन्माद समा जाये. ऐसा किसी भी अवस्था में नहीं होना चाहिए. मैं कठोरता से इस बात का विरोध करूंगा."

"लेकिन यह एक अजीब बात है डैडी कि स्नेडरा की मां का खयाल है कि मैं उसकी बेटी के लिए उपयुक्त लड़का नहीं हूं. वह अपनी बेटी से भी यह बात कह चुकी है, लेकिन मैं हैरान हूं कि. . ." मार्टिन ने मुसकरा कर अपना वाक्य अधूरा छोड़ दिया.

"क्या हैरानी है?" कर्नल गुर्राया.

"इसका साफ मतलब है कि स्नेडरा मेरे बारे में अपनी मां से विचार प्रकट कर चुकी है. यदि ऐसा न होता, तो उसकी मां को इतनी अजीब बात कहने की जरूरत क्यों पेश आती?" मार्टिन ने छत को घूरते हुए उत्तर दिया. उसके होठों पर अब तक मुसकराहट थी.

"खैर, मैं इस शाप का प्रभाव इस परिवार पर देखता चला आया हूं. इसलिए मैं गंभीरता से सोच रहा हूं कि तुम्हें इस लड़की से दूर रहने का निर्देश दे दूं. मेरी यह बात हृदयंगम कर लो कि यह शादी हरगिज नहीं हो सकती." यह कहते हुए कर्नल की त्यौरियां चढ़ गयीं.

"आपका मतलब है कि मैं स्नेडरा से बिलकुल संबंध-विच्छेद कर लूं?"

"मैं यह बात तुम्हारी इच्छा पर छोड़ रहा हूं," कर्नल ने गहरी गंभीरता से कहा, "मैं केवल यह चाहता हूं कि इस लड़की के बारे में गंभीरता मत अपनाना, नहीं तो मैं बहुत नाराज हो जाऊंगा. इस संबंध में तुम्हें मेरी ओर से किसी प्रकार की सहायता की आशा नहीं रखनी चाहिए."

मार्टिन ने एक लंबी सांस ली और कहा, "बहुत अच्छा, डैडी!"

"तुम अब जा सकते हो." कर्नल ने कहा, "सावधान रहना!"

मार्टिन पुस्तकालय से बाहर निकला और कुछ देर तक चुपचाप खड़ा सोचता रहा. उसके बाद वह चिंतातुर अंदाज में अपने कमरे की ओर बढ़ गया. कुछ देर बाद उसने रिसीवर उठाया और स्नेडरा का नंबर मिलाया.

दूसरी ओर से स्नेडरा की मां ने कॉल रिसीव की.

▣ **हरमन हेस**

जन्म : सन् 1877.

दो बार राष्ट्रीयता बदलकर स्विस नागरिक बन गये. उपन्यास 'पीटर कामेन जिंड' लिखने के बाद साहित्य को आजीविका बना लेने वाले इस लेखक को सन् 1946 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया. अपने देश में यह पुरस्कार पानेवाले ये दूसरे व्यक्ति रहे.

संस्मरण

मार्गदर्शक

▣ हरमन हेस

उन दिनों मैं दस साल का था. जिस परिवार में मेरा जन्म हुआ था, वह बहुत ही धार्मिक और पुरानी मान्यताओं को मानने वाला था. उसके लिए प्रतिदिन नियमित रूप से गिरजे जाना सबसे महत्वपूर्ण काम था.

ऐसे परिवार में पलकर भी मैं श्रद्धावान नहीं था. मेरा मन उन मान्यताओं के प्रति हमेशा विद्रोही हो उठता था. मैं सोचता कि ईश्वर जब हममें विद्यमान है और हर काम उसकी मर्जी से होता है, तो वह हमारे सिर्फ अच्छे कामों के लिए ही उत्तरदायी क्यों है? अच्छे-बुरे दोनों को ही ईश्वर का काम मानना चाहिये. घर में एक-दो मौकों पर मैंने अपने ये विचार प्रकट किये, तो डांट ही पड़ी.

एक दिन पिताजी के एक दोस्त घर आये. बातों के दौरान मेरा जिक्र होने पर पिताजी ने उन्हें मेरे 'विचित्र' विचारों के बारे में बताया. सुनकर पिताजी के दोस्त को बिल्कुल बुरा नहीं लगा. बल्कि उन्होंने बड़े प्यार से मुझे अपने पास बुलाकर कहा, "तुम्हारा सोचना ठीक है, बेटा! सचमुच ईश्वर अच्छे-बुरे, दोनों के ही लिए उत्तरदायी है. लेकिन यह अच्छा या बुरा क्या है? जिसे मन अच्छा या बुरा कहे, वही न?"

मैंने 'हां' में सिर हिलाया, तो वे बड़े सहज भाव से मुस्कराकर बोले, "तो फिर तुम्हारा मन जो कहे, वही करो. गिरजे जाओ या न जाओ, पूजा-पाठ करो या न करो, लेकिन मन जो कहे, उसे करने के पहले यह पूरी तरह समझ लो कि वह क्या कहता है!" □

प्रस्तुति : सुखबीर

मार्टिन जल्दी से बोला, "क्या स्नेडरा बाहर गयी हुई है, मिसेज मेक्स टेड?"

"मुझे खेद है कि तुम्हारा अनुमान ठीक है." मिसेज मेक्स टेड ने बेहद रूखे स्वर में कहा और बातचीत का सिलसिला काट दिया. मार्टिन चुपचाप खड़ा फोन को घूरता रहा. फिर उसने भी रिसीवर रख दिया. कुछ देर बाद उसने अपना हैट उठाया और तेजी से सीढ़ियां उतरता हुआ नीचे आया और स्नेडरा के घर की ओर चल दिया. वह इस मामले को साफ करना चाहता था. उसे विस्मय था कि इन बड़ों के दिमाग में न जाने कहां से वहम बैठ गया है..

अभी स्नेडरा के घर से आधे रास्ते में था कि रुक गया. सामने से तेज-तेज चलती हुई एक लड़की आ रही थी. यह लड़की स्नेडरा ही थी. वह निकट आयी तो सीधे उसकी बांहों में समा गयी. स्नेडरा ने अस्त-व्यस्त सांसों के बीच पूछा, "क्या अभी कुछ देर पहले फोन पर तुम्हीं मम्मी से बात कर रहे थे?"

"हां, मैंने ही फोन किया था!"

"मेरा भी यही खयाल था. मम्मी टाल रही थीं. पर मेरा अनुमान था कि दूसरी ओर से तुम ही बोल रहे हो. मैं इस समय यही पता करने के लिए तुम्हारे घर जा रही थी."

"सुनो स्नेडी!" मार्टिन ने प्रेम से कहा, "आखिर तुम्हारी मां को यह हरकत करने की क्या जरूरत थी! आखिर मुझसे क्या गलती हुई है?"

"कम से कम मेरी जानकारी में तो ऐसी कोई बात नहीं है." स्नेडरा ने कहा, "मेरा खयाल है, यह सब उसी शाप का सिलसिला है. मम्मी को भी उसके बारे में अचानक ही कहीं से पता चला है. क्या तुम इस श्राप के बारे में कुछ जानते हो?"

"हां! मुझे पता है!" मार्टिन ने कहा, "दुर्भाग्य से मैं अभी-अभी डैडी के साथ इसी विषय पर बातचीत करके आया हूं. वह भी इस वहम के शिकार हैं. वह पुरातत्व विशेषज्ञ रह चुके हैं."

"बिलकुल यही बात मेरी मम्मी भी कहती हैं." स्नेडरा ने कहा, "वह रहस्यपूर्ण विद्याओं में रुचि रखती हैं. ज्योतिष विद्या और अशुभ नक्षत्रों आदि पर उन्हें बहुत विश्वास है."

"मेरा भी यही खयाल है," मार्टिन ने विवशता से कहा, "आओ, कहीं बैठकर चाय पियें."

▣

दोनों एक कैफे में जा बैठे. चाय की प्यालियों में चमचा हिलाते हुए वे दोनों गहरी सोच में डूबे हुए थे.

"मुझे आशा है कि कम से कम तुम इस वहम को कोई विशेष महत्व नहीं दे रही हो." कुछ देर बाद मार्टिन ने स्नेडरा को संबोधित करते हुए पूछा. स्नेडरा ने जल्दी से नजर उठाकर मार्टिन की ओर देखा.

"मेरे बारे में यह खयाल तुम्हारे मस्तिष्क में कैसे आया?" स्नेडरा ने रूखेपन से कहा, "मैं तो इन बातों को सरासर बकवास समझती हूं."

"खैर!" मार्टिन ने एक लंबी सांस ली, "जहां तक मेरा खयाल है, तुम्हारी मां मुझे एक चंचल नवयुवक समझती है. ठीक है न?" स्नेडरा ने उसकी ओर देखा. उसकी आंखों में असीम प्रेम की भावनाएं करवटें ले रही थीं.

"नहीं मार्टिन! मैंने इस बारे में कभी नहीं सोचा, पर कोई महत्वपूर्ण निश्चय करने से पहले तुम्हें चाहिए कि कोई कारनामा दिखाकर यह यकीन दिला दो कि तुम कोई नाकारा लड़के नहीं हो."

"ओह, तो मानो तुम मेरे बारे में कभी गलतफहमी का शिकार नहीं हुई!" मार्टिन ने निश्चिंतता की सांस ली, "हमारे घर में तो मेरे डैडी मुझसे ऐसा व्यवहार करते हैं, जैसे मैं उनका बेटा नहीं, बल्कि उनका कोई जूनियर अफसर हूं. वह सदा हुक्म देने के आदी रहे हैं."

"क्या तुम्हारा अपना दिमाग काम नहीं करता?" स्नेडरा ने बुरा-सा मुंह बनाया.

मार्टिन ने सीधे स्नेडरा की आंखों में झांका और उसकी नजर कुछ देर तक वहीं जमी रही.

"तुम ठीक कहती हो! मेरा अपना दिमाग मौजूद है. और मैं सदा उसका ही उपयोग करने का आदी रहा हूं. मैं सोच रहा हूं स्नैंडी. . .कि क्या तुम मुझ से शादी करोगी?"

स्नेडरा ने आश्चर्य से उसकी ओर देखा. उसकी आंखें सामान्य से अधिक फैली हुई थीं.

"यह इस बात पर निर्भर है मार्टिन कि क्या तुम सच-मुच मुझसे शादी करना चाहते हो? कहीं ऐसा तो नहीं कि कर्नल और मेरी मम्मी की बात को गलत सिद्ध करने के लिए ही शादी का पक्का इरादा कर बैठे हो?" स्नेडरा बोली.

"फिलहाल तो तुम इन दोनों ही बातों को सामने रख सकती हो," मार्टिन ने मुसकरा कर कहा, "मेरी मुलाकात बहुत-सी लड़कियों से रही है, पर उनकी स्थिति मेरी दृष्टि में इतना महत्व नहीं रखती. खैर, मैं तुमसे बहुत अधिक प्रभावित हूं स्नेडी!"

यह कहकर मार्टिन कुछ देर चुपचाप सोचता रहा. फिर उसने कहा, "तुम शायद इस बात पर यकीन न करो, पर यह सत्य है, तुमसे शादी की प्रार्थना करने का विचार पहले भी कई बार मेरे मस्तिष्क में आ चुका है. मैंने अपने इस विचार को प्रकट नहीं किया, क्योंकि मैं फिलहाल स्वतंत्र जीवन व्यतीत करना चाहता था. . . खैर, मुझे आशा है कि तुम मेरे दिमाग में यह विचार अधिक दृढ़ कर सकती हो."

"यदि तुम मुझसे पूछो, तो मैं तुमसे यह आशा कर रही हूं कि तुम मेरे इरादे को दृढ़ बनाने में मेरी मदद करोगे."

▣

मार्टिन के जाते ही कर्नल भी सीधा स्नेडरा के घर पहुंचा. उसकी मां ने कर्नल का गरिमापूर्वक स्वागत किया वे दोनों बैठक में जा बैठे.

"मैंने आज लड़के को हतोत्साहित किया है!" कर्नल ने कहकहा मारकर कहा, "मुझे यकीन है कि वह अब तुम्हारे घर की ओर नहीं आयेगा."

"लेकिन कर्नल!" मिसेज मेक्स टेड ने गंभीरता से कहा, "हम पारिवारिक परंपराओं के विरुद्ध एक-दूसरे को चाहते हैं, और इस वहम को गलत सिद्ध करना चाहते हैं, जो एक अवधि से दोनों परिवारों में दीवार बना हुआ है. मेरा विचार है, हमें अब शादी करने में देर नहीं करनी चाहिए."

"तुम्हारा विचार ठीक है. मैं कल ही एक दावत में शादी की घोषणा कर दूंगा." कर्नल ने कहा और विजयपूर्ण अंदाज में बायीं मूंछ को बल देने लगा. उसने प्रेम से मिसेज मेक्स का हाथ थाम लिया और मिसेज मेक्स टेड, जिसके पति का निधन हुए छह वर्ष हो गये थे, उसकी बांहों में गिर गयी. □

अनुवाद : सुरजीत

हरमन हेस : बकलम खुद

"मैं काल्व ब्लैक फारेस्ट में पैदा हुआ था. मेरा खानदान प्रोटेस्टेंट धर्मावलंबी था और मेरे संबंधी उपदेशक, पादरी, चिकित्सक और मिशनरी थे, और चूंकि मेरा खानदान कई राष्ट्रों का मिश्रण था, इस कारण मुझमें राष्ट्रीय भावना कुछ कम ही थी. मैंने दो बार अपनी राष्ट्रीयता बदली है, और आज मैं स्विस नागरिक हूं. मैं स्विस लोगों को अर्ध-देवता न समझते हुए अपने राजनीतिक स्टेट का पुजारी और उपासक हूं. मेरे स्कूल के दिन और युवावस्था जर्मनी और स्विटजरलैंड में विभाजित थे, और सन् 1912 ई. से मैं निरंतर स्विटजरलैंड में रहता आया हूं.

अपनी युवावस्था में मैं बहुत से देशों का भ्रमण कर चुका हूं. सन 1911 ई. में मैं भारतवर्ष में था, और इस प्रकार मैंने अपने मिशनरी पिता और पितामह की प्राचीन रीति को आगे बढ़ाया है. मेरे पितामह को भारत के विषय में धुरंधर विद्वान समझा जाता था. प्राचीन हिंदुओं तथा प्राचीन चीनियों के अध्ययन का मेरे ऊपर उतना ही प्रभाव पड़ा जितना कि निर्मल ईसाई मत का जो कि मेरे माता-पिता के घर में छाया रहता था. मेरा राजनीतिक मत लोकतंत्रवादी का मत है और मेरा विश्व-दृष्टिकोण एक व्यक्तिवादी का. जिस वस्तु ने मेरे संपूर्ण जीवन को घेर रखा है, मुझे आकर्षित किया है और वास्तव में बनाया है, वह सामाजिक प्रश्न नहीं थे, वरन एक व्यक्ति के प्रश्न थे. नये इतिहास के व्यक्तित्व को बहुमत के सुख के नीचे दबाने से मैं बहुत घृणा करता हूं.

मेरी पुस्तकें, जिनमें कई पूर्णतः गीता-सम्मत हैं, बिना किसी ध्येय या उद्देश्य के लिखी गयी हैं. अपनी पुस्तकों द्वारा मेरा संपर्क अपने नवयुवक पाठकों से हो गया है. . और मैं उनका सलाहकार बन गया हूं.

मेरी बहुत-सी पुस्तकें स्कैंडिनेवियन और स्लैविक भाषा में, कई जापानी में और कुछ फ्रांसीसी तथा अंग्रेजी में अनूदित हो चुकी हैं. बागवानी और पानी के रंगों से चित्र बनाना मेरे शौक हैं. सन् 1919 ई. से मैं स्विटजरलैंड के मोंटानोला नामक शहर में रहा हूं. मैं आठ वर्ष से एक कविता लिख रहा हूं. □

ईस्टर शोभायात्रा

सोल्जेनित्सिन

रूसी कहानी

घंटी बजने से आधा घंटा पहले ईसा के रूप परिवर्तन वाले पितृसत्तात्मक गिरजाघर के सामने का अहाता ऐसा खुशनुमा दिखायी देता है जैसे सुदूर स्थित औद्योगिक बस्ती में शनिवार की रात को मनोरंजन कक्ष में होता हुआ किल्लोल. चटख स्कार्फों और स्की पैंटों को डाटे हुए (यह सच है कि कुछ ने स्कर्ट पहन रखे हैं) लड़कियां तीन-तीन और चार-चार की टोलियों में ठिठोली करती इधर उधर मंडरा रही हैं. वे गिरजाघर में घुसने के लिए धकापेल मचा रही हैं, लेकिन पोर्च में बहुत भीड़भाड़ है. चूंकि बूढ़ी औरतें शाम को जल्दी आकर अपनी जगहों पर जम गयी हैं. लिहाजा लड़कियों ने दरवाजे से ही उन्हें बुरा-भला कहना शुरू कर दिया है.

भारी भरकम मजबूत देह वाले से लेकर नाजुक कमजोर देह वाले सभी लड़कों के चेहरों पर वही दर्प झलक रहा है. इनमें से अमूमन सभी ने टोपियां पहन रखी हैं और यदि इनमें से कुछ के सिर नंगे हैं तो इसलिए कि वे पाक जमीन पर हैं. हर चौथा शराब पी रहा है और हर दसवां शराब पिये हुए है और उनमें से आधे धूम्रपान कर रहे हैं—अत्यंत घिनौने ढंग से. सिगरेटें उनके निचले ओठों से चिपकी हुई हैं. वहां कोई लोबान की महक नहीं है मगर इसके एवज में सिगरेटी धुएं के भूरे नीले छल्ले कब्रिस्तान के जगमगाते विद्युत प्रकाश के तले घने मंडराते बादलों में ईस्टर आकाश की ओर ऊपर उठ रहे हैं. वे लोग डामर सड़क पर थूक रहे हैं. चुहलबाजी में एक दूसरे को धकिया रहे हैं और जोर-जोर से सीटियां बजा रहे हैं. कुछ अश्लील भाषा का इस्तेमाल कर रहे हैं और एक झुंड ट्रांजिस्टर के संगीत पर थिरक रहा है. उनमें से कुछ अपनी प्रेमिकाओं को चूम रहे हैं. लड़के अपने आसपास ऐसे खूंखार निगाहों से घूर रहे हैं मानो किसी भी क्षण चाकू बाहर निकल आयेंगे. यदि कहीं एक बार उन्होंने चाकू निकालकर एक दूसरे पर चमकाना शुरू किया तो वे उन्हें बड़ी सरलता से धर्मसंघ के सदस्यों की ओर मोड़ सकते हैं.

क्या वजह है कि शोभा यात्रा में आये ज्यादातर नौजवान अपने इंद-गिर्द खूंखार निगाहों से घूरने लगते हैं. . . और कर्मकांडों में यकीन रखने वाले बुजुर्गों से लेकर गिरजे के वार्डेन तक, सभी,उनसे खौफ खाये रहते हैं?

बहरहाल चाकू बाहर नहीं निकले क्योंकि नजदीक ही तीन या चार पुलिस वाले हर चीज पर नजर रखने के लिए ऊपर-नीचे घूम रहे हैं. लड़के भी गाली-गलौज तेज आवाज में नहीं कर रहे हैं बल्कि यह उनकी आम बातचीत के एक हिस्से की तरह है. लिहाजा पुलिस वाले भांप नहीं पाये कि वे कानून भंग कर रहे हैं और वे उभरती पीढ़ी पर सौहार्दता से हंस रहे हैं. और वैसे भी पुलिस उन लोगों के मुंह से टोपियां हटाने से रही चूंकि यह एक सार्वजनिक जगह है और नास्तिकों के अधिकारों की रक्षा की व्यवस्था संविधान में की गयी है.

कब्रिस्तान के बाड़े और गिरजाघर की दीवारों के करीब धक्कम-धुक्का करते हुए नास्तिक लोग प्रतिरोध करने की हिम्मत तक नहीं कर सकते हैं. सिर्फ चारों ओर नजर दौड़ाते हैं, इस आशंका में कि कहीं कोई उन्हें चाकू न भोंक दे या उनकी घड़ियों पर जबरन ऊपर से हाथ रखकर ढक न दे जिसे उन्हें यीशु के पुनर्जन्म से अंतिम क्षण पहले देखने की जरूरत होती है. यहां, गिरजाघर के बाहर खीसें निपोरती, घुमड़ती भीड़ की संख्या रूढ़िवादियों से अधिक है जो कि तातार के शासनकाल से भी ज्यादा त्रस्त और पीड़ित है.

ये नौजवान कानून भंग नहीं कर रहे हैं. हालांकि वे हिंसा कर रहे हैं जो रक्तहीन है. डाकुओं की तरह कुटिल टेढ़े ओंठ, उनकी निर्लज्ज बातचीत, उनके हंसी ठहाके, उनकी चोंचलेबाजी और बेहूदे मजाक, उनका धूम्रपान करना और

थूकना. ये सब यीशु की भोगी हुई यंत्रणा के प्रतिकूल है जिसे कुछ गज दूर पर वे लोग मना रहे हैं. इन घिनौने उठाईगीरों के दर्प और उपहासात्मक रवैये से ये सब बातें जाहिर होती हैं, चूंकि वे लोग ये देखने आये थे कि कैसे अभी भी पुराने लोग अपने पुरखों के कर्मकांडों को करते हैं.

आस्तिकों में मुझे एक या दो यहूदी चेहरों की झलक दिखायी देती है. अपने चारों ओर चौकन्नी आंखों से देखते हुए वे भी ईस्टर शोभा यात्रा का इंतजार कर रहे हैं. हम सभी यहूदियों को कोसते हैं. वे चिरंतन उपद्रवी हैं. लेकिन अपने गिरेबान में भी झांक कर देखना भी उचित होगा कि हमने इस दौरान किस प्रकार के रूसियों की नस्ल तैयार की है. ये चौथे दशक के लड़ाकू नास्तिक नहीं हैं जो लोगों के हाथों से ईस्टर केक छीन लेते थे, हा-हा हू-हू करते, नाचते और उछलते-फांदते थे और राक्षसी प्रदर्शन करते थे. यह पीढ़ी मात्र आलसी और विधर्मी है. टेलीविजन पर आइस हाकी का सत्र खत्म हो गया है. फुटबाल सत्र अभी शुरू नहीं हुआ है और घनघोर ऊब उन्हें गिरजाघर खींच लाती है. वे गिरजाघर जाने वालों को इस तरह धक्का देते हैं जैसे भूसे का बोरा. गिरजाघर के व्यावसायीकरण के लिए वे उसे कोसते हैं, लेकिन कुछ कारणों से वे मोमबत्तियां खरीदते भी हैं.

एक विचित्र बात है. वे सभी बाहरी आदमी हैं फिर भी वे एक दूसरे को जानते हैं और उनके पहले नाम से. वे इतने अच्छे दोस्त कैसे हैं? क्या वे सभी एक ही कारखाने से आये हैं?

▣

हमारे सिरों के ऊपर घंटी बजती है लेकिन इसमें कोई न कोई चीज मिथ्या अवश्य है. घंटी की आवाज गहरी और सुरीली होने के बजाय बजते कनस्तर-सी है. बजती हुई घंटी शोभायात्रा के बारे में उद्घोषणा कर रही है. दरअसल, अब हलचल शुरू हुई है. हालांकि ये आस्तिक लोग नहीं हैं जो खलबली मचा रहे हैं बल्कि युवा लोगों की भीड़ है जो चीख-चिल्ला रही है. वे दो-दो और तीन-तीन की टोलियों में कब्रिस्तान के चारों ओर चक्कर लगा रहे हैं. वे हड़बड़ी मचा रहे हैं जबकि उन्हें यह भी पता नहीं है कि वे किसका इंतजार कर रहे हैं, कौन-से रास्ते जाना है और शोभायात्रा कहां से आयेगी. वे लाल रंग की ईस्टर मोमबत्तियों को जलाते हैं और उनसे अपनी सिगरेटें जलाने का प्रदर्शन करते हैं. भीड़ खूब जमा है मानो लोमड़ी का नाच शुरू होने की प्रतीक्षा कर रही हो. अब सिर्फ कसर बाकी है एक बीयर स्टाल की—उन कब्रों पर इन लंबे सिर वाले छोकरों (शुक्र है हमारी जाति का कद छोटा नहीं हुआ है) द्वारा सफेद आग बहाने की.

शोभायात्रा के आगे का हिस्सा पहले ही पोर्च पार कर चुका है और घंटियों की मद्धिम-मद्धिम धुन के साथ इस दिशा में मुड़ रहा है. दो नौसिखिए आगे-आगे चल रहे हैं जो कामरेडों से जितनी भी जगह बन सके छोड़ने को कह रहे हैं. उनके तीन कदम पीछे गिरजाघर की गंजी और बुर्जुग वार्डेन एक डंडे से लटकी भारी तिरछी काट वाली शीशे की लालटेन लिये हुए है. संतुलन बनाये रखने के लिए वह सतर्कता से लालटेन

लेखक से मुलाकात

सन् 1974 में रूस के नोबेल-पुरस्कार विजेता लेखक, सोल्जेनित्सिन को सरकार ने देश निकाला दे दिया था, तो उन्होंने वरमोंट (अमरीका) में बीस एकड़ जमीन लेकर और वहां अपना घर बनाकर बिलकुल एकांत में रहना शुरू किया था, ताकि वे निर्विघ्न होकर लिख-पढ़ सकें. एक तो नोबेल-पुरस्कार पाने के कारण और दूसरे अपने देश से जबरदस्ती निकाले जाने के कारण उनमें लोगों की इतनी ज्यादा दिलचस्पी थी कि वे रोज बहुत बड़ी संख्या में उन्हें देखने-मिलने का प्रयत्न किया करते थे. उनसे बचने के लिए सोल्जेनित्सिन ने अपनी जमीन के चारों ओर तारों की एक बाड़ लगा दी थी और बाहर फाटक पर एक ऐसा यंत्र लगाया था, जो किसी के आने पर उसे वापस चले जाने के लिए कहता.

आखिर कुछ महीने बीतने पर लोगों ने उनसे मिलने की आशा बिलकुल ही छोड़ दी थी.

एक दिन उस इलाके में कोई समारोह होने वाला था कि लोग सोल्जेनित्सिन को वहां आया देखकर हैरान रह गये. सोल्जेनित्सिन ने अधिकारियों से मंच पर जाकर कुछ कहने की इजाजत मांगी, तो वे खुशी से मान गये.

सोल्जेनित्सिन ने श्रोताओं को संबोधित करते हुए कहना शुरू किया :

"प्रिय साथियो और पड़ोसियो! मेरी बाड़ के कारण आपकी बर्फ-गाड़ियों और शिकारियों को दिक्कत होती है. मुझे इसका अफसोस है, और मैं आप लोगों से माफी चाहता हूं. यह बाड़ मुझे मजबूरन लगानी पड़ी थी. एकांत में काम करने के लिए इसके अलावा मेरे पास और कोई चारा भी नहीं था. . ."

वे काफी देर तक बोलते रहे.

लोगों को उनकी बातों में नम्रता और अपनापन महसूस हुआ और लगा कि रहस्यमय किस्म का वह विदेशी लेखक बड़े अच्छे स्वभाव का व्यक्ति है.

आखिर जब सोल्जेनित्सिन ने अपनी बात पूरी करके श्रोताओं से फिर माफी मांगी, तो सभी ने उनके सम्मान में खड़े होकर देर तक तालियां बजायीं.

प्रस्तुति : सुखबीर

सांस लेने की आजादी

■ सोल्जेनित्सिन

रात में बारिश हुई थी और अब काले-काले बादल आसमान में इधर से उधर घूम रहे हैं, कभी-कभी छिट-पुट बारिश की खूबसूरत छटा बिखेरते हुए.

मैं बौर आये सेब के पेड़ के नीचे खड़ा हूं और सांसें ले रहा हूं. सिर्फ सेब का यह पेड़ ही नहीं बल्कि इसके चारों ओर की घास भी आर्द्रता के कारण चमचमा रही है; हवा में व्याप्त इस सुगंध का वर्णन शब्द नहीं कर सकते. मैं बहुत गहरे श्वास खींच रहा हूं और सुवास मेरे भीतर तक उतर जाती है; आंखें खोलकर सांस लेता हूं, आंखें मूंदकर सांस लेता हूं—मैं नहीं बता सकता इनमें कौन-सा तरीका मुझे आनंद दे रहा है.

मेरा विश्वास है कि यह एकमात्र सर्वाधिक मूल्यवान स्वतंत्रता है जिसे कैद ने हमसे दूर कर दिया है, यह सांस लेने की आजादी है, जैसे मैं अब ले रहा हूं. इस संसार का कोई व्यंजन, कोई शराब यहां तक कि किसी औरत के चुंबन से भी मीठी मेरे लिए यह फूलों की सुगंध भरी मुग्ध कर देने वाली वायु है, जिसमें आर्द्रता के साथ-साथ ताजगी भी है.

यह कोई विशेष बात नहीं है कि यह छोटी-सी एक बगीची है जो कि चिड़ियाघर में लटके पिंजरों-सी पांच मंजिले मकानों के साथ बनी है. मैंने मोटर साइकिलों के इंजनों की आवाज, रेडियो की चिल्लपों, लाउडस्पीकरों की बुदबुदाहट सुनना बंद कर दिया है. जब तक बारिश के बाद किसी सेब के पेड़ के नीचे सांस लेने के लिए स्वच्छ वायु है तब तक हम खुद को शायद कुछ और अधिक जिंदा बचा सकते हैं. □

अनुवाद : राजकुमार गौतम

की ओर देखती रहती है और अगल-बगल बराबर आशंकित नजर दौड़ाती रहती है और यह तस्वीर के शुरू का हिस्सा है जिसे यदि मैं सिर्फ चित्रित कर सकूं तो चित्रित करना चाहूंगा. गिरजाघर के वार्डेन का भय यह है कि नये समाज के निर्माता उनके करीब आकर उन पर कूद न पड़ें और उन्हें पीट-पाट न डालें. दर्शक उनके भय को महसूस कर सकते हैं.

पैंट पहने, हाथ में मोमबत्तियां थामे हुए लड़कियां. कोटों के खुले बटन, ओठों से चिपकी हुई सिगरेटें और सिर पर टोपियां पहने हुए लड़के. कुछ अपरिपक्व, मंदबुद्धि, आत्म-विश्वास से रहित चेहरे और शेष सरल सहज विश्वास वाले चेहरे. तस्वीर में सबसे बड़ा हिस्सा यही होना चाहिए, इन्हीं लोगों से ठसाठस भरा. भव्य दृश्य को देखते हुए जो किसी भी कीमत पर अलग नहीं देखा जा सकता है. लालटेन के पीछे दो आदमी धार्मिक ध्वजा लिये हुए हैं और वे भी एक दूसरे से दूर-दूर चलने के बजाय भय से सट-सटकर चल रहे हैं.

इनके पीछे हाथों में मोटी-मोटी जलती हुई मोमबत्तियां लिये हुए दस औरतें हैं जो जोड़ा बनाए हुए हैं. तस्वीर में इनका स्थान भी जरूर होना चाहिये—चेहरों पर असांसारिक भाव लिए प्रौढ़ महिलाएं जिन पर यदि हमला हुआ तो वे मरने के लिए तैयार हैं. इन दस में से दो हमउम्र युवा लड़कियां हैं. लड़कों की भीड़ ने उन्हें घेर रखा है लेकिन उनके चेहरे पर कितनी पवित्रता और चमक है. वे दस औरतें सटकर चलती हुई, गाती हुई, ऐसी उदात्त लग रही हैं मानो उनके चारों ओर आसपास के लोग क्रास बना रहे हैं, प्रार्थना कर रहे हैं और प्रायश्चित के लिए अपने घुटनों के बल गिर रहे हैं.

और इस तरह वास्तविक शोभायात्रा शुरू होती है. भीड़ के दोनों तरफ एक हल्की-सी रोमांच की लहर दौड़ाती है.

महिलाओं के पीछे चमकीले चोगों में सात पुरुष हैं जो पुजारी और डीकन हैं. वे लंबे-लंबे डग भर रहे हैं और आपस में सिमटे हुए हैं. लिहाजा वे एक-दूसरे के रास्ते में आ जाते हैं और वहां पर इतनी भी जगह नहीं है कि अपनी धूपदानी हिला सकें या अपने लबादों के कोनों को उठाकर आशीष दे सकें. फिर भी यह वह शोभायात्रा है जिसमें यदि उसे भाग लेने से वंचित नहीं किया जाता तो संपूर्ण रूस के महाधर्माध्यक्ष को चलकर आना पड़ता और सेवा करनी पड़ती.

■

वह ठसाठस लोगों से भरा छोटा दल हड़बड़ी मचा रहा है और कुल मिलाकर यही शोभायात्रा है. और कुछ नहीं है. प्रत्यक्ष रूप से शोभायात्रा में कोई भी भक्त नहीं है यदि वहां रहे भी होंगे तो वे अब तक गिरजाघर को छोड़कर चले गये होंगे. कोई भी भक्त नहीं है लेकिन पीछे से शोहदों का एक झुंड उमड़ रहा है मानों वे गोदाम के टूटे हुए दरवाजे से घुसकर लूटपाट रहे हों, खाने के पैकेट चीरफाड़ रहे हों. सब धींगामुश्ती करते हुए अपना रास्ता बना रहे हैं. मगर किसलिए? वे अपने-आप तक को जानते नहीं हैं. वे पादरियों को केवल मूर्ख बनाकर देखने के लिए या केवल धकियाने के लिए धकिया रहे हैं. यह एक विलक्षण बात है. भक्तों रहित शोभायात्रा . क्रास न बनाते हुए लोग. एक धार्मिक शोभा-यात्रा में सिगरेट फूंकते हुए लोगों के सिर पर टोपियां और उनकी भीतरी जेब में रखे हुए उनके ट्रांजिस्टर.

एक बूढ़ी औरत क्रास बनाने के लिए मुड़ती है और दूसरी से कहती है, "यह साल बेहतर है, कोई उपद्रव नहीं हुआ है."

"हां, यह तो है. यह अच्छे सालों में से एक है."

इन लाखों लोगों को हमने पाल पोसकर बड़ा किया है, इनका क्या होगा? कहां है हमारे महान विचारकों की उद्-बोधन चेष्टाएं और प्रेरणादायक दृष्टि जो मार्गदर्शन करे? हम अपनी आने वाली पीढ़ी से भलाई की क्या आशा करें?

सच्चाई यह है कि एक दिन ये लोग मुड़ेंगे और हम सबको रौंद डालेंगे. जिन्होंने उन्हें ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित किया है वे उन्हें भी रौंद डालेंगे. □

अनुवाद : विनोद दास

अब्राहम लिंकन के देश में, उनकी मौत के सवा दो सौ साल बाद भी काले लोगों को मनुष्य क्यों नहीं माना जा रहा है? उन दो छोटे काले बच्चों को गोरे लोगों के स्कूल में प्रवेश मिलने से कौन-सी कयामत आ गयी थी कि पूरा न्यू आर्लियंस एक तूफान में घिर गया?

नीग्रो भी मनुष्य बनना चाहते हैं

अमरीकी रिपोर्ताज

• जॉन स्टेनबैक

सन् 1960 समाप्ति पर था. मैं टेक्सास में ही था. न्यू आर्लियन्स के एक स्कूल में छोटे-छोटे दो नीग्रो बच्चों के प्रवेश की अखबारों में खासी चर्चा थी. इन नन्हें काले कीड़ों के पीछे कानून की ताकत अमल में लायी जा रही थी—न्याय की तराजू और सत्ता की तलवार दोनों इन बच्चों के साथ थीं. और इनके विरुद्ध थे, भय और क्रोध के तीन सौ साल और इस परिवर्तनशील जगत में परिवर्तन का आतंक. अखबारों में मैं रोज इनके फोटो देखता था और टेलीविजन पर इस घटना की फिल्में आती रहती थीं. संवाददाता इस कहानी में इतनी रुचि इसलिए ले रहे थे कि अधेड़ उम्र की हट्टी-कट्टी औरतों का एक दल हर रोज वहां इकट्ठा हो जाता था और इन बच्चों पर आवाजकशी करता था, नारे लगाता था.

इतना तो मैं भी समझता था कि झगड़े की उस जगह तक गाड़ी ले जाना, खासकर 'रोसिनेंट', जिस पर न्यूयार्क की लाइसेंस प्लेटें थीं, खतरे से खाली न था. अभी कल ही तो वहां एक रिपोर्टर की पिटाई हुई थी और उसका कैमरा चूरमचूर कर दिया गया था. नस्ली भेदभाव के कट्ठर पक्षपाती तक इतिहास की अपनी इस घड़ी का न तो कोई रिकार्ड चाहते रखना हैं और न इसे संजोकर ही रखना चाहते हैं.

कस्बे के इस छोर पर ही मैंने पार्किंग की एक जगह पर गाड़ी खड़ी कर दी. गाड़ियों की देखभाल करनेवाला कर्मचारी मेरी खिड़की के पास आकर बोला, "भई वाह, मैंने सोचा आपके साथ अंदर कोई निग्गर है. भई वाह, यह तो कुत्ता है. मुझे इसका यह बड़ा-सा काला चेहरा दिखाई दिया तो मैंने सोचा यह कोई बड़ा-सा निग्गर है." न जाने कितनी बार मैंने यह वाक्य सुना होगा—'मैंने सोचा आपके साथ अंदर कोई निग्गर है.' यह एक अनोखा मजाक था—हमेशा ताजा. इसमें कभी 'नीग्रो' या 'निगरा' का प्रयोग नहीं होता था, हमेशा 'निग्गर' या 'निग्गह' कहा जाता था. यह शब्द बहुत ही महत्वपूर्ण मालूम होता था. यह उनके लिए एक तरह का रक्षा-मंत्र था, जिससे चिपके रहने जरूरी था, नहीं तो कोई ढांचा बिखर सकता था.

मैंने कुछ रुखाई से कहा, "इसका चेहरा साफ रहने पर नीला-भूरा दीखता है."

"मैंने कुछ ऐसे भी निग्गर देखे हैं, जो नीले-भूरे होते हैं, और वे साफ भी नहीं होते. आप न्यूयार्क से आये हैं, है न?"

मुझे लगा कि उसकी आवाज में अचानक सुबह की ठंडी हवा की सिहरन आ गयी है. मैंने कहा, "मैं मोटर में सफर कर रहा हूं. यहां एक-दो घंटे के लिए गाड़ी खड़ी करना चाहता हूं. क्या तुम मेरे लिए किसी टैक्सी की व्यवस्था कर सकते हो?"

"आपको एक बात बताऊं? मैं शर्त लगाकर कह सकता हूं कि आप उन नारे लगानेवाली औरतों को देखने जा रहे हैं."

"तुम्हारा खयाल ठीक है."

"देखिए, मुझे आशा है कि आप झंझट पैदा करने-वाले रिपोर्टर नहीं हैं."

"मैं सिर्फ उन्हें देखना चाहता हूं."

"भई वाह, आप जो देखने जा रहे हैं, वह वाकई एक चीज है. नारे लगानेवाली ये औरतें कमाल की हैं? जब वे नारे शुरू कर देती हैं तो आप महसूस करते हैं कि ऐसी चीज आपने पहले कभी नहीं सुनी थी."

मैंने जो टैक्सी ली, उसका ड्राइवर देखने में बिल्कुल पीला

▣ जॉन स्टेनबेक, जन्म 1902 कैलिफोर्निया में. नोबेल पुरस्कार 1962 में. इन्होंने 27 पुस्तकें लिखी हैं. पहली पुस्तक 'कप ऑव गोल्ड' 1929 में प्रकाशित हुई थी. इनकी 'ग्रेफ ऑव रैथ' नामक पुस्तक काफी विवादास्पद रही. इस पुस्तक के लिए इन्हें पुलित्जर पुरस्कार भी मिला, जो इन्होंने लौटा दिया.

लग रहा था और सर्दी के कारण सुकड़ा हुआ था. वह बोला, "मैं आपको उस जगह से बस दो ब्लाक पहले तक ही ले जाऊंगा. अपनी गाड़ी मैं तुड़वाना नहीं चाहता हूं."

"क्या वहां हालत इतनी खराब होती है?"

"होती नहीं है, पर हो सकती है. इतनी खराब भी हो हो सकती है."

"यह तमाशा कब शुरू होता है?"

उसने अपनी घड़ी देखी. "सर्दी जरा ज्यादा है, नहीं तो लोग दिन निकलते ही आने लगते हैं. अभी पंद्रह मिनट हैं. आप बस चल दीजिए. सब कुछ देख सकेंगे. कोई भी चीज छूटेगी नहीं, पर सर्दी जरा ज्यादा है."

मैंने अपने-आपको एक पुराने नीले जैकेट और ब्रिटिश नोसेना की अपनी कैप में छिपा रखा था. मैंने सोचा, रेस्तोरां में जैसे वेटर की तरफ किसी का ध्यान नहीं जाता, वैसे ही यहां बंदरगाह में किसी जहाजी की तरफ किसी का ध्यान नहीं जायेगा, लेकिन मेरे इस फार्मूले को आजमानेवाले हर आदमी को मैं पहले ही इस बात से होशियार कर देना चाहता हूं कि वह इसे बंदरगाह के अलावा और कहीं आजमाने की कोशिश न करे.

ड्राइवर ने पूछा, "आप कहां से आये हैं?" पर उसकी आवाज से जाहिर था कि उसकी इस बात में कतई दिलचस्पी नहीं थी.

"लिवरपूल." मैंने कहा.

"अच्छा, लिमे? तब ठीक है, आपसे कोई डर नहीं है. वो तो शैतान की औलाद, न्यूयार्क के यहूदी आकर झंझट पैदा करते हैं."

मुझे अपना झुकाव भीतर से ब्रिटेन की ओर तो लगा, पर लिवरपूल की ओर कतई नहीं लगा. मैंने कहा, "क्या—यहूदी? वे झंझट कैसे पैदा करते हैं?"

"वे बड़ी गड़बड़ करते हैं मिस्टर. इससे कैसे निपटा जाता है, हमें मालूम है. यहां सब ठीक चल रहा था और हर आदमी खुश था. मुझे खुद 'निग्गर' अच्छे लगते हैं, लेकिन शैतान की औलाद न्यूयार्क के वे यहूदी यहां आते हैं और निग्गर लोगों को भड़काते हैं. अगर वे वहां न्यूयार्क में ही रहें तो यहां कोई झंझट पैदा न हो. इसका सफाया करना ही होगा.

मैं टैक्सी से बाहर आ गया और उस तरफ पैदल जाने लगा. "बहुत नजदीक जाने की कोशिश मत करना, मिस्टर," वह पीछे से चिल्लाया, "सिर्फ तमाशा देखना, उसमें खुद मत उलझ जाना."

"शुक्रिया." मैंने जवाब दिया. मेरी जबान पर तो 'हजार बार शुक्रिया' भी आया था, पर मैंने वह कहा नहीं.

स्कूल की ओर चलने पर कुछ देर में ही मैं भीड़ के एक रेले के साथ बहने लगा. उसमें सभी गोरे थे और सभी उसी दिशा में जा रहे थे. वे ऐसी तेजी से चल रहे थे जैसे कि लोग काफी देर से जल रही किसी आग को देखने जाते हैं. सर्दी के मारे अपने कूल्हों को वे हाथ से थपथपा रहे थे या कोट के अंदर से सहला रहे थे. बहुतों ने अपने टोप के नीचे मफलर लपेटा हुआ था और अपने कान उससे पूरी तरह ढक रखे थे.

स्कूलवाली सड़क के इस पार पुलिस ने भीड़ को रोकने के लिए लकड़ी की बाड़ लगा रखी थी और कुछ सिपाही वहां आगे-पीछे गश्त कर रहे थे.

अचानक मुझे बड़े जोर का धक्का लगा और भीड़ में एक आवाज गूंज उठी: 'वह आ गयी. उसे रास्ता दो. . .आओ, आओ. पीछे हटो, उसे रास्ता दो. तुम कहां थीं? आज तो तुम्हें देरी हो गयी. तुम कहां थीं, नेली?"

नाम दरअसल नेली नहीं, कुछ और लिया गया था, पर वह अब मुझे याद नहीं आ रहा है. ठसाठस भीड़ में से रास्ता बनाती हुई वह मेरे काफी पास से गुजरी.

नेली का जोर-जोर से नारे लगाकर स्वागत किया गया. वहां इस तरह की कितनी औरतें थीं, मुझे नहीं मालूम. नारे लगानेवाली औरतों और उनके पीछे जमा भीड़ के बीच कोई निश्चित सीमा-रेखा नहीं थी. मैं सिर्फ यही देख सका कि कुछ लोग अखबार की कतरनों को आगे-पीछे एक-दूसरे को दे रहे थे और वे मजे ले-लेकर खिलखिलाते हुए पढ़ रहे थे.

तमाशा ठीक समय पर शुरू हो गया. साइरन की आवाज सुनाई दी. फिर मोटर-साइकिलों पर कुछ सिपाही आये. उसके बाद दो बड़ी काली कारें स्कूल के सामने आकर रुक गयीं. कारें काफी लंबे-चौड़े आदमियों से भरी हुई थीं, जिन्होंने फैल्ट के सुनहरे हैट पहने हुए थे. भीड़, ऐसा लगता था, जैसे दम साधे खड़ी हो. हरेक कार में से चार मार्शल बाहर निकले. फिर उन्होंने उन कारों में से कहीं से एक इतनी छोटी नीग्रो लड़की को बाहर निकाला जैसी कि आपने शायद ही कभी देखी हो. वह कलफ लगे सफेद और बुर्राक कपड़े, नये सफेद जूते पहने हुए थी और उसके पांव इतने छोटे थे कि वे करीब-करीब गोल लगते थे. उसका चेहरा और नन्हीं-नन्हीं टांगें इस सफेद वेश-भूषा में और भी काली लग रही थीं.

मार्शलों ने उस लड़की को जैसे ही पटरी के पास खड़ा किया, मुंह-चिढ़ाते लोगों की चीखों का शोर सारे वातावरण में गूंज गया. लड़की उस गुर्राती हुई भीड़ की तरफ नहीं देख रही थी, पर उसकी आंखों का जितना भाग एक तरफ से दिखाई पड़ता था, उससे वे आंखें एक डरी हुई हिरणी की आंखों जैसी लग रही थीं. मार्शलों ने उसे इस तरह घुमाया मानो वह एक गुड़िया हो, और यह विचित्र जुलूस चौड़े रास्ते पर स्कूल की तरफ बढ़ने लगा. लड़की उन मार्शलों के बीच में और भी पिद्दी जैसी लग रही थी. वे सभी खूब लंबे-चौड़े थे. तभी वह लड़की एक अजीब ढंग से उछली और मेरा खयाल है, मैं उसका कारण समझता हूं. मेरे खयाल से वह अपनी इस उम्र तक शायद दस कदम भी बिना उछले-कूदे नहीं चली होगी; लेकिन अब अपनी पहली छलांग के बीच में ही परिस्थिति की गंभीरता ने उसे नीचे दबा दिया और उसके नन्हें-नन्हें गोल पैर उन लंबे-चौड़े गार्डों के बीच में, न चाहते हुए भी नपे-तुले कदम रखने लगे. धीरे-धीरे वे लोग सीढ़ियां चढ़कर स्कूल में घुस गये.

अखबारों में यह भी छपा था कि जो फब्तियां कसी जाती हैं और बोलियां-ठोलियां मारी जाती हैं, वे बड़ी क्रूर और कभी-कभी तो गंदी तक होती हैं. वे ऐसी ही थीं, पर मुख्य आकर्षण वे नहीं थीं. भीड़ उस गोरे आदमी का इंतजार कर रही थी, जो अपने गोरे बच्चे को रोज इस स्कूल में लाने की हिम्मत दिखाता था. वही आदमी इस समय उस रास्ते पर, जहां पुलिस तैनात थी, चला आ रहा था. आदमी लंबा था, उसने हल्के रंग का सूट पहन रखा था और वह अपने भयभीत बच्चे को हाथ से पकड़े ला रहा था. उसका शरीर इस तरह तना हुआ था, जैसे कि कोई मजबूत तार का स्प्रिंग आखिरी सीमा तक कसा जा चुका हो और अब बस टूटने ही वाला हो. उसका चेहरा गंभीर और भूरे रंग का था और उसने अपनी आंखें जमीन पर अपने बिलकुल सामने जमा रखी थीं. अपने जबड़े उसने भींच रखे थे, जिससे उसके गाल की पेशियां बाहर को उभर आयी थीं. वह एक ऐसा व्यक्ति था, जो भयभीत होते हुए भी भय को अपने मनोबल से रोके हुए था, जैसे कि कोई बड़ा घुड़सवार किसी दहशत खाये घोड़े को काबू में लाकर मार्ग पर ले जाता है.

भीड़ में एक तीखी कर्कश ध्वनि गूंज उठी. नारे सम्मिलित कंठ से नहीं निकल रहे थे. औरतें बारी-बारी से चिल्ला रही थीं और हर नारे के अंत में भीड़ 'हू हू' करने, दहाड़ने और सीटियां बजाने लगती थी. यही वह चीज थी, जिसे देखने और सुनने को लोग वहां आते थे.

जो नारे ये औरतें लगाती थीं, उन्हें किसी भी अखबार ने छापा नहीं था. यह कहा जाता था कि वे अशिष्ट होते हैं, उनमें से कुछ तो अश्लील तक होते हैं. टेलीविजन पर आवाज की लाइन अस्पष्ट कर दी जाती थी या वह भीड़ के कोलाहल में डूब जाती थी, लेकिन अब मैंने वे नारे सुने—वे पाशविक, कुत्सित और घृणित थे. अपने लंबे और असुरक्षित जीवन में मैंने राक्षसी वृत्ति के मनुष्यों द्वारा उगली गयी इस तरह की गंदगी पहले भी देखी और सुनी है. फिर मुझे इतना धक्का क्यों लगा और मेरा मन पीड़ा और उदासी से क्यों भर गया?

भीड़ कुछ शांत हुई और एक दूसरी औरत ने नारे लगाने शुरू कर दिये. उसकी आवाज सांड की हुंकार की तरह गहरी, जोरदार और मोटी धारवाली थी, जैसी किसी सरकस के जोकर की होती है. उसके शब्द दोहराने की जरूरत नहीं है. शैली वही थी, केवल लय और लहजे में फर्क था. कोई भी आदमी जिसका थियेटर से जरा भी संपर्क रहा है, यह समझ सकता था कि ये नारे अपने आप जबान पर आनेवाले नहीं थे. ये गढ़े हुए, रटे हुए और खूब रिहर्सल किये हुए थे. दरअसल यह थियेटर ही था. मैं नारों को सुनती भीड़ के उत्सुक चेहरों को देखने लगा—वे थियेटर के दर्शकों के चेहरे थे. जब तालियां बजती थीं तो वे एक्टर के लिए ही बजती थीं.

तमाशा खत्म हुआ और दर्शकों की धारा वहां से सरकने लगी. दूसरा शो अब तब होगा, जब स्कूल की छुट्टी की घंटी बजेगी और उस नन्हें-से काले चेहरे को एक बार फिर आवाजकशी करनेवाली भीड़ का सामना करना पड़ेगा.

▣

मुझे समय का कतई ध्यान नहीं रहा, लेकिन सूरज जब सिर के ऊपर आकर कुछ आगे को सरक गया तो एक सज्जन उधर टहलते हुए आ निकले. हमने एक-दूसरे को नमस्कार किया. सुंदर वेश-भूषा में वे एक ढलती उम्र के आदमी थे. उनके नक्शे यूनानी थे, सफेद बाल हवा से ऊपर को उठे हुए थे और मूंछें सफेद और छंटी हुई थीं. मैंने उन्हें कॉफी का निमंत्रण दे दिया.

मेहमान इस काफी से बहुत ही संतुष्ट थे. प्लास्टिक के कप से अपने हाथ को सेंकते हुए वे बोले, "माफ कीजिए, आप लगते तो परदेसी हैं, फिर आपको कॉफी बनाने का यह तरीका कैसे मालूम है?"

"मैंने इसे बोर्बन स्ट्रीट पर दिग्गजों से सीखा था," मैंने

पुरस्कार पाकर लेखक रिटायर हो गये !

▣ स्टेनबेक

नोबेल-पुरस्कार मिलने पर शायद मेरा दिल ही जवाब दे जाये, हालांकि मुझे इस बात की परवाह नहीं है कि वह इतना बड़ा पुरस्कार है, लेकिन यह बात मुझे कहनी नहीं चाहिए, क्योंकि अभी वह मुझे मिला नहीं है. वैसे, मैं महसूस करता हूं कि वह पुरस्कार पाने के बाद लेखकों ने न तो श्रेष्ठ पुस्तकें लिखीं, न ही अपनी रचनाओं में कोई साहस ही दिखाया. पुरस्कार पाकर वे जैसे 'रिटायर' होकर बैठ गये. पता नहीं, इसका कारण क्या है. वे लेखक या तो अपना काम खत्म कर चुके थे या फिर पुरस्कार के तुल्य बनकर अपना साहस खो चुके थे. बढ़िया लेखन के लिए बहुत कठिन संघर्ष करना पड़ता है, जो अधिकांश लेखक नहीं कर सके या शायद पुरस्कार पाकर वे सम्माननीय बन गये थे, और एक लेखक सम्माननीय बनने का खतरा मोल नहीं ले सकता. . . यह बात अन्य सम्मानों और ऑनरेरी डिग्रियों के बारे में भी कही जा सकती है. सम्मानों की संख्या के बढ़ने से लेखक के सृजन का स्तर नीचे आने लगता है. शायद यही डर था कि मैंने डाक्टरेट की वे डिग्रियां नहीं लीं, जो विश्वविद्यालयों की ओर से प्रायः दी जाती हैं. शायद यही कारण है कि अकादमी के लिए चुने जाने के बाद भी मैं उससे दूर ही रहा हूं. और शायद इसीलिए मैंने पुलित्जर-पुरस्कार की रकम लौटा दी थी. □

जवाब दिया, "लेकिन उनके हिसाब से कॉफी जरा ज्यादा भुनी होती तो ठीक रहती और इसके साथ थोड़ी चिकोरी भी होनी चाहिए थी. खैर छोड़िये, नारे लगानेवाली औरतों के बारे में आप क्या सोचते हैं?"

"पता नहीं, कुछ पता नहीं. मेरी तो इसके बारे में सोचने की हिम्मत नहीं होती. और मैं इस बारे में क्यों सोचूं? मैं अब बूढ़ा हो चला हूं. दूसरों को चाहिए कि वे इसकी फिक्र करें."

"नीग्रो भी मनुष्य बनना चाहते हैं. क्या आप इसके खिलाफ हैं?"

"जी नहीं, भगवान आपका भला करे, लेकिन मनुष्य बनने के लिए उन्हें उनसे लड़ना होगा, जो मनुष्य बनने से ही संतुष्ट नहीं हैं."

"आपका मतलब यह है कि नीग्रो, चाहे उन्हें कुछ भी क्यों न मिल जाये, कभी संतुष्ट नहीं होंगे?"

"क्या आप हो जायेंगे? क्या आप किसी ऐसे आदमी को जानते हैं, जो संतुष्ट हो जायेगा."

"क्या आप उन्हें मनुष्य बनने देने में सहमत होंगे?"

"जब आप किसी प्राणी को जबर्दस्ती पशु की तरह रहने और काम करने को मजबूर करते हैं तो आप उसे अपने मन में पशु ही समझने लगते हैं. यदि ऐसा न हो तो उसके प्रति जागृत संवेदना आपको पागल बना दे. अपने मन में उसका एक बार वर्गीकरण कर लेने के बाद फिर आपकी भावनाओं को कोई ठेस नहीं पहुंचती." वे नदी की ओर एकटक देखने लगे. हवा के झोंके से उड़ते उनके बाल सफेद धुएं की तरह लग रहे थे. "और यदि आपके हृदय को उसमें साहस और क्रोध के मानवीय अवशेष मिलते हैं, जो कि मनुष्य में गुण माने जाते हैं तो आपको वह पशु खतरनाक लगने लगता है. और क्योंकि आपका हृदय उन्हें छिपाने लायक बुद्धि, सूझ-बूझ और योग्यता रखता है, इसलिए आप आतंक की स्थिति में रहते हैं. तब उसकी मनुष्य जैसी प्रवृत्तियों को आपको कुचलना पड़ता है और उसे अपनी जरूरत का पालतू पशु बनाना पड़ता है और यदि आप अपने बच्चे को शुरू से ही उस पशु के बारे में सब कुछ सिखा दें तो उसे आपकी तरह परेशानी नहीं होगी."

"मुझे बताया गया है कि पुराने जमाने का नीग्रो नाचता और गाता था और संतुष्ट रहता था."

"वह भाग भी जाता था. भगोड़े गुलामों के बारे में बने कानून इस बात का सबूत हैं कि ऐसी घटनाएं होती रहती थीं."

जब वे चले गये तो मेरा मन संगीत जैसी मधुरता से भर गया और यह ऐसा संगीत था, जो त्वचा में एक मीठी सिहरन पैदा कर रहा था.

▣

मैं उन दिनों मनहट्टन में एक छोटे-से पक्के मकान में रहता था. क्योंकि मेरी हालत उस समय कुछ अच्छी थी, इसलिए मैंने एक नीग्रो नौकर भी रखा था. सड़क के उस पार कोने में एक बार और रेस्तरां था. एक दिन सर्दियों में, झुटपुटे के वक्त, मैं अपनी खिड़की के पास खड़ा बाहर की ओर देख रहा था.

मुर्दा हाथ

▣ स्टेनबेक

सिपाही ने फौजी अस्पताल की वर्दी पहनी हुई है—लाल-सुर्ख रंग का ड्रेसिंग-गाऊन, पाजामा और स्लीपर. उसका चेहरा कुछ पीला पड़ गया है. अपनी मुड़ी हुई बायीं बांह को वह ऊपर उठाये रखता है और उसके बायें हाथ की उंगलियां काम नहीं करती हैं. उसके सामने मेज पर कुछ पुर्जे पड़े हैं, जिनसे वह कोई चीज बना रहा है.

"मैं अफ्रीका में जख्मी हुआ था," वह बताता है. "पेट में गोली लगी थी. पेट तो उन्होंने ठीक कर दिया है, पर," वह अपनी बायी बांह उठाता है, "यह ठीक नहीं हुई है. यह बुरी तरह से टूट गयी थी. काफी दिन तक इस पर पलस्तर लगा रहा." वह अपनी उंगलियों को धीरे-से हिलाता है. "अब यह उंगलियां महसूस नहीं करती हैं. इनको मैं मुट्ठी नहीं बांध सकता. यह हाथ जैसे मुर्दा बन गया है.

"यह चीजें जो सामने पड़ी हैं, इन्हें मैं ठीक से उठा नहीं सकता. यह मॉडल मैं दायें हाथ से ही बना रहा हूं. खुशकिस्मती कहिए कि मेरा दायां हाथ बच गया है. डाक्टर कहता है कि मैं इन उंगलियों से किसी चीज को पकड़ने का अभ्यास करता रहा, तो यह फिर से काम करने लगेंगी.

"कल एक अजीब बात हुई. मैं आपको वह सही जगह बताता हूं." वह पेंसिल लेता है और सामने पड़े मॉडल पर एक जगह निशान लगाता है. "हां, यह जगह, जहां मैंने पेंसिल का निशान लगाया है. कल मैं इन पुर्जों से यह मॉडल बनाने की कोशिश कर रहा था. एक हाथ से यह बनाया नहीं जा सकता, तो दूसरे हाथ से इस जगह से पकड़कर काम करना पड़ता है. काम करने में मैं कुछ इस तरह खोया हुआ था कि पता ही नहीं लगा, कब मैंने बायें हाथ से इसे पकड़ लिया." वह अपनी उंगलियों को हैरानी से देखता है. "मैंने इस बारे में डॉक्टर को बताया, तो उसने कहा कि मैं इस हाथ से छोटी-छोटी चीजें पकड़ने की कोशिश किया करूं, पर सच बात तो यह है कि जब भी मैं इस हाथ से कोई चीज पकड़ने या उठाने की कोशिश करता हूं तो यह काम नहीं करता.

"मुझे इस बायें हाथ की चिंता है," वह कहता है, "हां, मुझे उम्मीद है कि यहां से छूटने पर मुझे कहीं न कहीं काम मिल जायेगा. इस बारे में मुझे इतनी चिंता नहीं है. काम मुझे मिल ही जाया करता है.—मेरी पत्नी को पता है कि मैं जख्मी हो गया हूं, पर यह नहीं पता कि किस हद तक जख्मी हुआ हूं. मैं चाहता हूं कि यह हाथ ठीक हो जाये. इस हालत में मुझे देखकर उसे दुःख होगा."

उसकी आंखों में चिंता का भाव आता है. "यह हाथ हमेशा ही कुछ बांका रहेगा," वह कहता, "पर अगर यह काम करने लग जाये तो इसके बांके होने की मुझे इतनी चिंता नहीं है. मेरी पत्नी भी तब खास बुरा नहीं मनायेगी. वह हवाई जहाजों के एक कारखाने में काम करती है—मर्दों का काम. उसने लिखा है कि वह बहुत अच्छी तरह काम कर रही है, तो मैं चिंता न करूं. मैं आपको उसकी फोटो दिखाता हूं." वह अपने गाउन की जेब टटोलता है. "भला कहां गयी? नर्स हमेशा इसी जेब में तो रखा करती है." वह अपना हाथ जेब में डालता है और एक छोटा-सा चमड़े का बटुआ निकालता है. अचानक वह अपने हाथ को देखता है, जिसने बटुआ पकड़ा हुआ है. तभी उसकी उंगलियां ढीली पड़ जाती हैं और बटुआ मेज पर गिर पड़ता है.

"देखा आपने!" वह कहता है. वह अपने उस बांके-टेढ़े बायें हाथ को देखता है, जो उसके सामने उठा हुआ है. "दो दिन में दो बार ऐसा हुआ है," वह कहता है. "दो दिन में दो बार!" □

● संक्षिप्त रूपांतरण : सुखबीर

पटरियां बर्फ से ढकी थीं. तभी नशे में धुत्त एक औरत बार से बाहर निकली, बर्फ पर उसका पैर फिसला और वह जमीन पर चारों खाने चित्त जा पड़ी. उसने उठने की कोशिश की, पर वह फिसलकर फिर गिर पड़ी और वहां पड़ी-पड़ी मदहोशी में चीखने-चिल्लाने लगी. मेरे यहां जो नीग्रो काम करता था, वह तभी कहीं से लौटता हुआ उस बार के पास आ पहुंचा. वहां उस औरत को देखते ही वह तुरंत, उससे यथासंभव दूर रहते हुए, सड़क के इस पार आ गया.

जब वह अंदर आ गया तो मैंने पूछा, "मैंने तुम्हें देख लिया था, बच्चू. उस औरत की आखिर तुमने मदद क्यों नहीं की?"

"वह पिये हुए थी साहब, और मैं नीग्रो हूं. अगर मैं उसे छूता तो वह बड़ी आसानी से यह शोर मचा सकती थी कि यह बलात्कार करना चाहता है. तब भीड़ इकट्ठी हो जाती और मुझ पर भला कौन यकीन करता?"

"इतनी जल्दी तुमने इतना सब सोच लिया? बड़े तेज हो."

"काफी अरसे से मैं एक नीग्रो की तरह रहने का अभ्यास कर रहा हूं साहब." वह बोला.

और यहां मैं 'रोसिनेंट' में मूर्खों की तरह, जीवन-भर के एक अभ्यास को मिटाने की कोशिश कर रहा हूं.

▣

अगले दिन मुझे गाड़ी के लिए जो पहली सवारी मिली, उसे मैंने नहीं चुना था, बल्कि उसी ने मुझे चुना था. मोटेल में मेरे बराबर के स्टूल पर बैठा वह एक हैंबर्गर दबा रहा था, वैसा ही एक हैंबर्गर मेरे हाथ में भी था. उसकी आयु तीस और पैंतीस के बीच में होगी. उसकी बोली में दक्षिण का गहरा रंग था, जैसा कि मुझे पहले कभी नहीं मिला था. उसने यह जानना चाहा कि मैं किधर जा रहा हूं और जब मैंने यह बताया कि मेरा इरादा जैक्सन और मांटगोमरी की तरफ जाने का है तो उसने प्रार्थना की कि मैं उसे अपनी गाड़ी में ले चलूं. चार्ली को देखकर उसने पहले यह सोचा कि मेरे साथ गाड़ी में कोई 'निग्गर' है. यह असल में यहां की एक आम शैली हो गयी है.

हम गाड़ी में आराम से बैठ गये. उसने अपने बालों पर फिर कंघा फेरा और 'रोसिनेंट' की तारीफ की. वह बोला, "एक बात तो मैं अभी बता सकता हूं कि आप उत्तर के हैं."

"आपके कान काफी तेज हैं." मैंने, मेरा खयाल है, कुछ मजाक में ही जवाब दिया.

"आप नदी के मुहाने की तरफ से आ रहे हैं," वह बोला. "क्या आपने न्यूआर्लियन्स में जो कुछ हो रहा है, वह देखा?"

"जी हां, देखा."

"किसी आदमी को अपना कर्त्तव्य पूरा करते देखकर मन को बड़ी शांति मिलती है."

मेरा खयाल है यहीं मैं उत्तेजित हो उठा. मुझे केवल 'हूं' कर देना चाहिए था और वह उससे अपना मनपसंद अर्थ निकाल सकता था, लेकिन क्रोध का दुष्ट कीट मुझमें कुलबुलाने लगा और मैंने कहा, "तो वे यह सब कर्त्तव्य समझकर कर रही हैं?"

"बिल्कुल, भगवान उनका भला करे. शैतान की औलाद इन निग्गरों को हमारे स्कूलों से बाहर रखने का काम किसी को तो करना ही है." आत्म-बलिदान की उच्च-भावना, जो उन नारे लगानेवालियों को प्रेरणा देती थी, इस समय उस पर हावी हो गयी थी. वह बोला, "एक ऐसा समय आता है जब आदमी को बैठकर सोचना होता है. और तब आपको यह निश्चय करना पड़ता है कि जिस चीज में आपका विश्वास है, उसके लिए आप अपना जीवन बलिदान कर देंगे."

"आपका किस चीज में विश्वास है?"

"मैं अपने बच्चों को किसी निग्गर के साथ एक स्कूल में पढ़ने की कभी अनुमति नहीं दूंगा. जी हां, मैं अपना जीवन बलिदान कर दूंगा, लेकिन खुद मरने से पहले मैं शैतान की औलाद इन निग्गरों के एक पूरे झुंड को मौत के घाट उतार देना चाहता हूं."

"आपके कितने बच्चे हैं?"

उसने घूमकर मेरी तरफ देखा और बोला, "अभी तो कोई नहीं है, पर कुछ जरूर होने हैं और मैं आपको यकीन दिलाता हूं कि वे किसी निग्गर के साथ एक स्कूल में नहीं पढ़ेंगे."

"आप अपना जीवन बच्चे होने से पहले बलिदान करना चाहते हैं या बाद में?"

"भगवान कसम, मेरा खयाल ठीक था. आप निग्गर प्रेमी हैं."

"जी नहीं, मैं निग्गर-प्रेमी नहीं हूं. और यदि गोरे लोगों में वे नारे लगानेवाली देवियां शामिल हों तो मैं गोरों का भी प्रेमी नहीं हूं."

उसका चेहरा मेरे बिलकुल पास था. वह बोला, "मैं आपके बारे में क्या सोचता हूं, आप सुनना चाहते हैं?"

"जी नहीं, वे शब्द मैंने कल नेली के मुख से सुन लिये थे." मैंने ब्रेक दबा दिया और 'रोसिनेंट' को सड़क से हटा दिया.

वह मेरी तरफ हैरानी से देखने लगा, "आप रुक क्यों रहे हैं?"

"बाहर निकल जाओ," मैंने कहा.

"अच्छा, अच्छा," वह बोला और बाहर निकल गया. गाड़ी का दरवाजा उसने इतनी जोर से बंद किया कि चार्ली घबराकर कुं-कुं करने लगा.

मैंने फौरन ही गाड़ी चला दी, लेकिन उसका चिल्लाना मुझे सुनाई दे गया और शीशे में उसका घृणा से विकृत चेहरा और घृणा से थूकता मुंह भी दिखाई दे गया.

▣

जैक्सन और मांटगोमरी के बीच मैंने राह चलते एक और व्यक्ति को अपनी गाड़ी में बिठा लिया. वह तीखे नाक-नक्शवाला एक नौजवान नीग्रो छात्र था, जिसकी आंखों और हाव-भाव से एक आतुर निष्ठुरता टपकी पड़ती थी. उसकी सामने की जेब में तीन फाउंटेन पेन लगे हुए थे और भीतर की जेब कागजों से फूली हुई थी. मैंने उससे पूछा तो पता चला कि वह एक छात्र था. वह खूब चौकस था, लेकिन मेरी लाइसेंस प्लेट और बोली से उसका तनाव जितना कम हो सकता था, कम हो गया.

हमने धरनों के बारे में बातचीत की. वह उनमें और बस के बाइकाट में भाग ले चुका था. मैंने जो कुछ न्यू आर्लियंस में देखा था, वह उसे बताया. वह वहां हो आया था. जिस चीज से मुझे इतना धक्का लगा था, वह उसके लिए अप्रत्याशित नहीं थी.

अंत में हमारी बातचीत मार्टिन लूथर किंग और शांतिपूर्ण किंतु अडिग प्रतिरोध की उनकी शिक्षा पर आ गयी.

वह बोला, "यह बहुत ही धीमा तरीका है. इस तरह बहुत समय लगेगा."

"इसमें सुधार हो रहा है, लगातार सुधार हो रहा है. गांधीजी ने यह सिद्ध कर दिया है कि केवल यही एक अस्त्र है, जो हिंसा पर विजयी हो सकता है."

"यह सब मुझे मालूम है. मैंने इसका अध्ययन किया है. इसके जो लाभ हैं, वे जल की बूंदों की तरह हैं और समय बीता जा रहा है. मैं चाहता हूं कि यह और जल्दी हो. मैं चाहता हूं कि कोई कार्यवाही की जाये—तत्काल कोई कार्यवाही की जाये."

"उससे सब चौपट हो सकता है."

"मनुष्य बनने से पहले शायद मैं बूढ़ा ही हो जाऊं—शायद मर ही जाऊं."

"यह तो सच है. गांधीजी भी मर गये हैं. क्या आपकी तरह बहुत-से ऐसे लोग हैं, जो कोई कार्यवाही चाहते हैं?"

"जी हां. मेरा मतलब है, कुछ तो हैं ही. कितने हैं, यह मैं नहीं जानता."

उसके बाद हममें कई तरह की बातें हुईं. वह एक जोशीला और अपने भावों को खुलकर व्यक्त करनेवाला युवक था और चिंता व उग्रता उसमें छलकी पड़ती थी, लेकिन मांटगोमरी में जब मैंने उसे उतारा तो वह अगली खिड़की में थोड़ा झुककर हंस दिया और बोला, "मैं इसके लिए शर्मिंदा हूं. यह महज मेरी खुदगर्जी है, लेकिन मैं अपनी आंखों से यह देखना चाहता हूं— मरना नहीं चाहता. यहां, और जल्दी ही, मैं यह देखना चाहता हूं." उसने घूमकर हाथ से अपनी आंखें पोंछीं और फिर वह तेजी से वहां से चला गया.

▣

मैं एक चीज बिलकुल साफ कर देना चाहता हूं. मेरा इरादा किसी भी रूप में विभिन्न दृष्टिकोण रखने का नहीं रहा है. और मैं समझता हूं कि मैंने ऐसा किया भी नहीं है. मेरा लक्ष्य पाठक के मन में यह भाव पैदा करना नहीं है कि 'इसने अपने खयाल से दक्षिण का एक सही चित्र पेश कर दिया है.' नहीं, मेरा ऐसा खयाल नहीं है. थोड़े-से लोगों ने जो कुछ मुझसे कहा और जो कुछ मैंने देखा, केवल वही मैंने बताया है. वे लोग अपने-अपने समुदाय के प्रतिनिधि थे या नहीं, या इससे कोई निष्कर्ष निकाला जा सकता है या नहीं, मुझे नहीं मालूम. पर मुझे इतना मालूम है कि यह एक पीड़ित क्षेत्र है और लोग एक भंवर में फंसे हैं. मैं यह जानता हूं कि इस समस्या का समाधान, जब भी वह निकलेगा, सरल या सहज नहीं होगा. मोशिये 'यहां दफन हैं' की तरह, मैं यह महसूस करता हूं कि संदेह परिणाम के बारे में नहीं है, बल्कि साधनों के बारे में है. भयंकर अनिश्चितता साधनों के बारे में ही है. □

चलते-चलते

स्टेनबेक अपना उपन्यास, 'ऑव माइस एंड मेन' लिख चुका था, और अब उसे संशोधित करने का काम बाकी था.

एक दिन सुबह उठने पर वह क्या देखता है कि उसके कुत्ते, टोबी ने उपन्यास की पांडुलिपि का लगभग आधा भाग चबाकर टुकड़े-टुकड़े कर डाला था. स्टेनबेक भौंचक्का रह गया. तभी उसे टोबी पर इतना गुस्सा आया कि वह उसे शायद मार ही डालता कि अचानक संभला और उसने सोचा कि आलोचनात्मक दृष्टि से कुत्ते ने शायद ठीक ही किया हो— संभव है कि उपन्यास अच्छा न बन पाया हो. सो उसने टोबी की साधारण-सी ही पिटाई की और फिर से उपन्यास लिखने में जुट गया.

उपन्यास छपने पर भी स्टेनबेक के मन में संशय था कि वह शायद इतना अच्छा न हो. और उसने सोचा कि टोबी ने ठीक ही किया था, जो उसे नष्ट कर डाला था. तब उसने खुश होकर टोबी का रुतबा बढ़ाते हुए उसे 'साहित्य का लेफ्टिनेंट कर्नल' बना दिया.

▣ सुखबीर

● आयोजक

परिचर्चा : सत्यपाल सक्सेना

नोबेल पुरस्कार राजनीति से कितने प्रभावित, कितने अप्रभावित

क्या प्रतिभा और योग्यता को राजनीति हड़प ले जा सकती है? तथा पुरस्कार की राजनीति और राजनीति के पुरस्कार का क्या मतलब होता है?

यहां पर भी संपर्क आवश्यक है

▣ अटलबिहारी बाजपेयी

नोबेल पुरस्कार विश्व के सबसे बड़े पुरस्कार के रूप में प्रतिस्थापित हो चुका है, इसलिए इसे सभी आलोचनाओं व विवादों से ऊपर होना चाहिए, ऐसा मैं मानता हूं. जिस प्रकार हर बड़ी चीज अपने कुछ मूल्यों को, सिद्धांतों को और विचारधाराओं को मॉडल के रूप में, आदर्श के रूप में स्वीकार कर लेती है, वही हाल नोबेल पुरस्कार के साथ भी है. क्योंकि यह लोकतांत्रिक विश्व का पुरस्कार है, इसलिए, ऐसा देखा गया है कि इसे देने में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि लोकतांत्रिक मूल्यों के साथ कौन अधिक प्रतिबद्ध है. इसलिए इस बात में कुछ दम तो हो सकता है कि जिन देशों में पश्चिम के ढंग की लोकतांत्रिक प्रणाली प्रचलित नहीं है, वहां के साहित्यकारों के संबंध में जब निर्णय किया जाता है तो इस बात पर अधिक जोर होता है कि लोग किन मूल्यों के साथ, किन आदर्शों के साथ, किस विचार धारा और कौन से सिद्धांतों के साथ अधिक जुड़े हैं. उदाहरण के लिए यह बात सुनने में अधिक आयी है कि नोबेल पुरस्कार के बारे में निर्णय करने वाले विद्वान, रूस अथवा कम्यूनिज्म के विरोध में जो स्वर उठता है उसे सुनना अधिक पसंद करते हैं. इसलिए ऐसे साहित्यकार, जिनके लेखन में विरोध का स्वर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से होता है, उनके विचारों से निर्णायक मंडल अधिक प्रभावित हो जाता है.

इस पुरस्कार की स्थापना स्वीडन में हुई थी. स्वीडन में लोकतंत्र की पुरानी परंपरा प्रचलित है. पुरस्कार का निर्णय करने वाले भी अपने मूल्यों से प्रतिबद्ध हैं. इसलिए मूल्यों की प्रतिबद्धता को तोड़ने का संकट तो वे ले ही नहीं सकते. यह ठीक है कि विश्व का इतना बड़ा पुरस्कार सभी प्रकार की प्रतिबद्धताओं अथवा पूर्वाग्रहों से सर्वथा मुक्त होना चाहिए. किंतु यदि ऐसा कभी नहीं भी हो पाता है तो यह मान लेना शायद उचित नहीं होगा कि इस पुरस्कार में राजनीति का कोई हस्तक्षेप रहता है बल्कि, जैसाकि मैंने पहले ही कहा कि यह पुरस्कार स्वयं में ही कुछ मूल्यों से प्रतिबद्ध है, इसलिए यह उसी प्रकार से कार्य करता है.

जिस प्रकार अन्य पुरस्कारों के लिए लॉबिंग की आवश्यकता रहती है, प्रचार व सतत संपर्क की आवश्यकता रहती है, मैं समझता हूं कि नोबेल पुरस्कार भी इसका अपवाद नहीं है. हालांकि मेरे पास ऐसे कोई तथ्य नहीं हैं जिनके बल पर मैं यह कह सकूं कि इस पुरस्कार को देने में कोई पक्षपात किया जाता है, फिर भी मैं इतना मानता हूं, उपलब्धि का प्रचार तो हो, उस समिति तक संपर्क कायम करने का कोई जरिया तो हो. ▣

पश्चिमी देशों का, पश्चिमी देशों के लिए

▣ चंदूलाल चंद्राकर

नोबेल पुरस्कार पर बात तक करने को मन नहीं करता. मैं तो उनमें से बहुत से लोगों को व्यक्तिगत रूप से जानता हूं. उन्हें जानता हूं, उनकी विचारधाराओं और कार्य प्रणाली को जानता हूं. आज तो मैं मानता हूं कि यह इतना भी महत्त्वपूर्ण नहीं रहा कि इस पर कोई

बातचीत की जाये. हम लोगों (एशिया के साहित्यकार) को तो उसकी तरफ से ध्यान एकदम हटा देना चाहिए. कोई नहीं पढ़ता हमारे साहित्य को वहां पर. अव्वल तो पहुंचने का साधन ही कहां है. हमारे साहित्यकारों की कृतियों का कितना अनुवाद होता है? और जो थोड़ा-बहुत होता भी है, वह वहां पहुंचकर मात्र हंसी और उपेक्षा का ही पात्र बनता है. भारतवर्ष आज भी उनके लिए मक्खियों और मच्छरों का देश है. ऐसे देश में, साहित्य-सृजन, उनके विश्वास अनुसार बड़ा पिद्दू होता है. इसलिए पुरस्कार की उपादेयता, विश्वसनीयता और महत्ता सब के

सब ही पूर्वाग्रह (राजनीतिक) से मुक्त नहीं हैं. पूर्वाग्रह यही कि यह पश्चिम वालों का पुरस्कार है, पश्चिम के लिए पुरस्कार है. उसमें भी साफगोई नहीं है. पश्चिम का भी वह साहित्य ही, जो उनकी व्यवस्था अनुकूल हो. श्रेष्ठता, मौलिकता अथवा कोई नयापन पुरस्कार के मानदंड नहीं बल्कि प्रचार, घोर प्रचार, प्रोपेगैंडा अपना काम करते हैं, सफलतापूर्वक. इससे कहीं अच्छे तो हमारे देश के पुरस्कार हैं.

मैं इस पुरस्कार का प्रबल विरोधी हूं. होऊंगा भी क्यों नहीं! मैं तो उनके बारे में बहुत कुछ जानता हूं. मेरी जानकारी मात्र अखबारों, पत्र-पत्रिकाओं अथवा बहस-मुबाहिसों की ही नहीं है, निजी संबंधों पर आधारित है. मैं यह मानता हूं कि इसके अंतिम परिणाम भयंकर ही होंगे. किंतु होते रहें, इससे उन लोगों का क्या वास्ता! मरेगी जिसकी भाषा मरेगी, मरेगा जिसका साहित्य मरेगा. जिस धारा को, जिस साहित्य को वे लोग विशेष रूप से चाहते हैं, वह जिंदा रहे, वह समृद्ध रहे. इसके अलावा उनकी और कोई चिंता नहीं है. जिस प्रकार सारी व्यवस्था प्रयोग में लायी जा रही है, मैं नहीं समझता कि निकट भविष्य में उसमें कोई सुधार की गुंजाइश है. ▣

समिति वामपंथी धारा को पसंद नहीं करती

▣ खुशवंत सिंह

किसिंजर व सादात को दिये गये पुरस्कारों से स्पष्ट होता है कि नोबेल पुस्कार केवल वरीयता के आधार पर नहीं दिया जाता. इसमें राजनैतिक तत्व भी सक्रिय रहते हैं. नोबेल पुरस्कार समिति द्वारा अब तक दिये गये पुरस्कारों का यदि विश्लेषण करें तो पता चलता है कि यह समिति दक्षिणपंथी लोगों की ही है. यह समिति वामपंथ को पसंद नहीं करती.

साहित्य के क्षेत्र में देखा जाये तो इसके बहुत उदाहरण हैं. ज्यां पॉल सार्त्र ने भी इसीलिए इस पुरस्कार को लेने से इनकार कर दिया था क्योंकि वे इसे

दक्षिणपंथियों द्वारा अपने प्रचार के समर्थन में चलायी जा रही संस्था मानते थे. जहां तक पास्तरनाक का प्रश्न है, तो यह केवल अपवाद ही है. लेकिन ऐसे अपवाद इस पुरस्कार के इतिहास में बहुत कम ही देखने को मिलते हैं.

लेकिन नोबेल पुरस्कार किसी को दिये अथवा न दिये जाने के पीछे केवल राजनीति काम करती है, मैं ऐसा मानने के लिए तैयार नहीं हूं. कहीं न कहीं प्रतिभा और व्यक्तित्व भी अपनी भूमिका निभाते हैं. लेकिन यह दूसरे दर्जे का ही महत्त्व पाते हैं. अब देखिए, जापान का उपन्यासकार कावाबाता बहुत अच्छा उपन्यासकार नहीं था, बल्कि उसी का समकालीन उपन्यासकार मिशिमा उससे कहीं बेहतर उपन्यासकार था, फिर भी यह पुरस्कार कावाबाता ही को क्यों मिला? इस प्रश्न का उत्तर, मैं फिर कहूंगा कि वह राजनीति है जो श्रेष्ठता को नहीं समर्थन को देखती है. यही क्यों, और भी बहुत से ऐसे उदाहरण हैं जो बताते हैं कि नोबेल पुरस्कार एक श्रेष्ठ और समर्पित उपन्यासकार को केवल इसलिए नहीं दिया जाता क्योंकि वह उसकी विचारधारा के समर्थन में नहीं लिखता. कई बार तो समिति के निर्णय इतने अभूतपूर्व होते हैं कि हर किसी को आश्चर्यचकित कर देते हैं. अब पर्ल एस. बक का ही उदाहरण लें. उन्हें एक उपन्यासकार की हैसियत से यह पुरस्कार दिया गया था जबकि वे एक उपन्यासकार की बजाय एक शोध छात्रा के रूप में अधिक प्रख्यात थीं. उनका एशिया, और एशिया में भी चीन पर किया गया शोधकार्य मौलिक और सर्वश्रेष्ठ था.

जहां तक भारतीयों को इस पुरस्कार का एक लंबे अरसे से न मिलने का प्रश्न है, मैं समझता हूं कि समिति के सदस्य यहां के लेखकों को मौलिक मानने में हिचक जाती है. एक ऐसा व्यक्ति जो शुरू से ही अंग्रेजी में लिखता चला आ रहा हो, उसके लेखन के मौलिक होने पर, यह समिति हमेशा सशंकित रहती है. जबकि यहां बहुत अच्छे लिखने वाले रहे हैं. जैसे इकबाल और फैज. मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि देर-सबेर फैज को यह पुरस्कार अवश्य मिलेगा. उन्हें अब तक इस पुरस्कार के न मिलने का एक ही कारण है और वह यही कि उनके लेखन का रुझान वामपंथ का है. ▣

साम्राज्यवादी व्यवस्था के समर्थकों के लिए

▣ चंद्रजीत यादव

मैं ऐसा मानता हूं कि इस पुरस्कार को आरंभ किया होगा तब इसमें कोई राजनीति नहीं रही होगी बल्कि मानवीय मूल्य शाश्वत बनें, अधिक सुदृढ़ और समृद्ध बनें, यही इसका एकमात्र उद्देश्य रहा होगा. कुछ समय तक इस संस्था में ऐसा हुआ भी. एक स्वस्थ परंपरा बनायी गयी. गुरु रवींद्रनाथ टैगोर उसी परंपरा के द्वारा सम्मानित साहित्यकारों में से एक हैं. मेरा मतलब, एक समय तक नोबेल पुरस्कार साहित्यकारों को उनकी मौलिकता, श्रेष्ठता तथा विशिष्टता के कारण ही दिया जाता रहा. यह परंपरा अधिक देर तक नहीं निभ सकी. जिस प्रकार, हाल के कुछ सालों में इस पुरस्कार को वितरित किया गया है उससे मेरी यह धारणा बन गयी है, अब यह पुरस्कार विश्व राजनीति से, या यूं कहना अधिक उचित होगा कि पूंजीवादी राजनीति से मुक्त नहीं रहा है. अब इस पर साम्राज्यवादी तत्वों का पूरा हाथ है. ऐसा नहीं होता तो क्या कारण है कि बहुत से दूसरे दर्जे के साहित्यकार इस पुरस्कार को पा जाते और सच्चे अधिकारी, इस सम्मान से वंचित रह जाते.

इस पुरस्कार को लेकर जो बात

साहित्य के क्षेत्र में है वही बात अन्य क्षेत्रों में भी है. वरना क्या वजह थी कि शांति पुरस्कार सादात व किसिंजर जैसे व्यक्तियों को मिला जबकि शांति के क्षेत्र में इनका कार्य महात्मा गांधी के कार्यों से कहीं कम बैठता है. गांधी जी ने तो महानता में 'अहिंसा परमो-धर्म'' जैसे शाश्वत मूल्य जगाये, समृद्ध किया, लेकिन पुरस्कार किन्हें मिला!

तो, यह कहना गलत न होगा कि नोबेल पुरस्कार अब ऐसे साहित्यकारों अथवा विद्वानों को दिये जाने लगे हैं जो पूंजीवादी व्यवस्था के समर्थक हैं, पोषक हैं, प्रचारक हैं. उदाहरण के लिए बोरिस पास्तरनाक को नोबेल पुरस्कार देने में साफ-साफ राजनीति थी. क्योंकि वह कम्यूनिस्ट व्यवस्था के खिलाफ लिखनेवाला साहित्यकार था और पूंजीवादी लोग रूस में, कम्यूनिज्म के विरोध में उठ रही हर आवाज को बढ़ावा देना चाहते हैं, इसीलिए उन्हें यह पुरस्कार दिया गया. और यह बात जग जाहिर है कि जहां तक श्रेष्ठता का सवाल है तो पास्तरनाक इतना खास बड़ा नाम नहीं था. इसी प्रकार पोलैंड के वलेसा का नाम, इस पुरस्कार के लिए प्रस्तावित करने के पीछे भी अगर यही मनोवृत्ति काम नहीं कर रही तो अन्य क्या कारण है. मुझे कोई आश्चर्य नहीं कि वलेसा को किसी साल यह पुरस्कार मिल ही जाये.

जहां तक एशिया वालों को यह पुरस्कार न दिये जाने की बात है, मैं तो यही समझता हूं कि उन लोगों में यहां के साहित्यकारों के प्रति उपेक्षा की

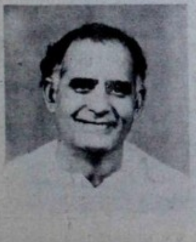

भावना है. दूसरा कारण, यह हो सकता है कि यहां के जितने भी अच्छे और श्रेष्ठ साहित्यकार हुए हैं वे पूंजीवादी व्यवस्था के विरोधी ही रहे हैं. उनका लेखन शोषित वर्ग में जागृति पैदा करने वाला था, मानवीय मूल्यों का जोरदार समर्थक था. जाहिर है कि ऐसे साहित्यकारों को यह पुरस्कार मिलता ही क्यों! वरना, मैं सिर्फ एशिया ही नहीं, लैटिन अमरीका, अफ्रीका के कुछ ऐसे धुरंधर साहित्यकारों को जानता हूं जो अब तक के नोबेल पुरस्कार विजेता साहित्यकारों से कम नहीं हैं, बल्कि आगे ही हैं. ▣

विनाशकारी परंपरा को जन्म

▣ लाडली मोहन निगम

नोबेल पुरस्कार में राजनीति नहीं है तो फिर क्या है! आप एक ऐसे साहित्यकार को श्रेष्ठ बताकर सम्मानित कर रहे हैं, जिसका योगदान (साहित्य में) मालूम नहीं कितना सच्चा है, कितना शाश्वत है, कितना समर्पित है! इसका निर्णय लेने वाले ये कौन होते हैं. इसका निर्णय तो समय लेता है! समय जिसे श्रेष्ठ कहे, शाश्वत माने, उसे पुरस्कार दो. आप आज के साहित्यकार को पुरस्कृत कर देते हैं, यह तय किये बिना कि उस साहित्यकार ने अपने पूर्वजों द्वारा खींची गयी लकीर से कोई बड़ी लकीर खींची भी है! दरअसल ऐसा तो तब हो न, जब यह पुरस्कार केवल साहित्यिक श्रेष्ठता पर ही दिया जाये. बातें तो और ही कुछ होती हैं, नाम साहित्य का आ जाता है.

पुरस्कार केवल किसी साहित्यकार को उसके श्रेष्ठ, मौलिक, सार्वभौम योगदान को दिया जाना चाहिए! एक गंभीर और लंबी खोज के बाद दिया जाना चाहिए यह पुरस्कार. इस खोज को आधार बनाये बिना, दिये गये किसी भी पुरस्कार को मैं तो पूर्वाग्रहित अथवा राजनीति-प्रेरित ही मानता हूं. क्या कारण है कि भारत के लेखकों में से काफी बाद के लेखक तो नोबेल पुरस्कार दिये जाने की अफवाह का विषय बनते हैं, शरतचंद्र अथवा

प्रेमचंद नहीं. इनका साहित्य मानवता की आत्मा को आज भी प्रतिबिंबित करता है.

मैं राजनीति का विरोधी नहीं हूं. परंतु देखने की बात है कि वह राजनीति परचालित किन तत्वों और मनोवृत्तियों से होती है.

दुर्भाग्य से राजनीति आज धर्म को त्याग निहित स्वार्थों से जुड़ गयी है. वह चाहे राष्ट्र स्तर पर हो अथवा विश्व स्तर पर, आज की राजनीति बुराई मिटाने की बात तो करती ही है किंतु अच्छाई को अंगीकृत करने के लिए कुछ नहीं कहती! यही कारण है कि नोबेल पुरस्कार भी कटु विवाद और आलोचना से घिरता जा रहा है.

मैं नये साहित्यकारों के विरुद्ध बिलकुल नहीं हूं. चिरंतरता कोई ठहरी हुई प्रक्रिया नहीं बल्कि एक गतिमान स्थिति है. हर चिरंतरता में नये अन्वेषणों को खपा लेने का माद्दा होना चाहिए. परंतु चिरंतरता का अपना एक नियम होता है, एक सहज और प्राकृतिक नियम होता है. उसमें आदमी का हस्तक्षेप, उसके सहज प्रवाह को अवरुद्ध कर देता है. जब नोबेल पुरस्कार नयी सर्जना को ही दिया जाना है तब उसमें यह भेदभाव क्यों कि वह वर्तमान व्यवस्था के अनुकूल है अथवा प्रतिकूल!

एक विनाशकारी परंपरा को जन्म दे रहा है यह पुरस्कार. बचाव के लिए कहीं कोई चिंतन नहीं सुनाई पड़ रहा.

इस पुरस्कार के संयोजकों को अपनी गरिमा के अनुरूप, अपनी जिम्मेदारी को निभाना ही होगा. ▢

लोरी

मिगेल आंखेल आस्तूरीआस

> "जमीन को जवान मांस चाहिए था . . मांस, हमारा मांस . . . जैसे तुम्हारा . . क्योंकि यह जमीन भी किसी का मांस है. यह कुछ-कुछ मां है, जो बेटे के बोने पर बेटी लौटाती है!"
> —जमीन को मां की भांति सम्मान देकर उसकी रक्षा चाहनेवालों की गौरव गाथा

वह अपना मुंह खामोशी से मींच लेता और चक्के के गोल पहियों के चारों ओर घूमता हुआ सिर्फ अपने दांतों का अस्तित्व अनुभव करता, जहां केवल एक खामोश आगंतुक का आगमन होता था और थी उसकी जबान! वह अपनी मुट्ठियां मींचता और दांत पीसता. क्रोध से लाल हुई आंखों और भारी पलकों से फाड़-फाड़कर देखता. नींद और थकान से उसके पपोटे फूल गये थे. कुछ भी भयानक घट सकता था.

उसके बगल में पुल की सीढ़ी पर बैठी उसकी पत्नी उसके बोलने की प्रतीक्षा कर रही थी. पुल बड़ा था—गर्मियों में उस छोटी-सी नदी के लिए बहुत बड़ा लेकिन सर्दियों में, जब नदियां चढ़ जाती हैं, तो यह लोहे का होने के बावजूद कीड़े की तरह कांपने लगता था. काइदूना उसकी ओर देख नहीं रही थी. वह पास ही था. उसकी ओर देखकर क्या होता! जो कुछ भी बोलने को था, वह यही था कि कुछ गलत हुआ.

आंसुओं से भरी आंखों को बंद करके वह अपने बेटों के बारे में सोचती रही. अनाक्लेतो और सेरापीतो कल शाम अंधेरा घिरने पर पहाड़ों में चले गये थे ताकि सैनिकों के हाथ न पड़ जायें.

वे अब उनके साथ नहीं थे. कहां थे, मालूम नहीं. जो भी सैनिकों के हाथ पड़ जाता, उसे बगैर नाम पूछे गोली से उड़ा दिया जाता. सिर्फ उसका पति, बुएइओन अपनी इच्छा से वहां रह गया था. वह था ही ऐसा. लेकिन जबसे पौ फटी थी, काइदूना तबसे चक्कर काटती घूम रही थी—उस घटना की प्रतीक्षा में जो संभावित थी. वह अपनी अंगुलियों को चटखा रही थी, अपनी मुद्राएं बदल रही थी, ठंडी सांसें ले रही थी. वह सब कुछ सहन नहीं कर पा रही थी.

"सब पहले से तैयार है. . ." उसने कहना शुरू किया. वास्तव में वहां अब दीवारों, छत और खेतों के सिवा कुछ रह भी नहीं गया था. . . "सब पहले से तैयार हैं, सब पहले से लिप्त हैं. सबने अपनी टोकरियां और फावड़े फेंक दिये हैं."

दब्बू बुएइओन बदल गया था. यह दूसरी प्रकृति थी. दूसरी उपज थी. उसने काइदूना को घृणा की नजर से नहला दिया—बर्बर घृणा से, जैसे वह असुरक्षित होने पर किसी को सिर्फ इसलिए पीट देगा कि वह उसे समझता नहीं, उसके विचारों का अनुमान नहीं लगा सकता.

"ताता, तुम्हारे बाप-बेटों को ले गये हैं. यह हो नहीं सकता. . ."

"और तुम क्या सोचते हो, तुम उन्हें छोड़कर आये हो?"

"ओह! नहीं, ताता, लेकिन मेरा दिल जानता है कि तुम भयभीत हो और सोचती हो कि पहाड़ों में चला जाना चाहिए."

"मुझे कोई भय नहीं है. . ."

"और वहां कौन-सी सुरक्षा है, खैर. . ."

उसने कोई जवाब नहीं दिया. मानो बात की पुष्टि करते हुए वह चक्के को पंजों से पकड़कर झटके से उठ खड़ी हुई.

"मैं भी कितनी मूर्ख हूं!" उसने विषय बदलने की गरज से कहा, "जल्दी बाहर निकलने के चक्कर में मैं टमाटरों की बाबत तो भूल ही गयी."

वह खेतों की ओर दौड़ गयी. दूसरे सिरे पर सब्जियों और फलदार पौधों का बाग लगा था.

▣

आंसुओं से उसका चेहरा भीग गया था. हाथों में रखे टमाटरों की तरह आंसू उसके गालों पर ढुलक आये. वह समझ क्यों नहीं पायी. लेकिन वह जानती थी कि वे लोग उस जमीन के मालिक नहीं थे, जो सरकार ने उन्हें दी थी. उनकी सरकार ने तो जमीन उनके नाम कर दी थी, लेकिन दूसरे सैनिकों ने बिना किसी कानूनी अधिकार के उनसे छीन ली थी.

उसके भीतर यह विचार घुमड़ने लगा कि उसके पति और बेटों के साथ कुछ घटने वाला है. उसने रीढ़ से सिर के बालों तक सिहरन दौड़ती महसूस की जैसे किसी हिमजल की बरसात कर दी हो.

उसने याद किया कि वह क्या करने आयी थी. दर्द से छटपटाती उंगलियों से उसने वह चाकू निकाला जो उसका बेटा अनाक्लेतो भागते समय छोड़ गया था, ताकि हाल ही में लगाये गये फलों के पौधों की निराई की जा सके.

"मुझे क्षमा करना प्रभु!" उसने कांपती आवाज में प्रार्थना की. "लेकिन हम इस संपत्ति को क्यों छोड़ें, जिसकी कीमत उन्होंने नहीं दी? अच्छा हो, ये नारंगियां इस अन्याय के कारण कभी रसीली न हों! क्या मालूम था कि वे लोग यहां आकर कब्जा जमा लेंगे, जानते तो जहर उगाते!"

बुएइओन ने उसे पौधों को नष्ट करते नहीं देखा, पत्ते और उसके आंसू दोनों गिर रहे थे. पुल के पास खड़ा वह सोच रहा था कि कौन उसे समझता है! वह किसी रहस्यमय घटना को देख पा रहा था जो घटित होने वाली थी.

"बेहतर यही है कि इतने हतभाग्य खेतों से, जिन्हें गरीबों ने मालिकों के मोटे पेटों को भरने के लिए अपने पसीने से सींचा है, जहर ही पैदा हो. . .इतने हतभाग्य. . .इतने. . .इतने. . . इतने. . ."

हर 'इतने' पर उसका चाकू जमीन में घुसता और पौधों की जड़ों के साथ बाहर आता. अनेक पौधे बिंध गये. अनेक पूरी तरह नष्ट हो गये.

"मुझे इसाइयों के कपड़ों की तरह ढकनेवाला यह पाला नारंगी की इस झाड़ी को बीजों से महरूम करेगा—अभी तो मुझे दुःख रहा है."

वह हंसी. . . उसके धूप से तपे चेहरे में उसके दांत चमक उठे—लेकिन कड़वी हंसी, जिसमें आवाज नहीं होती—दांतों में ठिठकी हंसी, जो शायद चीर-चीर देगी.

वह चोटें मारती रही. क्योंकि सभी पीड़ित थे, सूरज सिर पर आ चुका था. उसके विनाशक परिश्रम का पसीना उसके आंसुओं में मिल गया था—उन आंसुओं से जो बेकार और गंदा पानी है, जो नमकीन होने के कारण प्यासे हैं. आंसू कभी खुशीभरे नहीं होते. फिर भी, उस बार, जब वे कागजात के साथ खेतों का मालिकाना हक देने आये थे, तो वह खुशी से रोयी थी. हां, खुशी से, जिसने उसकी छाती फुला दी थी. उसने प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए हाथ जोड़ दिये थे, वह प्रभु, विर्जिन मेरी और संत मातेओ को लाख-लाख धन्यवाद देती रही थी, जिनकी कृपा से उन्हें खेत मिल रहे थे.

और बुएइओन?

वह अपने पंजों के बल स्थिर खड़ा मग्न होकर सोचता रहा, कौन जानता है रहस्य क्या है!

▣ **मिगेल आंखेल अस्तूरिआस**

जन्मः 10 अक्टूबर, 1899 (गुआतेमाला)
सन् 1967 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित. तानाशाही का विरोध करने पर अपने देश से निर्वासित कर दिये गये, मगर 1950 में वामपंथी सरकार ने इन्हें एल सल्वदोर का राजदूत नियुक्त किया—'एल सेनोर प्रेसीडेंट' 'द स्ट्रांग विंड', 'द ग्रीन पोप' आदि इनकी प्रमुख कृतियां हैं.

हे ईश्वर! अचानक उसने दूर से आता गूंजता शोर सुना, कुछ क्षणों में खामोशी छा गयी. भय से काइदूना के हाथ से चाकू गिर गया. उसे इतना भी समय नहीं मिला कि वह उसे उठा ले.

एक ओर गूंज कुछ नजदीक से सुनाई दी. वह सुरक्षा के लिए भागकर एक खाली घर में घुस गयी. रेगिस्तानी तूफान. . .भूचाल?

▣

बुएइओन को खोजने वह घर से निकली. लेकिन वह अपने स्थान पर स्थिर ठिठकी-सी खड़ी रही. पहली गूंज पर उसका हैट गिर गया था और दूसरी पर चाकू की मूठ से उसका सिर छिल गया था.

दूसरी ओर पानी, झाग और बूंदें खुशीभरे स्वरों के साथ चीनी मिल के चक्के पर गिरती रहीं—कभी-कभी उसके बड़े-बड़े चमकदार बुलबुले बनते और इधर-उधर फैल जाते. चक्के की गड़गड़ाती आवाज के बाद पानी की धार प्रचंड शोर करती और फिर नये दांते बूंदों की उस गहन दीवार को काटने के लिए थाम लेते और उड़ते जलकणों से बने इंद्रधनुष के बीच उसे ऐसे गायक के स्वर में बदल देते

जो रोलरों की खड़खड़ाती आवाज से परेशान हो गया है.

शाम ढल गयी रात हो गयी. उसे बुएइओन का कोई चिह्न नहीं मिला. जब शाम ढल रही थी, रोशनी कम हो रही थी, तो वह बुएइओन को दूर तक तलाशती जिस रास्ते से कई बार गुजरी थी, अब अंधेरा घिर आने पर उसी रास्ते से अंधों की भांति टटोल-टटोलकर चलती हुई बुएइओन को चीख-चीखकर पुकार रही थी, "नाइके बुएइओन कुइके!" वह उसका पूरा नाम पुकार रही थी, "नाइके बुएइओन कुइके!"

थकान से चूर उसके पांव लड़खड़ा रहे थे, उनके नीचे से बार-बार रेत दरकती और छोटे-छोटे पत्थर लुढ़क जाते, छोटे-बड़े मेंढक और टिड्डे बार-बार इधर-उधर भागते, गोल पत्थर आवाजों को गुंजाते. "नाइके बुएइओन कुइके!" और फिर "नाइके कुइके!"... "नाईके कुइके!" उसका वास्तविक नाम यही था. बुएइओन नाम तो उसे तब मिला था, जब वह अनिवार्य सैनिक जीवन की अवधि पूरी कर रहा था. तभी साथियों ने उसकी शक्ति और भलमनसाहत को देखते हुए उसे इस नाम से पुकारना शुरू किया था.

खिस सरकारी कोशिशें भी नोबेल पुरस्कार न दिला सकीं

▣ पाब्लो नेरुदा

कभी न कभी पृथ्वी ग्रह पर रहने वाला प्रत्येक लेखक नोबेल पुरस्कार सचमुच प्राप्त करना चाहेगा, चाहे वह इसे स्वीकार करे या न करे.

खासकर लातीन अमरीका में विभिन्न देशों के अपने उम्मीदवार होते हैं, जो अपनी अभियान योजना बनाते हैं और रणनीति तैयार करते हैं. कुछ ऐसे लेखकों के पुरस्कार उन्होंने खोये भी हैं जिन्हें मिलना चाहिए था. रोम्यूलो गल्लेगोज का उदाहरण भी ऐसा ही है. उनका काम प्रचुर था. गरिमामय था. लेकिन वेनेज्यूला एक तेल उत्पादक देश है यानी धनी देश और वहां यह निर्णय लिया गया कि उन्हें पुरस्कार दिलाने के लिए इसका इस्तेमाल किया जाये. स्वीडन के राजदूत की नियुक्ति हुई, जिनका अंतिम लक्ष्य गल्लेगोज को पुरस्कार दिलाना था. उन्हें दावत देने की छूट थी. उनके पास स्टाकहोम के प्रकाशन से स्पेनिश में प्रकाशित स्वीडी अकादमी के सदस्यों की रचनाएं थीं. इन संवेदनशील और संकोची लोगों को यह सब अतिशयोक्तिपूर्ण लगा. रोम्यूलो गल्लेगोज को वेनेज्यूला राजदूत की अविदग्धता की वजह से उस साहित्यिक पुरस्कार से वंचित रह जाना पड़ा जिसके वे पूर्णतया सुपात्र थे. □

● प्रस्तुति : विनोददास

उसके गालों पर आंसू फुंसियों की पपड़ियों की तरह सूख गये थे. सुबह की धुंध ने उसका चेहरा मानो गड्ढों से भर दिया था. न उसके बेटे अनाक्लेतो और सेरापीतो, जो पहाड़ों में खो गये थे, न उसका पति, न उसके मकई के खेत. सिर्फ खाली घर और वह स्वयं. कोई नहीं जानता कि उसने ये दिन कैसे जिये.

▣

पहाड़ों से, जहां भगोड़े जाते हैं, लोग लौटते हैं—दुबलाये, थके, खोये-से, बड़ी दाढ़ियां लिये, चीथड़े पहने, लेकिन लौटते हैं, सिर्फ वे ही नहीं लौटते, जिन्हें मौत लील गयी हो. कहने के लिए. . .किसलिए कहने के लिए! . . .पहाड़ों से लोग लौटते हैं. . .अब उनके पोते हैं. उनके बेटों के बेटे. . . कहा जाता है कि वे उनके असली पोते नहीं हैं. . .लेकिन. . . लोग क्या जानते हैं?. . .वे उनके पोते हैं, असली पोते! . . . हां, दादाओं को वे जिंदा चित्र-फलक कर ऐसे ही लगते हैं. पहाड़ों से लोग लौटते हैं, सिर्फ वे नहीं लौटते, जिन्हें मौत लील गयी. . .लेकिन बुएइओन का फटा कपड़ा तक नहीं लौटता. . .कुछ भी नहीं. . .जैसे कभी उसका अस्तित्व ही न रहा हो!

". . .दादी कहानी सुनाओ."

"आह! एक बार की बात है. . .हम अमीर बन गये, उन्होंने हमें अमीर बना दिया. . .एक सरकार थी, जिसने लोगों को खेतों की मिल्कियत देकर अमीर बना दिया था? सुन रहे हो, तुम लोग? हम उनसे मांगने नहीं गये थे. . .उन्होंने तुम्हारे दादा नाइके कुइके को शहर के चौक में बुलाया और वहां एक झाड़ की छाया में. . .मैं उनके साथ गयी थी, जैसे अगर वे आ जायें, तो आज भी जाऊंगी. . .तुम्हारे दादा बहुत ताकतवर और सुंदर थे—मकई की रोटी की तरह. . . लेकिन सुंदर किसे कहते हैं. . .झाड़ की छाया में, चौक में, शहर के बहुत-से लोग इकट्ठे थे. उनमें से एक ने कहना शुरू किया. उसने बहुत-सी बातें कहीं. उनमें से काफी हमारी समझ में नहीं आयीं. लेकिन एक बात है. . .वह व्यर्थ की बात नहीं कर रहा था. अंत में उसने हमें खेतों के कागजात दिये जिनसे हम संपत्तिशाली बन गये, मालिक बन गये—असली मालिक, अपनी जमीन के स्वामी. . ."

"यह तो सपने जैसी बात है, दादी," पोती ने कहा, जो अब स्कूल जाती थी.

"इसे तो इतिहास में ही रखना होगा. . ."

"नहीं, ऐसा कैसे हो सकता है. . .?"

"तब तो बेटी उन्होंने इतिहास को भुला दिया है. जिससे उन्हें असुविधा होती है, उसे नहीं रखते. लेकिन मैं जो कह रही हूं, वह हुआ था. . ."

"सच तो यह है दादी, हमारी टीचर कहती है, कि इतिहास सुर अतीत है, जैसे हम बहुत-सी पुरानी चीजें देखते हैं."

"अगर वह सच कहती है. . .क्योंकि पुरानी चीजें—

अज्ञात देश की विश्वसनीय आवाज

▣ ऐडमं कास्टलिग

"ग्रेबीला मिस्त्राल की कविताएं, जिनसे पहले स्वीडन-निवासी एकदम अपरिचित थे, जब कवि जाल्मर गुलबर्ग द्वारा स्वीडिश भाषा में अनूदित की गयीं तो उनका भाग्य जाग उठा. गुलबर्ग के अनुवाद में इनकी कविताओं की वास्तविक शक्ति, कोमलता और उनका आवेश उजागर हो उठा. इनकी रचनाओं की संख्या यद्यपि अधिक नहीं है फिर भी उनमें बहुत-सी ऐसी कविताएं हैं जिनमें एक संवेदनशील हृदय से निकली हुई लगभग सभी भावनाओं को वाणी मिली है और वे एक शक्तिशाली और कलाहीन व्यक्तित्व से संबंध स्थापित करती हैं. ये कविताएं आपको इसका विश्वास दिला देती हैं कि आप किसी एक ऐसे अज्ञात और सुदूरस्थित देश की विश्वसनीय आवाज सुन रहे हैं जो यूरोप की अतिशयोक्तियों और अंधानुसरण जोकि दक्षिण अमरीका के अगणित कवियों में आमतौर से खोजे जा सकते हैं, से सर्वथा मुक्त है." □

● नोबेल : द मैन एंड हिज प्राइजेज' से

इतिहास की तरह, जिसकी तुलना वह किसी भी पुरानी चीज से करते हैं—झूठ को जन्म देती हैं. लेकिन मैं जो कह रही हूं, वह झूठ को जन्म नहीं देगा; वह सच है, सच जो घटित हुआ था. . .उन्होंने जमीन गरीबों में बांट दी थी."

"यहीं?"

"हां, यहीं. . . आह! अगर तुम लोगों ने हमें तब देखा होता, जब हम जमीन के कागजात लेकर शहर से लौटे थे! हम लोग इतनी बातें करते रहे थे कि तीन रात सोये तक नहीं थे. . .! उन्होंने आतंक की डोर ढीली छोड़ दी. . .ओह! लेकिन काम शुरू हो चुका था, तब तुम्हारे दादा ने सब कुछ ठीक-ठाक करने के लिए कमीज की आस्तीनें चढ़ा ली थीं. . ."

"और वे खेत, दादी कहां हैं. . ?"

"छूट गये. उन्होंने छीन लिये. दूसरों की जमीन की तरह, दूसरी जमीन की तरह. उन पर ऐसा ताप पड़ा कि. . ."

"उन्होंने छीन लिये? अमीरों को देने के लिए. . ."

एक लंबे मौन और धीरे-धीरे पलकें उठाने-गिराने के बाद झुर्रियों से भरी काइदूना ने शब्दों को साफ-साफ बोलने की कोशिश में होंठों को मिलाते हुए खरखराती आवाज में कहा, "न उन्हें न हमें. सिर्फ विदेशी भाषा बोलनेवालों को देने के लिए . . .दूसरी दुनिया के लोगों को. . .इसके लिए उन्होंने हम पर आकाश से बम बरसाये. . ."

"तब वह दादी से ज्यादा नहीं जानतीं?"

"फिर. . .मेरे बेटे वहां जाकर देखते हैं हर तरफ झाड़-झंखाड़ और कांटे. मैं इस तरह की कल्पना नहीं करती. मैं वैसे ही देखती हूं, जैसा था, जब मैंने देखा—विदेशियों के जहाज द्वारा पलक झपकते ही सब कुछ नष्ट कर दिये जाने से पहले—चीनी मिल, पुल, बुएइओन. . .सब कुछ. मांस—सिर्फ उसे समझने की मनाही थी—जमीन को जवान मांस चाहिए था. . .मांस. . .हमारा मांस. . .जैसे तुम्हारा. . .क्योंकि यह जमीन भी किसी का मांस है. यह कुछ-कुछ मां है, जो बेटे के बोने पर बेटी लौटाती है."

"लेकिन, जब उन्हें कुछ बोना नहीं था तो उन्होंने ले क्यों ली?"

"सिर्फ अपनी संपत्ति बनाने के लिए, और कुछ नहीं. . . यही विदेशी चाहते थे कि हमें बर्बाद कर दें, हमारी जमीनों को बंजर बनाकर हमें बर्बाद कर दें. ताकि वे निश्चित रूप से हमारी बर्बादी, हमारी गरीबी के स्वामी बन सकें. . ."

"यह तो सपना-सा है, दादी!"

"हां, यह ऐसा सपना है, जैसे खुले में आग लगी हो, जो जल्दी बुझ जायेगी."

"लेकिन आग फिर लग जायेगी. . ."

"बेटी!"

"हमारी टीचर यही बताती है—एक आग जो सबको अपने में लपेट लेगी, क्योंकि उड़ती हुई चिनगारियां छूट गयी हैं और विचार उन्हें बुझा नहीं सकते."

काइदूना चुप हो गयी. उसने अपनी पोती अगुस्तीना की गोद में लेकर सहलाते हुए उसके कान में कहा. "और मैं यह सब लोरी की तरह फिर से कहती हूं. . ."

उसे दूसरे विचारों ने जकड़ लिया. लोग मौत के शिकंजे से लौट आये हैं. एक आग ने सबको जला दिया और कागजात पर दस्तखत करके जमीन उसके असली मालिकों को, धरती के बेटों को—जैसे नाइके बुएइओन कुइके, जो विदेशियों द्वारा आकाश से की गयी बमबारी में मर गये थे या खो गये थे—लौटा दिया. और अब वह देखेगी लोगों की प्रसन्नता के बीच सिर पर बंधे धुंधलाते पक्षियों के पंखों का प्रतीक. □

● मूल स्पेनी से रूपांतर : सुरेश धींगड़ा

चलते-चलते

चिली के नोबेल-पुरस्कार विजेता कवि पाब्लो नेरुदा ने अपने संस्मरणों में लिखा है कि उनकी सबसे पहली साहित्यिक रचनाएं वे पत्र थे, जो उन्होंने अपने एक मित्र के कहने पर उसकी प्रेमिका को लिखे थे. कुछ अरसे के बाद उस लड़की को पता लगाने में देर न रहा कि उसके प्रेमी के सभी पत्र पाब्लो नेरुदा के लिखे हुए हैं. और जब इस बात का पता नेरुदा को लगा, तो वे कविताएं लिखने लगे. —पु.

जर्मन कहानी

चेहरा

• हाइनरिख ब्योल

उस देश में यह कानून था कि जो भी उदास दिखायी दे, उसे पकड़कर जेल में डाल दिया जाये! —मानवीय अस्मिता पर तानाशाही के प्रभाव के तहत जनजीवन और नागरिकों की त्रासदी बयान करती मार्मिक दास्तान.

मैं बंदरगाह पर खड़ा समुद्री पक्षियों को देख रहा था—वे पानी में डुबकी मारते और फिर फुदककर पंखों को फटकार रहे थे.

एक पक्षी काफी देर से पानी में डुबकी मार रहा था. पहले वह तेजी से ऊपर को उड़ता और फिर पानी में डुब्बी मारने के बाद पंखों को समेट लेता था. वह हर बार आसमान की ओर ऐसे झपटता मानो कोई चीज खोज रहा हो. मेरी इच्छा हुई कि मुझे अगर कहीं रोटी का एक निवाला मिल जाये तो मैं तोड़-तोड़कर इस पक्षी को खिलाऊं. इसके अलावा अन्य पक्षियों को भी, ताकि सभी को उड़ने का एक रास्ता मिल जाये. लेकिन मैं खुद ही भूखा था, एकदम उन पक्षियों की तरह और थका भी था. खाली जेब में हाथ डाले हुए मैंने उन पक्षियों की ओर निहारा और दु:ख से भर उठा. मुझे लगा, किसी ने मेरे कंधे पर हाथ रखा है. पीछे मुड़ा, एक पुलिसकर्मी था.

मैंने कंधे से हाथ हटाने की कोशिश की.

"कामरेड!" उसने मेरे कंधे को और कसकर पकड़ लिया.

"साहब!" मेरे मुंह से निकला.

"अब कोई साहब-वाहब नहीं. हम सभी लोग कामरेड हैं."

"लेकिन मेरी गलती?"

"गलती?" वह हंसा और कहने लगा, "तुम्हारा चेहरा, तुम्हारा उदास चेहरा!" मैं अपनी हंसी न रोक सका!

"भला. . .यह हंसने की बात है?" उसका मुंह गुस्से से तमतमा उठा.

पहले तो मैंने सोचा कि वह शायद बोर हो रहा है. . .या आज उसे कोई पेशेवर रंडी नहीं मिली, या गली में घुत्त कोई शराबी नहीं मिला, या कोई चोर-उठाईगीर या जेबकतरा पकड़ में नहीं आया. लेकिन मैंने गौर किया कि वह वाकई क्रोधित है और मुझे गिरफ्तार करना चाहता है.

उसने मेरी बायीं कलाई में हथकड़ी पहना दी. लोहे की खनक से मुझे पता लगा कि मैं बरबाद हो गया हूं. खुले आसमान में उड़ते हुए पक्षियों से पलटकर, आंख पानी की तरफ ठहर गयी. पुलिस के चंगुल में फंसना और फिर जबरदस्त मार खाने के बाद कोठरी में सड़ना, डूबकर मरने से भी ज्यादा भयावह है. लेकिन उसने मुझे एक झटके से अपनी तरफ खींच लिया.

"पर मेरी गलती क्या है?" मैं हकला-सा गया.

"कानून के मुताबिक सभी लोगों को हर वक्त खुश दिखायी देना चाहिए."

"मैं खुश हूं." मैंने अपनी सारी ताकत लगाकर कहा.

"गलत."

"लेकिन ऐसा कानून मैंने कभी नहीं सुना!"

"कैसे नहीं सुना?" इसे लागू हुए छत्तीस घंटे गुजर गये हैं. घोषणा होने के चौबीस घंटे बाद प्रत्येक कानून व्यवहार में आ जाता है."

"लेकिन मुझे इसके बारे में कतई नहीं मालूम."

"इस घोषणा को सभी अखबारों में प्रकाशित किया गया था. लाउडस्पीकरों से सुनाया गया था. मेरे कामरेड! पिछले छत्तीस घंटे तुम कहां रहे हो?"

अब वह मुझे धकियाता हुआ ले जा रहा था. मुझे गहरी ठंड लगी तथा जोरदार भूख भी. उसने मुझे देखा—फटे पुराने कपड़े और घनी दाढ़ी, जबकि हर कामरेड के लिए अच्छे कपड़े पहनना नियमानुसार जरूरी था.

सड़कों पर चलने वाले सभी लोगों के चेहरे पर उमंग का मुखौटा लगा हुआ था. मैंने यह भी देखा कि पुलिस की शक्ल देखते ही उनका यह मुखौटा और भी दमक उठता था.

मैं भांप रहा था कि सभी लोग अत्यंत चतुराई से हमारे पास से खिसक रहे थे. वे इसी कोशिश में थे कि वे जल्द ही किसी घर, किसी गोदाम या किसी कारखाने में छिप जायें ताकि पुलिस वालों की निगाह न पड़े.

सिर्फ एक बार जब हम एक चौराहे पर पहुंचे तो वहां हमारा सामना एक अधेड़ आदमी से हो गया. उसकी शक्ल देखते ही मैं जान गया कि वह एक स्कूल मास्टर है. ऐसी स्थिति में वह किनारा नहीं काट सकता था और कानून के मुताबिक उसने बड़े ही आदर के साथ पुलिसकर्मी को अभिवादन किया. फिर अपने कर्त्तव्य के मुताबिक तीन बार मेरे चेहरे पर थूका और कहा, "राष्ट्रद्रोही सूअर!" नियमानुसार उसने सभी काम संपन्न किया था, लेकिन फिर भी मैं देख रहा था कि उसका गला सूखा हुआ था. कानूनन मैंने भी अपनी कमीज के आस्तीन से थूक पोंछने की कोशिश की. . .एक तेज घूंसा मेरी पीठ पर पड़ा और आवाज आयी. . .'पहला कदम'. . .मतलब साफ था कि यह मेरे दंड का पहला नमूना है.

▣

वह स्कूल मास्टर तेज-तेज कदमों से चलकर ओझल हो गया था. सभी लोग शेष सारे रास्ते किनारा काट गये और फिर वह जगह आ गयी, जहां मुझे ले जाना था. एक बिगुल बजा. मुझे मालूम हुआ कि मजदूरों की छुट्टी होने वाली है और अपने चेहरे को खुशनुमा बनाने के लिए वे अपने हाथ-मुंह मल-मलकर धोयेंगे. कारखाने से बाहर निकलते समय उनके चेहरे पर संतोष का भाव होना चाहिए. ज्यादा प्रसन्नता भी नहीं होनी चाहिए ताकि यह न समझा जाये कि उन्हें काम से पीछा छूटने के बाद खुशी महसूस हुई है. सिर्फ कारखाने जाते समय सुबह ज्यादा खुशी दिखायी देनी चाहिए, बल्कि उस वक्त रास्ते में चलते-चलते उन्हें गाना भी गाना चाहिए ताकि यह जाहिर हो कि उनमें काम पर जाने का उत्साह है.

लेकिन यह बात अच्छी हुई कि यह बिगुल छुट्टी होने के दस मिनट पूर्व बजाया जाता था ताकि लोग साबुन से हाथ-मुंह धोकर तैयारी इत्यादि कर लें. वरना मजदूरों का एक साथ निकलता हुआ समूह सड़क पर आता तो कानूनन सभी मेरे चेहरे पर तीन-तीन बार थूकते.

एक लाल ईंटों का मकान जिसके दरवाजे पर दो सिपाही पहरा दे रहे थे, वहां मुझे ले जाया गया. सबसे पहले कानून के मुताबिक उन्होंने मेरी जोरदार ठुकाई की. मेरी कनपटियों पर बंदूकों के कुंदे मारे.

कमरे के भीतर एक बड़ी मेज, उस पर टेलीफोन और दो कुर्सियों के अलावा कुछ भी नहीं था. कमरे के बीचों-बीच मैं खड़ा था. मेजवाली कुर्सी पर लोहे का टोप पहने एक आदमी बैठा था. उसके पीछे से एक व्यक्ति आया और चुपचाप दूसरी कुर्सी पर बैठ गया.

वे मुझसे सवाल पूछने लगे.

▣ हाइनरिख ब्योल.
जन्म: 1917, कोलोन.
1972 के नोबेल पुरस्कार विजेता. दूसरे विश्व युद्ध में पैदल सेना के सदस्य. जर्मन के 20 वीं सदी के श्रेष्ठ कथाकार

"व्यवसाय?"

"साधारण कामरेड".

"जन्म?"

"1. 1. 01."

"पिछले दिनों का विवरण दो."

"कैदी."

दोनों ने एक-दूसरे की ओर देखा.

"कहां और कब?"

"कारागार संख्या 12, कोठरी संख्या 130. . . कल ही छूटा था."

"रिहाई के कागजात?"

मैंने रिहाई वाला कागज जेब से बाहर निकाला और उसके सामने रख दिया.

"इस कैद का अपराध?"

"मेरा खुश चेहरा?"

दोनों ने दुबारा एक-दूसरे की ओर देखा और कहा, "साफ-साफ बयान करो!"

"तब किसी बहुत बड़े अफसर की मृत्यु हो गयी थी और राज्य में शोक मनाने का सरकारी आदेश था, लेकिन एक सिपाही का दावा था कि उस समय मेरा चेहरा दु:खी नहीं था."

"सजा की अवधि?"

"पांच साल."

जबरदस्त मार के बाद फिर नयी सजा सुनायी गयी—दस साल!

खुश चेहरे की वजह से पांच साल की सजा मिली थी तो दुखी चेहरे से दस साल! अब मैं सोचता हूं कि जब मैं जेल से बाहर आऊं तो मेरे पास कोई चेहरा न हो—न सुखी और न दु:खी! □

अनुवाद : विनोद दास

चलते-चलते

"महोदय, अगर कभी आपके नोट्स खो जायें तो आप क्या करेंगे?" प्रचार-निदेशक ने चर्चिल से पूछा.

"मैंने कभी अपने घर का फायर-इंश्योरेंस नहीं करवाया. . . क्योंकि मुझे यह अच्छी तरह पता है कि आप तो लगनी ही है!" चर्चिल ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया. ▣

● सिंगर (बायें से दूसरे) : नेशनल बुक अवार्ड, के विजेताओं के साथ

साक्षात्कार

मैं अश्लील और अभद्र साहित्य पढ़ना पसंद करूंगा, बजाय इसके कि. . .

बाशेविस इसाक सिंगर से काथा पालिट की बहसतलब बातचीत

क्या आप अपने अंग्रेजी और यहूदी-भाषी पाठकों को अलग-अलग करके देखते हैं?

मैं किसी पाठक के बारे में नहीं सोचता. मैं सिर्फ अपनी रचना के बारे में सोचता हूं. मैं अपनी रचनाओं का पहला पाठक होता हूं. . .और किसी भी रचना का मुझे खुश कर पाना बहुत मुश्किल है. जब अपनी कोई कहानी अच्छी नहीं लगती तो मैं उसे अपने एक बहुत अच्छे दोस्त को दे देता हूं, वह दोस्त है—रद्दी की टोकरी !

क्या आप समझते हैं कि आपका सारा काम आपके ही निर्णय पर समाप्त हो जाता है?

सारा तो नहीं, लेकिन काफी. अपने पाठकों के बारे में मैं आपको अब बताऊंगा. मैं कल्पना करता हूं कि मेरे पाठक मेरे जितने ही बुद्धिमान हैं और उन्हें जिंदगी के बारे में वह सब कुछ मालूम है, जो मुझे मालूम है. मैं अपने पाठकों को कुछ 'पढ़ाना' नहीं चाहता और न ही मैं उन्हें कुछ 'निर्देश' देना चाहता हूं. कुछ लेखकों में हमेशा यह डर बना रहता है कि उनके पाठक उन्हें नहीं समझेंगे. वे लेखक समझते हैं कि वह कहीं बहुत ऊंचाई पर खड़े हैं और उनके पाठक कहीं बहुत नीचे.

क्या आपने एक बार यह कहा था कि 'एंटरटेनमेंट' अंग्रेजी का तेरह अक्षरों वाला सबसे बुरा शब्द है.

हां, सिर्फ साहित्य के मामले में.

इसके बावजूद आपकी कहानियां मनोरंजन से बहुत ज्यादा कुछ देती हैं कभी-कभी तो मुझे लगता है कि वे लोगों को खिझाती हैं.

मैंने यह कभी नहीं कहा कि मनोरंजन लेखन का एकमात्र उद्देश्य है. लेकिन मनोरंजन लेखन का पहला उद्देश्य है. किसी रेस्तरां के बारे में पहली बात जो प्रभावित करती है वह होता है—उसका खाना. इसके बाद आप ध्यान देते हैं कि वह साफ-सुथरा है या बैरे नम्र स्वभाव के हैं या नहीं. मनोरंजन कम से कम और अवश्य मिलने वाली वस्तु होनी चाहिए. संदेश उतना आवश्यक नहीं. वे कहानियां सिर्फ कमजोर कहानियां होती हैं जो किसी संदेश का सहारा लेकर ऊपर चढ़ने की कोशिश करती हैं.

बावजूद इसके तालस्तोय ने स्वयं कहा था कि कला को कोई न कोई संदेश लोगों तक पहुंचाना चाहिए.

ऐसा उन्होंने अपने बुढ़ापे के दिनों में सोचा था. . .और इसके बाद भी उन्होंने कई शानदार रचनाएं लिखी थीं. वे उसे रोक नहीं सकते थे. सच पूछा जाये तो असली तालस्तोय वह है जो पहले लिखा करता था, वह नहीं जिसने 'रिजेरेक्शन' लिखी. यों इसके बाद भी ईसाईवाद से संबंधित उनके विवरण को किसी ने गंभीरता से नहीं लिया.

आप गंभीर लेखक के रूप में बहुत कम जाने जाते रहे हैं. आपके पाठकों में सिर्फ बहुत ज्यादा पढ़े-लिखे लोग ही नहीं हैं. जैसे कि मैं आपको बताऊं कि वह लांड्रीवाला जिसके यहां मैं जाता हूं, आपका बहुत बड़ा प्रशंसक है?

यह सच है, क्योंकि वह आदमी जिंदगी के बारे में उतना ही जानता है, जितना कि मैं जानता हूं. हो सकता है उसे हिब्रू या अरमेक न आती हो. लेकिन उसने जिंदगी तो जी ही है. एक सच्चा लेखक अपने शब्दों के सहारे किसी के पास भी पहुंच सकता है.

इसका मतलब है कि आपके लिए गंभीर और लोकप्रिय साहित्य के बीच कोई फर्क नहीं है?

एक फर्क है. एक लोकप्रिय लेखक जानता है कि किस बात को किस तरह कहा जाये, लेकिन वह उसी बात को इतने पुराने ढंग से कहता है कि एक सुघड़ पाठक घटना को पहले ही जान लेता है. 'अन्ना केरेनिना' मनोरंजन करती है और 'किच' उपन्यास भी. सवाल यह है कि क्या किसका मनोरंजन करता है?

ऐसा लगता है कि आप दोनों ही किस्म के पाठकों को प्रभावित करते हैं?

मेरे संपादक ऐब कोहेन ने एक बार कहा था कि सुअर कचरा खाता है, लेकिन अगर आप उसे केक खाने को दें तो वह भी खा लेगा. हम सारे लोगों में सुअर की तरह का ही चरित्र है.

आपने कहा था कि एक लेखक को अच्छी कहानी लिखने के लिए वहां के वातावरण की गहरी पकड़ होनी चाहिए?

जी-हां, सही चरित्र सही लोगों से आते हैं. . .और सही लोगों की गहरी जड़ें होती हैं. आप सिर्फ एक आदमी के बारे में उपन्यास नहीं लिख सकते. आपको किसी एक व्यक्ति-विशेष पुरुष या महिला का चुनाव करना होगा, जिसका नाम व पता हो. सच्चे लेखक कभी अपना माहौल छोड़कर बाहर नहीं जाते.

फिर भी आपके लेखन का बहुत बड़ा हिस्सा अपनी मातृभूमि से दूर हट जाने के बाद का है?

अरे नहीं, मैं अपनी मातृभूमि से अलग नहीं हुआ. सबसे पहली चीज जो मेरे पास थी, वह याददाश्त थी. साहित्यिक प्रायः कमोबेश अतीत पर ही निर्भर करता है. दूसरी बात यह थी कि यहां मैं यहूदी बोलने वालों के साथ रहा. मैंने एक यहूदी अखबार के लिए लिखा. मेरे भाई और मेरे अन्य संबंधी भी यहीं थे. इस तरह से मैं अपनी मातृभूमि से अलग नहीं हुआ था बल्कि एक तरह से मातृभूमि को अपने साथ ले आया था.

आप अध्यात्मवाद, रहस्यवाद और भूत-प्रेतों के बारे में बहुत लिखते हैं?

नहीं, मैं अध्यात्म पर कुछ भी नहीं लिखता. मैं तो मनोवैज्ञानिक समस्याओं जैसे टेलीपैथी, प्रीमानिशन के बारे में लिखता हूं. यह एक विषय है, जिसकी साहित्य ने अब तक उपेक्षा की है. मैं इसे वास्तविक रूप में भी मानता हूं और उपमा की तरह भी इसे इस्तेमाल करता हूं. जीवन, अस्तित्व और आत्मा, आप उसे जो भी कहें, उसमें मेरा विश्वास है. यह ऐसी चीजें हैं जिनके होने का कोई वैज्ञानिक सबूत नहीं है, फिर भी हम उन्हें महसूस करते हैं, कम से कम मैं तो करता ही हूं. आप उसकी तस्वीर नहीं खींच सकते और न ही उसे प्रयोगशाला में ला सकते हैं, लेकिन क्या प्रेम, प्रतिभा और मानवीय आत्मा को प्रयोगशाला में ला सकते हैं?

अच्छा उपन्यास लिखने के लिए आप जरूरी मानते हैं कि लेखक भूत-प्रेतों में आस्था रखे?

ऐसा मैंने कभी नहीं कहा, एक लेखक अस्तित्ववादी हो सकता है, भौतिकवादी हो सकता है और उसके बाद भी वह साहित्य लिख सकता है. लेखक के लिए कोई भी शर्त नहीं होती. जो भी हो, यह एक तथ्य है कि आज तक के सारे महान लेखकों में आपको ईश्वर के दर्शन की इच्छा या उसकी खोज का तत्व मिलता है. महान लोग हमेशा परम-प्रश्न पूछते हैं.

अगर मैं कहूं कि आपका वर्तमान लेखन आधुनिक जीवन के प्रति अपेक्षाकृत कम साहनुभूति रखता है और उस पर पुरानी यादों की गहरी छाप है. . .तो?

मैं नहीं समझता कि यह सच है. मैंने धार्मिक जिंदगी, जिसका मैंने 'द स्लेव' कहानी में उल्लेख किया है; और आधुनिक जीवन, दोनों की ही आलोचना की है. मानव जाति का मैं

> "हम सारे लोगों में सूअर की तरह का ही चरित्र है!"

आलोचक हूं, स्वयं अपना भी. एक अच्छा आदमी आपको बहुत मुश्किल से मिलता है. फिर भी मैं ऐसा कहूंगा कि मैं निराशावादी हो गया हूं, मैं तो हमेशा से ऐसा था.

मेरा अनुमान है और मैं सोच रहा हूं कि आपके पहले के लिखे साहित्य में काफी हिंसा और तीखापन है, जबकि आपका आधुनिक साहित्य काफी शांत और सात्वता की दिशा में एक प्रयास है?

दोनों ही बातें सही हैं. यहूदियों ने किसी पर आक्रमण नहीं किया. किसी से लड़ाई मोल नहीं ली. तिस पर उसी समय उनमें चोर और वेश्याएं भी थीं. जब उनके बारे में लिखने का सवाल आता है तो मैं स्पेन के या पुर्तगाल के चोरों के बारे में नहीं, बल्कि उन चोरों के बारे में लिखता हूं, जिन्हें मैं जानता हूं. यहूदी बहुत शानदार लोग होते हैं और उनका इतिहास अन्य देशों के लिए एक सबक है. फिर भी मैं यह नहीं कह सकता कि हर यहूदी एक साधु था, संन्यासी था. ऐसा कहना झूठ बोलना होगा. मैं अपनी निजी जिंदगी में झूठ बोल सकता हूं, लेकिन अपने पाठकों के साथ मैं ऐसा कभी नहीं करूंगा.

अपने एक बयान 'मैं बच्चों के लिए क्यों लिखता हूं,' में आपने कहा था कि बच्चे इसलिए नहीं पढ़ते कि उस चरित्र से वे अपनी पहचान बनाना चाहते हैं?

यह तो एक मजाक था. वर्षों से लोग कहते रहे हैं कि वे इसलिए लिखते हैं, ताकि उनकी पहचान बने और पाठक उसे इसलिए पढ़ते हैं कि वे अपनी पहचान बना सकें. यह एक चक्र है, एक दुःखद चक्र! किसी भी व्यक्ति को अपनी पहचान बनाने के लिए मुझे नहीं पढ़ना चाहिए. मैं चाहता हूं कि उनका मनोरंजन हो. अगर उन्हें मेरी रचना में अपनी पहचान मिलती है तो मैं कहूंगा, यह मेरा मुनाफा है.

अच्छा, यह बताइए कि कथा-लेखन का भविष्य क्या है?

मेरे खयाल से बहुत अच्छे लेखकों और बहुत ही घटिया लेखकों, दोनों के ही भविष्य सुरक्षित हैं. संसार में हमेशा अच्छा और घटिया साहित्य पढ़ने वालों की उपस्थिति रही है. लेकिन बीच का साहित्य लिखने वालों का भविष्य मुझे अंधकारमय दिख रहा है, क्योंकि इसके पाठकों को उसी तरह का मनोरंजन फिल्म, टेलीविजन या किसी ऐसे माध्यम के जरिये मिल जायेगा, जिसका हमें आज तक पता नहीं है. जब एक युवा लेखक आज लिखने बैठे तो उसे सोच लेना चाहिए कि या तो वह बहुत अच्छा लिखेगा या बहुत घटिया. उसे कभी उन्हें प्रभावित करने की कोशिश नहीं करनी चाहिए जिनकी रुचि विकसित नहीं है.

आप ऐसा कहते हुए किस तरह के लेखन की ओर इशारा कर रहे हैं?

मैं उन किताबों की बात कर रहा हूं जो सुबह-शाम छपती रहती हैं और जिनके लेखकों में प्रतिभा की बजाय बनियागिरी की ज्यादा समझ होती है. मैं अश्लील और अभद्र साहित्य पढ़ना पसंद करूंगा, बजाय इसके कि मैं किसी बीच के साहित्यकार की किताब उठाऊं और रख दूं. इस तरह की किताबों का अपना कोई पता-ठिकाना नहीं होता है और न ही कोई जमीन होती है. . . □

बच्चों का लोकप्रिय लेखक, इसाक सिंगर, जो व्यस्कों के लिए पहेली हैं!

▣ हरिमोहन शर्मा

वस्तुतः सिंगर की कृतियों का सौंदर्य एक ऐसी निर्वसन सुंदरी का सौंदर्य है, जो आभूषण धारण करने पर कम हो जाता है! —आइए, जानें कि ऐसे रचनाकार का व्यक्तित्व और कृतित्व कैसा है और हम पर क्या-क्या प्रभाव छोड़ता है. . .

अब तक जितने साहित्यकारों को नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया है, उनमें 1978 के नोबेल-पुरस्कार विजेता इसाक वेशेविस सिंगर का स्थान सबसे अलग है. एक से अधिक अर्थों में वह बेजोड़ हैं.

पोलैंड में 72 वर्ष पूर्व एक यहूदी परिवार में जन्मे सिंगर एक ऐसी भाषा में लिखते हैं (इडिड्श) जो इसरायल के अतिरिक्त, विश्व के सीमित क्षेत्रों में ही पढ़ी और लिखी जाती है, यही कारण है कि उन्हें यश, मान्यता और सम्मान की प्राप्ति जीवन में बहुत बाद में हुई. नोबेल पुरस्कार भी उन्हें 74 वर्ष की आयु में मिला.

मगर सिंगर इस बात को शुभ मानते हैं, और इस बारे में कभी कोई शिकायत नहीं करते. वे कहते हैं, **"साहित्यकार को यदि तरुणावस्था में ही ख्याति और यश मिल जाये, तो उस पर इसका स्वस्थ प्रभाव नहीं पड़ता. मैं ऐसे अनेक अमरीकी साहित्यकारों के नाम गिना सकता हूं, जिनका साहित्यिक जीवन युवावस्था में प्रसिद्धी मिल जाने के कारण सहसा समाप्त हो गया. वे धूमकेतू की भांति उदित हुए... और उसी भांति अस्त भी हो गये. मुसीबत यह है कि प्रसिद्धी पाकर युवा लेखक जीवन से सीखना बंद कर देता है, और जब कोई सृजनशील कलाकार अपने परिवेश से सीखना बंद कर देता है तो वह मानवता को 'भगवान की देन' नहीं रह पाता. युवावस्था में यश पाकर बॉयरन के कृतित्व और व्यक्तित्व दोनों को हानि हुई."**

जबकि सिंगर का बेजोड़पन इस विरोधाभासी तथ्य में निहित है कि उनकी समस्त श्रेष्ठतम कृतियों का सृजन उनकी युवावस्था में ही हुआ था और एक प्रख्यात साहित्यालोचक के शब्दों में: "सिंगर उन इने-गिने लेखकों में से एक हैं, जिनके लिए नोबेल पुरस्कार एक विभूषण मात्र है. वस्तुतः उनकी कृतियों का सौंदर्य एक ऐसी निर्वसना सुंदरी का सौंदर्य है, जो आभूषण धारण करने पर कम हो जाता है."

सिंगर के लेखन की एक विचित्र बात यह है कि यद्यपि वह एक अल्पज्ञात भाषा के ऐसे ना-मालूम से लेखक थे, जिसके पाठकों का दायरा अत्यंत सीमित और संकुचित था, तथापि विश्वख्याति मिलते ही उन्हें 'सार्विक लेखक' माना जाने लगा. उनके लेखन की सार्विक अपील के मूल में क्या है, इस प्रश्न का उत्तर उस प्रशस्ति-पत्र में मिलता है जो उन्हें नोबेल-पुरस्कार समिति की ओर से दिया गया था. इस प्रशस्ति-पत्र में कहा गया है: "उनकी आवेशपूर्ण कला. . .जिसकी जड़ें पोलिश यहूदी परंपरा में बहुत गहरे गयी हैं, उनके लेखन में ऐसी मानवीय स्थितियों को जन्म देती है, जो सार्विक मानवीय स्थितियों में पूर्ण हैं." एक सार्विक लेखक के रूप में सिंगर की लेखन शक्ति इस बात में निहित है कि वह आज की सभ्यता की अस्त-व्यस्त विसंगतियों का चित्रण इस रूप में कर सकते हैं कि वही जीवन के लुप्त हुए होते मूल्यों की ओर संकेत करने का साधन बन जाती है.

गुह्यविद्या को सिंगर जीवन की सबसे बड़ी और सच्ची विद्या मानते हैं. उनकी सर्वप्रथम कृति 'डेविल इन गोरे' का कथा-विषय है—भूत-प्रेतों का अपसारण. उनकी मान्यता है, **"विज्ञान हमारी सब जिज्ञासाओं को शांत करने में असमर्थ रहा है. गुह्यविद्या की शरण में जाकर ही हम अपनी जरूरी जिज्ञासाओं को शांत कर, उनका समाधान खोज सकते हैं. यदि विज्ञान आत्मा और परमात्मा के अस्तित्व, अ-भौतिक तथा मरणोत्तर जीवन आदि को प्रमाणित करने में सफल हो जाता है, तो मानव मुक्त चयन की अपनी सबसे बड़ी देन से हाथ धो बैठेगा."**

भारतीयों की भांति सिंगर मुक्ति को जीवन का अंतिम रूप मानते हैं, और वह मुक्ति की भावना के वशीभूत हैं. इस बात का पता इसी एक बात से लगता है कि उनकी रचनाओं में मुक्ति का उल्लेख बार-बार आता है. एक स्थान पर वह कहते हैं, "मुक्ति की कामना मानव की मूलभूत कामनाओं में से एक है."

दूरबोध (टेलीपेथी) में सिंगर की गहरी आस्था है, **"मैं मानता हूं कि दूरसंवेदन की क्षमता प्रत्येक व्यक्ति में होती है. न्यूनाधिक मात्रा में, प्रेमियों में यह क्षमता और अधिक बढ़ जाती है और वे एक-दूसरे से दूर रहते हुए भी एक-दूसरे के विचारों को आसानी से 'पढ़' सकते हैं. दूरबोध के बिना कोई प्रेम-प्रसंग संभव नहीं है."**

14 जुलाई, 1904 को रादिमिन (पोलैंड) के यहूदी परिवार में जन्मे इसाक बेशेविस सिंगर ने अपनी कृतियों में अपनी बाल्यावस्था और किशोरावस्था के उन सभी खट्टे-मीठे अनुभवों का वर्णन किया है, जो उन्हें एक यहूदी रब्बी (गुरू) के पुत्र के रूप में, और वारसा की गंदी गलियों में, जहां उनका बचपन बीता था, प्राप्त हुए थे.

1935 में वह पोलैंड से अमरीका आये और बाद में अमरीकी नागरिक ही बन गये. काफी दिनों तक न्यूयार्क से इडिड्श भाषा में प्रकाशित एक दैनिक पत्र 'द न्यूइश डेली फारवर्ड' में नियमित रूप से लिखते रहे.

सिंगर के कथा साहित्य की विशिष्टता यह है कि जब वह अतीत की घटनाओं के बारे में लिखते हैं, तो इतिहास की घटनाएं उनके लिए गौण हो जाती हैं. घटनाओं से अधिक महत्व वह पात्रों के चरित्र-चित्रण को देते हैं. उनके सजीव और सतर्क चरित्र-चित्रण से हमें उस मानव और कशिश का पता चलता है, जिसमें इन पात्रों को जीना पड़ता है. वह मानव के विरोध में खड़ी उन शक्तियों को सामने लाते हैं, जो हर काल में धर्म, जाति और संस्कृति के 'भेदभावों' के बावजूद सक्रिय रहती हैं. उनकी कथा-कृतियों में जिस एकाकीपन, आत्म-संशय और मार्मिकता एवं उग्र प्रेम के दर्शन होते हैं, वह यहूदी जाति के परंपरागत स्वभाव तथा लक्षणों को ही व्यंजित नहीं करता, सच में सार्विक अस्तित्व की सच्चाई को भी उद्घाटित करता है.

उनकी प्रथम कृति 'डेविल इन गोरे' की गणना उनकी सर्वोच्चतम कृतियों में होती है. इस कृति के अतिरिक्त, 'द स्लेव', 'गिम्पैल:द फूल' और 'द फैमिली मोस्कात' में उन्होंने बार-बार जिस 'थीम' को उभारा है, वह पाप के प्रति सहज भाव से अर्पित हो जाने की आदमी की वृत्ति और पुण्य की उसकी ललक से संबंधित है. इस 'थीम' को जितनी सशक्तता और प्रभाविकता के साथ सिंगर ने अपनी रचनाओं में प्रतिबिंबित किया है, अन्य किसी आधुनिक कथाकार ने नहीं किया.

सिंगर का लेखन समकालीन है. किंतु समकालीन होते हुए भी वह भाग्यवादी या मानवद्वेषी नहीं है, अपितु एक ओजस्वी संदेश से ओत-प्रोत है. उनके लेखन में जहां एक ओर आदमी और राष्ट्र-राष्ट्र के बीच व्यर्थ के चल रहे संघर्ष परिलक्षित होते हैं, वहां दूसरी ओर ये संकेत भी मिलते हैं कि इन संघर्षों को कैसे कम या समाप्त किया जा सकता है.

> **"आदमी कितनी जल्दी दुर्वासनाओं का शिकार हो जाता है, लेकिन फिर भी उसकी आत्मा ही उसके लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण रहती है!"**

सिंगर की श्रेष्ठतम कथाकृति है—'गिम्पैल: द फूल'. इसी नाम से उनकी कहानियों का एक संग्रह 1957 में अंग्रेजी में अनूदित होकर प्रकाशित हुआ था. इसमें मुख्य कथा 'गिम्पैल:द फूल' का अनुवाद साल बैलो ने, जो स्वयं नोबेल-पुरस्कार विजेता हैं, किया था. अंग्रेजी में प्रकाशित होने वाली यह उनकी सर्वप्रथम कृति थी और इसके प्रकाशित होने पर ही अंग्रेजी पाठक सिंगर की अनूठी प्रतिमा से परिचित हुए.

कहानी का मुख्य पात्र गिम्पैल उन्नीसवीं सदी के पौलेंड के एक गंदे गांव का सबसे मूर्ख इंसान है. बीस वर्ष के वैवाहिक जीवन के बाद उसे पता लगता है कि उसकी छह संतानों में से एक भी गिम्पैल की नहीं है.

कहानी के अंत में गिम्पैल कहता है, "यह दुनिया महज खयालों की दुनिया है." वह घर छोड़कर, मौत के इंतजार में इधर-उधर घूमता रहता है. इसके बारे में सिंगर की यह टिप्पणी उल्लेखनीय है, **"जो भी है यथार्थ है, बिना किसी प्रवंचना, विद्रूप और पेचीदगी के. परमात्मा ही स्तुत्य है, क्योंकि सिर्फ उसी के दरबार में गिम्पैल को कोई धोखा नहीं होगा."**

सिंगर के उपन्यासों में सबसे अधिक प्रभावशाली है—द स्लेव. आदमी कितनी जल्दी और आसानी से दुर्वासनाओं का शिकार हो जाता है, लेकिन फिर भी उसकी आत्मा ही उसके लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण रहती है. आदमी की इस मूलवृत्ति का अत्यंत प्रभावोत्पादक दिग्दर्शन किया है उन्होंने इस उपन्यास में. सिंगर के जीवन दर्शन की झलक उपन्यास की उस घटना में मिलती है, जिसमें उपन्यास के दो प्रधान पात्रों —सारा और जैकब का, कब्र में मिलन होता है. एक स्थान पर वह कहते हैं, **"भूखा आदमी कोई चुनाव नहीं कर सकता. क्रूरता और नग्न वंचन के आगे कोई जीवन-दर्शन काम नहीं करता. आदमी स्थिति के आगे एकदम असहाय है. . .और रहेगा."**

जैकब की भटकनों और पीड़ाओं के माध्यम से सिंगर दासता और स्वतंत्रता, पाप और प्रायश्चित, नेकी और बदी की पेचीदगियों और उनके विरोधाभासों की खोज करते हैं. जीत निःसंदेह बदी की ही होती है, किंतु वह इस अनिवार्यता को यह कहकर समझाते हैं कि इस जन्म में अपने कर्मों के परिणामों की आशा करना व्यर्थ ही है. आदमी को इस जन्म में अपने पूर्व जन्म के कार्यों के फल, चुपचाप सहने होंगे.

कब्र में सारा और जैकब का मिलन दिखाकर उन्होंने दर्शाया है कि सच्चा प्रेम कालातीत है, और स्थान, न्याय, अन्याय की सीमाओं को लांघने में समर्थ है. सच्चा प्रेम किसी पुरस्कार की आशा नहीं करता, परमात्मा सच्चे प्रेमी को स्वर्ग देकर पुरस्कृत करता है.

उपन्यास में एक पुत्री अपने पिता के दास को आत्म समर्पण करती है. यह सिंगर की इस मान्यता का परिचायक है कि आदमी को पतनोन्मुख करने वाली दुर्वासनाएं, धर्म, भाषा, संस्कृति, वर्ण, जाति आदि के भेदभावों को नहीं मानतीं. इस उपन्यास में उन्होंने सच्चे प्रेम के लिए किये जाने वाले संघर्षों और भोगे जाने वाले कष्टों का जो चित्रण किया है, वह सशक्त और हृदयविदारक होने के साथ-साथ अनिवार्य रूप से सार्थक भी है. □

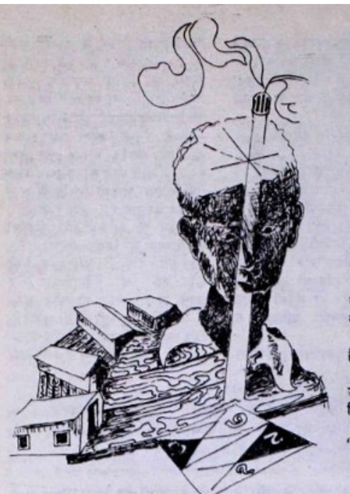

चिमनियां साफ करने वाला

अमरीकी कहानी

• इसाक सिंगर

वह हमारे कस्बे में घरों, कारखानों और भट्ठियों की चिमनियां साफ करने वाला था. लोग हंसी-मजाक में उसे उसका नाम 'याश' नहीं, 'कलुआ' कहकर बुलाते थे. यों तो सभी चिमनियां साफ करने वाले काले ही होते हैं. इसके अलावा वे और हो भी क्या सकते हैं? पर याश तो ऐसा लगता था जैसे वह कोयले की खान से ही निकला हो. उसका रंग तवे की पीठ से भी काला था.

याश अब काफी उम्र का हो गया था. मगर अभी कंवारा था और अपनी बूढ़ी मां के साथ रहता था.

बच्चे उससे बहुत डरते थे, हालांकि उसने कभी किसी को कुछ नहीं कहा. जब तक वह चिमनियां साफ करता रहा, कभी कहीं आग-वाग की दुर्घटना नहीं घटी. वह पूरा हफ्ता ईमानदारी से काम करने के बाद इतवार को खुद की सफाई में जुट जाता. रगड़-रगड़कर नहाता और अपनी मां के साथ गिरजाघर में प्रार्थना करने चला जाता. मगर नहा-धोकर वह पहले से भी काला प्रतीत होता.

एक दिन याश एक दुमंजिले मकान की चिमनी साफ करते-करते धड़ाम से नीचे आ गिरा. उसके गिरने का सबको बहुत दु:ख हुआ. वह हमेशा बहुत संभल-संभलकर छत पर चढ़ता था. . .बिल्ली की तरह दबे पांव. मगर होनी को कौन टाल सकता है. किस्मत बुरी थी. . . वह गिरा भी उस इमारत से, जो कस्बे में सबसे ऊंची थी.

उसके सिर में [illegible] चोट लगी, पर हड्डी-पसली कोई नहीं टूटी.

किसी ने उसे घर पहुंचा दिया. फिर काफी दिन तक उसकी कोई खोज-खबर नहीं मिली. लोग जैसे उसे भूल गये. हां भई, बेचारा चिमनी साफ करने वाला होता ही कौन है? अब अगर वह काम नहीं कर सकता तो कस्बेवाले किसी और को काम पर रख लेंगे.

फियतल मशकवाला हमारे घर सुबह-शाम पानी भर जाया करता था. एक दिन उसने मेरी मां से कहा, "आपने कुछ सुना है? वह अपना याश त्रिकालदर्शी हो गया है."

मेरी मां हंस दी, "यह क्या मजाक है?. . .अफवाहें उड़ाता है तू जानबूझकर?"

"यह मजाक नहीं, अफवाह भी नहीं. . .बिल्कुल नहीं," उसने बताया, "वह सिर पर पट्टियां बांधे, खाट पर बैठा हर किसी के मन की बात बता रहा है."

"तू पागल तो नहीं हो गया!" मेरी मां ने उसे डांटा, "जा अपना काम कर, फालतू बातें मत बनाया कर."

मगर जल्दी ही यह बात कस्बे में आम चर्चा का विषय हो गयी. दिमागी चोट ने सचमुच उसे अंतर्यामी बना दिया था.

हमारे कस्बे में एक उस्ताद था, मिचेलस, उसने भी हामी भर दी कि याश में सचमुच कोई दैवी शक्ति आ बसी है!"

भला कभी किसी ने ऐसी अनहोनी देखी-सुनी है? अगर सिर में चोट लगने से व्यक्ति अंतर्यामी हो जाये और गूढ़ रहस्य बताने लगे, तो आज ऐसे-ऐसे सैकड़ों लोग इसी कस्बे में होते! मगर लोग खुद वहां गये थे और अपनी आंखों से देख आये हैं. वे गवाह हैं कि याश सचमुच कमाल का ज्योतिषी हो गया है. वहां पर एक आदमी ने अपनी जेब से मुट्ठी भर रेजगारी निकालकर पूछा, "याश! इसमें कितने सिक्के हैं?"

याश ने बताया और सही बताया. ऐन अंतिम सिक्का तक ठीक वही निकला.

फिर दूसरे आदमी ने पूछा, "अच्छा याश! पिछले सप्ताह मैं इस समय कहां था?"

याश ने बताया कि वह शराब पी रहा था . . . और उसके

साथ दो जने और भी थे. . .यहां तक कि याश ने उनका हुलिया तक बता दिया मानो वह भी वहां मौजूद रहा हो.

कस्बे केडाक्टर और अधिकारियों ने यह कहानी सुनी तो वे सिर के बल भागे आये. यह न हुआ होता तो शायद वह कभी भी याश की झुग्गी में न आते. वह छोटी-सी झुग्गी इतनी नीची थी कि वहां खड़े हुए लोगों के हैट छत से टकरा जाते. फिर भी वे अंदर पहुंचे. उन्होंने कई सवाल किये. याश सबका जवाब देता रहा. वे दंग रह गये. याश का यश और भी फैलने लगा. किसान उसे 'महात्मा' कहने लगे. अगर डाक्टर ने उसे लगातार आराम करने को न कहा होता तो वे उसे मूर्ति की तरह उठाकर यात्रा पर ले निकलते.

चलो, अच्छा ही हुआ. अब याश जानवरों की तरह नहीं जीता. गुदगुदे गद्दे पर बैठा बातें करता है और उस कुत्ते से खेलता है, जो मां ने पाल लिया था. लोग उसका सम्मान करते हैं. उसका स्नेह पाना चाहते हैं, क्योंकि अब वह सब कुछ जानता है. . .कि किसकी किस जेब में क्या है . . .! किसने कहां कितना धन छुपा रखा है! किसने कितने पैसे शराब में उड़ा दिये!

धीरे-धीरे उसे देखनेवालों की भीड़ बढ़ने लगी. उसकी मां ने मौके का फायदा उठाया और प्रति व्यक्ति एक कोपेक दक्षिणा तय कर दी. लोगों को एक कोपेक में एक अजबा देखना महंगा नहीं लगा. उनकी संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही गयी.

▣

इस बीच कस्बे के डाक्टर ने याश का किस्सा मेयर को लिख भेजा. उन्होंने एक रपट तैयार करवायी और एक दिन राजधानी से कुछ अधिकारी इस कस्बे की तफतीश करने कस्बे में तशरीफ ले आये. उनके पहुंचने से पहले मेयर ने कस्बे की तमाम गलियां साफ करवा दीं. मंडी का आंगन इतना साफ हो गया कि तिनका तक नजर न आया. टाउन हाल पर सफेदी भी करवा दी गयी. मगर यह सब कुछ किसकी खातिर हुआ? याश चिमनियां साफ करने वाले के लिए!

सब अधिकारी और उनके साथ आये कर्मचारी याश को देखने उसकी झुग्गी में गये. उन्होंने सवाल किये और उनके जवाब में याश ने जो कुछ कहा, सुनकर सरकारी लोगों के दिल दहल गये. खुदा जाने! ये सरकारी लोग कौन-कौन-से गुनाह करते हैं, पर याश ने बताया कि वे सब रिश्वतखोर हैं. इस पर प्रमुख अधिकारी ने कहा, "यह चिमनी साफ करने वाला जानता ही क्या है. दरअसल, यह पागल गया है . . . इसे पागलखाने भेज दिया जाना चाहिए."

मगर डाक्टर ने दलील दी कि उसका मरीज अभी सफर नहीं कर सकता. ज्यादा हिलने-डुलने या धक्का लगने से उसकी मौत भी हो सकती है. तब उस प्रमुख अधिकारी और डाक्टर में खासी तू-तू मैं-मैं हुई. यहां तक कि उनमें हाथापाई भी हो गयी. मगर हमारा डाक्टर भी सरकारी अधिकारी था. वह इस इलाके का डाक्टर ही नहीं, एक सम्मानित व्यक्ति भी था. वह बहुत सख्त और खरा आदमी था. उसे कोई खरीद नहीं सकता था. इसीलिए उसे याश की दैवी शक्ति से कोई खतरा नहीं था. . .और इसीलिए वह जीत भी गया. फिर भी वापस जाकर उस अधिकारी ने जो रपट दी, उसमें यही लिखा कि याश त्रिकालदर्शी नहीं बल्कि पागल है. उसने डाक्टर की भी शिकायत कर दी, जिससे डाक्टर का तबादला दूसरे जिले में कर दिया गया.

याश का घाव भरता चला गया और एक दिन वह वापस अपने काम पर भी पहुंच गया. उसकी दैवी शक्ति और भी प्रखर हो उठी. वह पैसे वगैरह लेने घरों में जाता तो औरतें उससे पूछतीं, "याश! इस दराज में क्या पड़ा है?". . ."मेरी मुट्ठी में क्या है?". . ."आज मैंने कौन-सी सब्जी खायी थी?"

याश उनके हर सवाल का सही जवाब दे देता. तब वे उससे पूछतीं, "याश! तू सब यह कुछ कैसे जान लेता है?"

वह कंधे बिचका देता है, "मुझे नहीं मालूम. . .यह सिर में चोट लगने से हो गया है!". . .और वह भोली-सी सूरत बनाकर अपनी राह चल देता.

कस्बे में बहुत से-लोग चोर थे. वे घरों में से जो कुछ भी हाथ लगता, उठाकर ले जाते थे. मगर अब उनके लिए चोरी करना नामुमकिन हो गया. जिसका भी कुछ उठा लिया जाता, वह तुरंत याश के पास जा पहुंचता और वह चोर का नाम बता देता. . .यहां तक कि वह जगह भी जहां सामान छुपा दिया गया था. आसपास के गांवों से लोग आते और पूछकर चोर को पकड़ लेते. इसलिए कई चोर अब जेल की रोटियां तोड़ रहे थे. याश उनकी आंखों का कांटा बना हुआ था. उन्होंने याश को धमकी भी भिजवा दी कि वे उसका मटियामेट कर देंगे. उन्होंने अपनी तरफ से उसका कत्ल करने की कोशिशें भी कीं, किंतु कामयाब नहीं हुए, क्योंकि याश को उनके षड्यंत्र की जानकारी पहले से हो जाती थी.

एक रात वे उसे घर पकड़ने को उसकी झुग्गी में घुस गये, मगर वह कुछ देर पहले ही पड़ोसियों के यहां जा छुपा. चोर हाथ मलते रह गये. इस तरह याश कस्बे में हर घर की जरूरत बन गया. कोई पैसे या चाबी वगैरह कहीं रखकर भूल जाता तो याश झट-से बता देता. किसी का बच्चा खो जाता तो उसकी मां दौड़ी-दौड़ी याश के पास पहुंचती. याश खुद साथ चलकर उसे बच्चे के पास ले जाता. पांच-सात बार ऐसा हुआ कि लोगों के बच्चे जंगल में मिले. इसलिए चोरों ने यह कहना शुरू कर दिया कि याश खुद बच्चा चोरी कर लेता है और फिर अंतर्यामी होने का ढोंग रचा लेता है. मगर किसी को विश्वास ही नहीं हुआ. यह सब कुछ वह मुफ्त में करता था. कोई पैसे देने भी लगता तो वह इनकार कर देता. हां, उसकी

किसकी जेब में क्या है! . . . किसने कहां धन छुपा रखा है! . . . किसने कितने पैसे शराब में उड़ा दिये! . . . वगैरह-वगैरह बातें अगर आपके शहर में कोई आदमी सच और बिल्कुल सच बताने लगे तो क्या आप अंदाज लगा सकते हैं कि पूरे देश में कितनी खलबली मच जायेगी?—पढ़िए प्रख्यात कथाकार की प्रतिनिधि रचना.

मां जरूर गाहे-बगाहे पैसे झड़वा लेती थी, लेकिन सच मानिए, याश को तो सिक्कों की सही कीमत की जानकारी भी नहीं थी.

हमारे कस्बे में एक पादरी भी था. वह एक बड़े शहर से यहां आया था. एक बार शुभ शुक्रवार के दिन उसने धर्म का प्रचार करते हुए उपदेश दिया, तो जानते हैं उसने किसकी चर्चा की? . . .याश चिमनियां साफ करने वाले की. उसने कहा, "नास्तिक लोग नहीं मानते कि मूसा पैगंबर थे. वे कहते हैं कि हरेक चीज का कोई कारण होना चाहिए, कोई प्रयोग, कोई तर्क होना चाहिए. मगर मैं पूछता हूं, याश को कैसे मालूम हुआ कि फलां डबलरोटी वाले की अंगूठी कुएं में गिरी है? . . अगर याश, चिमनियां साफ करने वाले को छुपी हुई चीजों की जानकारी हो सकती है तो कोई पीर-पैगंबर की शक्ति पर कैसे संदेह कर सकता है? . . .हमारे कस्बे में भी कई नास्तिक हैं, मगर उनके पास इसका कोई जवाब नहीं."

इस दौरान याश का किस्सा वारसा और अन्य शहरों में पहुंच गया, अखबारों ने खबरें छापीं, पत्रिकाओं ने लेख प्रकाशित किये और सरकार ने जांच के लिए आयोग बिठा दिया.

कस्बे में घर-बार, सड़कें, दूकानें और गलियां एक बार फिर से साफ होने लगीं. सिर्फ गिरजाघर वाली गली ही पक्की थी, इसलिए बाकी गलियों में जगह-जगह लकड़ियों के फट्टे बिछवा दिये गये. क्योंकि बारिशें शुरू होने वाली थीं और मेयर साहब नहीं चाहते थे कि वार्सा से आ रहे जांच आयोग के अधिकारी कीचड़ से लथपथ हों.

सरायवाले ने भी नये बिस्तर तैयार करवाये. हर तरफ चहल-पहल दिखायी देने लगी. कोई कुछ कर रहा था और कोई कुछ. अकेला याश ही ऐसा था, जिसने कोई तैयारी नहीं की. वह हमेशा की तरह फेरी करके चिमनियां साफ करता रहा.

लीजिए सुनिए कि फिर क्या हुआ. जांच आयोग के पहुंचने से एक दिन पहले बर्फ पड़ने लगी और एकदम कोहरा भी छा गया, तिस पर पिछली ही रात, चैम बेकरी वाले की चिमनी में से अंगारे निकले थे. चैम को खतरा था कि चिमनी में आग न लग जाये. उसने याश को संदेश भेजा. याश अपने औजार लेकर आया और चिमनी साफ करने लगा. जब उसका काम खत्म हुआ, तभी कोहरा छा गया. फिर बेकरी की चिमनी तो कई-कई घंटे लगातार सुलगती है न, इसलिए बहुत-सी कालिख उसी पर जम जाती है. बस, चिमनी साफ करके नीचे उतरते याश का ध्यान तनिक कोहरे की ओर चला गया और वह फिसलकर एक बार फिर नीचे आ गिरा. उसके सिर में चोट लगी, पर पहले जैसी नहीं. खून भी नहीं निकला.

▣ आई. बी. सिंगर,
जन्म : 14 जुलाई 1904 (पोलैंड)
1935 से अमरीका निवासी नोबेल पुरस्कार विजेता-1978 संप्रति : पत्रकार—समाचार पत्र 'फर्वर्ड' से संबद्ध. प्रमुख उपन्यास :— द इस्टेट, दस्टेट, द फैमिली मासकेट, कहानी-संग्रह—ए फ्रेंड ऑफ काफ्का और अन्य कहानियां, पैशन.

२८ साल इंतजार

जब मैं 26 या 27 साल का था, तो मेरी कहानियों का संग्रह एक यिद्दिश प्रकाशक ने छापना स्वीकार किया था. मगर जब उसके प्रूफ मुझे भेजे गये, तो पढ़ते हुए मुझे लगा कि यह मेरी पुस्तक नहीं होनी चाहिये, खासकर पहली पुस्तक तो बिलकुल नहीं होनी चाहिये. . .और जब मैंने प्रकाशक को यह बात कही, तो वह बहुत नाराज हुआ, क्योंकि उन दिनों यिद्दिश पुस्तकों का प्रकाशक इतना अमीर नहीं होता था. सो, उसका नुकसान पूरा करने के लिए मैंने उसे नट हैम्सन की दो पुस्तकें यिद्दिश में अनुवाद करके देने का वादा किया. उसके बाद अपनी अगली पुस्तक छपवाने के लिए मैंने कुछ साल प्रतीक्षा करने का फैसला किया. . . और मैंने 28 साल तक प्रतीक्षा की. □

—इसाक सिंगर

दोस्तो! अगले दिन जांच आयोग वालों ने आकर याश से सवाल पूछे, पर याश कोई जवाब नहीं दे पाया. उसने हर बार दिमाग पर जोर दिया और यही कहकर रह गया कि उसे क्या मालूम. इस तरह पहली चोट ने जबकि उसके दिमाग का कोई खास तंतु सक्रिय कर दिया था, वहीं दूसरी चोट ने उसे निष्क्रिय कर दिया था. अधिकारियों ने फिर-फिर पूछा, "हमारे पास कितने पैसे हैं? . . .हम कहां-कहां रहते हैं?" . . .

याश ने पावलियों की तरह दांत निकालकर दिखा दिये. अधिकारियों का पारा चढ़ गया. उन्होंने पुलिस अधिकारियों को डांटा और नये डाक्टर की हालत खस्ता कर दी. उन्होंने उनसे जवाब-तलबी की कि एक चिमनियां साफ करने वाले निपट गंवार से मिलने के लिए उन्हें इतनी दूर से क्यों बुलाया गया है. सरकार का कितना वक्त और पैसा बेकार हुआ है! . . .

सबने सलीब हाथ में लेकर कसमें खायीं कि एक दिन पहले तक तो याश सब कुछ बता देता था. मगर अधिकारियों ने एक न सुनी. किसी ने उन्हें यह भी बताया कि याश कल फिर चिमनी से फिसलकर गिर गया था और शायद इसीलिए. . .

पर आपको लोगों का स्वभाव तो मालूम ही है. उन्हें सिर्फ वही सच लगता है, जो सामने है और साक्षात् है. तब सहसा पुलिस अधिकारी ने याश के पास पहुंचकर उसके सिर पर मुक्के मारने शुरू कर दिये कि शायद वही पहले वाली इंद्री फिर जाग जाये. पर दिमाग के दरवाजे एक बार बंद होने के बाद आसानी से नहीं खुलते.

दिमाग में कई प्रकार के द्वार, सुराख और कोठरियां हैं. कभी कोई चोट दिमाग को झकझोर देती है तो इसकी समस्त कार्यप्रणाली कुछ और ही हो जाती है. इसका संबंध आत्मा से है. आत्मा के बिना दिमाग तो, बस, पूछताछ भर ही कर सकता है. . .और कुछ नहीं. □

रूपांतर : सुभाष अखिल

एक कवि हम सभी को बचाने के लिए उठ खड़ा होगा !

क्या ईश्वर में सही श्रद्धा उन्हीं लोगों की होती है, जो उसके बारे में शंका करते हैं?—सिंगर द्वारा नोबेल पुरस्कार प्राप्त होने पर आयोजित समारोह में दिये गये विचारोत्तेजक भाषण का सारांश.

हमारे समय के कथाकारों और कवियों को, जैसा कि पहले होता आया है, ऐसी रचनाएं करनी चाहिए, जो सही शब्दों में आत्मिक संतुष्टि प्रदान कर सकें, न कि वे मात्र सामाजिक एवं राजनैतिक विचारों के उपदेशक बन जायें. जो साहित्य पाठक के मन के भीतरी तहों तक न पहुंच पाये, उसकी आत्मा को ऊंचा न उठाये, उसे आनंद और पलायन की अनुभूति न दे सके, वह पाठकों को न तो स्वर्गिक अनुभूति देगा और न ही उसे पढ़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है.

इससे भी इनकार नहीं किया जा सकता कि हमारे समय के लेखकों को इस पीढ़ी की समस्याओं से अच्छी तरह से वाकिफ होना चाहिए. लेखक इस बात को भली-भांति महसूस कर सकता है कि धर्म की शक्ति विशेषकर दैविक भविष्यवाणियों में लोगों का विश्वास मानव इतिहास के किसी भी कालखंड की अपेक्षा आजकल काफी कमजोर होता जा रहा है. आजकल अधिकतर बच्चों का विकास ऐसे वातावरण में हो रहा है, जिसमें ईश्वर में आस्था, पुरस्कार और दंड, आत्मा के अमरत्व और तो और नैतिकता तक में विश्वास को कोई महत्व नहीं दिया जा रहा. आजकल परिवार की धार्मिक नींव टूट रही है. कोई भी तकनीकी उपलब्धि आधुनिक पुरुष की निराशा, उसके अकेलेपन, उसकी आत्महीनता की भावना और युद्ध, क्रांति तथा आतंक के भय में किसी भी प्रकार की राहत नहीं ला पायी है. इस पीढ़ी ने न सिर्फ परमेश्वर में विश्वास खो दिया है बल्कि खुद अपने में, अपने समाज में और उन पर से विश्वास खो दिया है जो उसके बहुत करीब हैं

मुझे यह स्वीकार करते हुए संकोच नहीं होता है कि मैं उस वर्ग में आता हूं जो यह विश्वास करते हैं कि साहित्य में ऐसी शक्ति निहित है कि वह दर्शन, सौंदर्य, धर्म और सामाजिक क्षेत्रों में नये मानदंड स्थापित कर सकती है—नये क्षितिज का निर्माण कर सकती है. प्राचीन यहूदी साहित्य के अनुसार पैगंबर और कवि में कोई मौलिक अंतर नहीं होता. हमारी प्राचीन कविताओं ने तो सिद्धांत तक बनाये तथा लोगों ने इससे जीने का ढंग सीखा.

न्यूयार्क के मेरे कुछ घनिष्ठ मित्र मुझे निराशावादी और नाशवान बताते हैं. लेकिन इस तिरस्कार के पीछे हमेशा विश्वास का कोई कारण होता है. मुझे बाओडेलरे, वरलेने, एडगर एलन पो और स्ट्रिंडबर्ग जैसे इन निराशावादियों व नाशवान लोगों के मध्य राहत महसूस होती है.

किसी भी रचनाकार की निराशावादिता नाशवान न होकर मानव की मुक्ति का एक सशक्त आवेग होता है. जब भी कोई कवि पाठक का विनोद करता है, अस्तित्व का सार जानने के लिए अक्षुण्ण सच्चाई की खोज में लगातार संलग्न रहता है, वह अपने तरीके से समय और परिवर्तन की पहेली को सुलझाने की कोशिश करता है, इन सब परेशानियों का एक सही हल प्राप्त करने की कोशिश करता है, जिससे क्रूरता और अन्याय के इस नरक में प्यार को परिभाषित किया जा सके. मैं कभी-कभी यह सोचता हूं, हालांकि ये शब्द अजीब से लगेंगे कि जब सभी सामाजिक सिद्धांत लड़खड़ा जायेंगे, युद्ध और क्रांतियां समस्त मानव जाति को एक गहन अंधकार में डुबो देंगी; एक कवि हम सभी को बचाने के लिए उठ खड़ा होगा, वह कवि जिसे प्लेटो ने अपने राज्य से निष्कासित कर दिया था. □

▣ निम्न अनुच्छेद श्री इसाक सिंगर ने यहूदी भाषा में भाषण के आरंभ में पढ़ा था—

स्वीडिश अकादमी द्वारा मुझे प्रदान किया गया उच्चकिस्म का यह सम्मान इस बात का प्रतीक है कि उस यहूदी भाषा को अंततः मान्यता दे दी गयी है, जो एक निर्वासित भाषा है, जिसकी अपनी कोई जमीन नहीं, जिसकी अपनी कोई सेना नहीं, जिसको सरकार का समर्थन प्राप्त नहीं है. यहूदी भाषा एक ऐसी भाषा है, जिसके शब्दकोष में हथियारों, गोला-बारूद, सैन्य संचालन, युद्ध चातुर्य के लिए कोई शब्द नहीं है; यह एक ऐसी भाषा है, जिसको नास्तिक और स्वतंत्र दोनों यहूदियों ने तिरस्कृत किया. सच्चाई सिर्फ इतनी है कि हमारे महान धर्मों ने जो कुछ सिखाया, उसे यहूदी-भाषी लोगों ने दिन-रात अपने जीवन में उतारा. वास्तव में वे लोग सही शब्दों में किताबी लोग थे. उन्हें व्यक्ति और मनुष्य के संबंधों के बारे में ज्ञान प्राप्त करने में आनंद आता था. मैं उन्हीं लोगों में पला और बढ़ा.

मैंने पिता तथा मां से वे सभी जवाब भी सुने थे, जिनके अनुसार ईश्वर में सही श्रद्धा उन्हीं लोगों की होती है, जो उसके बारे में शंका करते हैं और सच्चाई की खोज में लगे रहते हैं. मेरे तथा बहुतों के घरों में उठाये गये प्रश्न उन दिनों यहूदी समाचारपत्रों में छपती खबरों से अधिक मौलिक होते थे. मोहभंग की स्थिति के बाद भी मेरा ऐसा विश्वास है कि यहूदियों के सोचने-विचारने के ढंग, बच्चों के लालन-पालन के उनके तरीकों, और दुःख बांटने की उनकी क्षमताओं से कोई भी राष्ट्र बहुत कुछ सीख सकता है. □

क्या प्यार रोटी की तरह है कि उसके टुकड़े किये जा सकें और फिर वे टुकड़े अपनी संतान में बराबर-बराबर बांट दिये जायें—? देश के लिए बलिदान हो जाने वाली औलाद के दर्द का अहसास कराती मार्मिक गाथा—

इतालवी कहानी

चित्रांकन : हरिप्रकाश त्यागी

युद्ध

• लुईगी पिरांदेलो

रात की एक्सप्रेस गाड़ी से जो यात्री रोम से आये थे, उन्हें प्रातःकाल होने तक फेब्रियानो के छोटे-से स्टेशन पर रुकना पड़ा, वहां से उन्हें लोकल गाड़ी पकड़नी थी.

प्रातःकाल होने पर धुएं और यात्रियों से खचाखच भरे हुए दूसरे दर्जे के एक डिब्बे में एक भारी-भरकम-सी, बेहद उदास स्त्री को किसी ने धकेलकर अंदर दाखिल किया, जैसे बड़ी-सी गठरी अंदर फेंकी हो. उसके पीछे ही मुंह से धुआं छोड़ता और कराहता हुआ एक आदमी दाखिल हुआ. वह उस स्त्री का पति था—छोटे-से कद का, दुबला-पतला-सा, कमजोर व्यक्ति, जिसके चेहरे पर मौत की सफेदी पुती हुई थी. उसकी आंखें छोटी-छोटी और चमकीली थीं, जिनमें संकोच और बेचैनी झलकती थी. आखिर, एक जगह बैठ जाने पर उसने उन यात्रियों का नम्रतापूर्वक धन्यवाद किया. तब वह स्त्री की ओर मुड़ा और उसके कोट का कालर नीचे करते हुए उसने पूछा, "ठीक से तो हो न?"

उत्तर देने के बजाय उसकी पत्नी ने अपने कोट के कॉलर को आंखों तक ऊपर उठा लिया.

"क्या मुसीबत है?" उसके पति ने होंठों पर उदासी भरी मुस्कराहट लाकर कहा. तभी उसे लगा उसकी पत्नी वास्तव में सहानुभूति के योग्य है. यह बात यात्रियों को बताना उसका फर्ज है, क्योंकि युद्ध ने उससे इकलौता बेटा छीन लिया है. अपने उस बीस वर्ष के बेटे के लिए उन दोनों ने अपनी जिंदगी न्यौछावर कर दी थी, और अब उससे मिलने रोम जा रहे थे, जहां उसे एक विद्यार्थी के रूप में रहना था और फिर युद्ध में जाना था. उसे विश्वास दिलाया गया था कि कम से कम छह महीने तक उसे मोर्चे पर नहीं भेजा जायेगा. पर अब अचानक एक तार मिला था, जिसमें उन्हें कहा गया था कि वे अपने बेटे से मिल लें.

उसकी पत्नी बहुत बेचैन थी. वह जैसे तड़प रही थी, और किसी-किसी समय जंगली जानवर की तरह कराह रही थी. वह निश्चित रूप से जानती थी कि उसके पति की बातों ने आस-पास बैठे यात्रियों में से किसी के भी दिल में सहानुभूति उत्पन्न नहीं की थी, क्योंकि उनमें से अधिकांश लोगों की वैसी ही हालत थी, जैसी कि खुद उनकी थी. उनमें से एक व्यक्ति जो विशेष ध्यान से उसके पति की बातें सुन रहा था, बोला, "तुम्हें ईश्वर का धन्यवाद करना चाहिए कि तुम्हारा बेटा मोर्चे पर अब जा रहा है. मेरा बेटा तो युद्ध शुरू होने वाले दिन ही मोर्चे पर भेज दिया गया था. वह दो बार जख्मी होकर आ भी चुका है, और अब फिर मोर्चे पर भेज दिया गया है."

"मेरे दो बेटे और तीन भतीजे मोर्चे पर गये हुए हैं." एक यात्री ने कहा.

"पर हमारा तो इकलौता बेटा है." स्त्री के पति ने कहा.

"इससे क्या फर्क पड़ता है? इकलौता बेटा ज्यादा लाड़-प्यार से खराब भी हो सकता है. पर अगर तुम्हारे एक से ज्यादा बेटे होते, तो क्या तुम उन्हें कम प्यार करते? प्यार रोटी की तह नहीं है कि उसके टुकड़े किये जा सकें, और फिर वे टुकड़े अपनी संतान में बराबर-बराबर बांट दिये जायें. एक बाप बिना किसी भेद-भाव के अपना सारा प्यार अपने हर एक बच्चे को देता है, चाहे उसका एक बच्चा हो, चाहे दस हों. और इस समय अगर मुझे अपने दो बेटों का दुःख है, तो इसका यह मतलब नहीं कि मेरा दुःख तुम्हारे दुःख से आधा है, बल्कि सच पूछो तो मेरा दुःख तुमसे दुगना है."

"हां, सच कहते हो तुम," स्त्री के पति ने आह भरकर कहा, "पर मान लो कि एक बाप के दो बेटे हैं, जो मोर्चे पर गये हुए हैं. अगर उनमें से एक मारा जाता है, तो भी एक बच जाता है, जिसे देखकर बाप को किसी हद तक तसल्ली हो सकती है."

"हां," दूसरे ने कुछ गुस्से से कहा, "एक बेटा उसे तसल्ली देने के लिए बच रहता है, पर साथ ही उस बेटे के लिए बाप

को जिंदा रहना पड़ेगा. अगर किसी बाप का इकलौता बेटा मारा जाये, तो बाद में बाप भी मर सकता है और अपने दुखों से छुटकारा पा सकता है. दोनों में से किस बाप की हालत ज्यादा बुरी होगी?"

"क्या मूर्खता है!" एक और यात्री ने कहा.

वह हांफ रहा था. उसकी फूली हुई आंखों में से जैसे उसके दिल में की हिंसा फूट पड़ रही थी.

"क्या मूर्खता है?" उसने फिर कहा. वह हाथों से अपने मुंह को ढकने की कोशिश कर रहा था, ताकि दो टूटे हुए दांतों को छिपा सके, "क्या मूर्खता है! क्या हम अपने स्वार्थ के लिए ही अपने बच्चों को जन्म देते हैं?"

अन्य यात्रियों ने दुखभरी नजरों से उसे देखा. वह यात्री, जिसका बेटा युद्ध के शुरू होते ही मोर्चे पर भेज दिया गया था, आह भरकर बोला, "तुम ठीक कहते हो, हमारे बच्चे हमारे नहीं हैं, वे हमारे देश के बच्चे हैं!"

"क्या मूर्खता है! अपने बच्चों को जन्म देते समय क्या हम अपने देश के बारे में सोचते हैं? हमारे बच्चे जन्म लेते हैं, इसलिए कि उन्हें जन्म लेना है, और जब वे जन्म लेते हैं, तो हमारी जिंदगी भी अपने साथ ले लेते हैं. असलियत यही है. हम तो अपने बच्चों के होते हैं, पर वे हमारे नहीं होते. और जब वे बीस साल की उम्र के हो जाते हैं, तो बिलकुल वैसे लगते हैं, जैसे हम अपनी बीस साल की उम्र में थे."

▣

उस मोटे आदमी ने फिर कहना शुरू किया, "जब हमारे बच्चे बीस साल की उम्र के हो जाते हैं, तो हम उनकी भावनाओं के बारे में क्यों न सोचें? क्या यह स्वाभाविक नहीं है कि अपनी उस उम्र में वे अपने देश के बारे में सोचें. . .मैं अच्छे बच्चों की बात कर रहा हूं. . .और देश-प्यार को माता-पिता के प्यार से बड़ा समझें? क्या यह स्वाभाविक नहीं है कि वे सोचें कि हम बूढ़े हो गये हैं. . .और हमें घर में रहना चाहिए? अगर हमारे देश का कुछ महत्व है, अगर हमारा देश हमारे लिए रोटी की ही तरह एक स्वाभाविक आवश्यकता है, जिसे हम इसलिए खाते हैं कि भूख से मर न जायें, तो किसी न किसी को उसकी रक्षा के लिए आगे बढ़ना ही चाहिए. और हमारे बेटे बीस साल की उम्र के हो जाने पर उसकी रक्षा के लिए आगे बढ़ते हैं, और वे नहीं चाहते कि हम आंसू बहायें, क्योंकि मरना उनके लिए खुशी की बात है, मैं अच्छे बच्चों की बात कर रहा हूं. अब अगर कोई अपनी छोटी उम्र में खुशी से मरता है और जीवन के घिनौनेपन से, उकताहट से, कमीनगी से, निराशा की तल्खी से बच जाता है, तो हमें उसके लिए और क्या चाहिए? हर किसी को रोना बंद करना चाहिए, हर किसी को खुश रहना चाहिए, जैसे कि मैं खुश हूं. . ."

"बिलकुल ठीक! . . .बिलकुल ठीक! . . ." सभी ने उससे सहमत होकर कहा.

वह स्त्री जो एक कोने में गठरी-सी बनी बैठी थी, चुपचाप सुन रही थी. वह अपने पति और अन्य व्यक्तियों की बातों में सहानुभूति खोजने की कोशिश कर रही थी, जिससे उसे अपने उस असीम दुःख में सांत्वना मिल सके. पर किसी की भी बातों में उसे सहानुभूति दिखायी न दी. और यह देखकर कि कोई भी उस के दुःख में हिस्सा नहीं बंटा रहा है, उसका दुःख और भी बढ़ गया.

पर अब उस यात्री की बातें सुनकर उसे आश्चर्य हुआ और वह भौंचक्की रह गयी. उसने अचानक महसूस किया कि वास्तव में उन लोगों का कोई दोष नहीं था, और यह सोचना भी गलत था कि वे उसे समझ नहीं सके हैं. वास्तव में, दोष उसका अपना था, क्योंकि वह स्वयं उस स्तर पर पहुंच नहीं सकी थी. माताओं और पिताओं ने, बिना रोये, अपने बेटों को युद्ध में ही नहीं, बल्कि मौत के मुंह में भेज दिया था.

उसने अपना सिर ऊपर उठाया. फिर वह कुछ मुड़ी और बड़े ध्यान से मोटे आदमी की बातें सुनने लगी, जो बता रहा था कि उसका बेटा किस तरह एक बहादुर की मौत मरा है, और उसने अपने बादशाह और अपने देश के लिए खुशी से जान दे दी है. तब स्त्री को लगा कि वह ऐसी दुनिया में लड़खड़ा गयी है, जिसकी उसने कल्पना भी नहीं की थी. और वह उस दुनिया से कितनी अनजान थी! उसे यह देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि हर एक यात्री उस बहादुर पिता को बधाई दे रहा था, जो बड़ी शांति से अपने बेटे की मौत के बारे में बता रहा था.

▣ लुईगी पिरांदेलो
जन्म : 28 जून, सन् 1867.
'द ओल्ड एंड द यंग', 'शूट', 'राइट, यू आर इफ यू थिंक यू आर', 'गिया कोमिनो' 'सिक्स करैक्टर्स इन सर्च आफ एन ऑथर' जैसी कृतियों के यशस्वी रचनाकार.
नोबेल पुरस्कार : सन् 1934.
निधन : 10 दिसंबर, सन् 1936

तभी अचानक, जैसे उसने अब तक कहा गया कुछ सुना ही न हो, और जैसे वह एक सपने में से जागी हो, स्त्री ने मुड़कर पूछा, "तो क्या तुम्हारा बेटा सचमुच मारा गया है?"

प्रत्येक व्यक्ति ने उसकी ओर देखा. बूढ़े आदमी ने भी मुड़कर उसकी ओर देखा. उसकी बड़ी-बड़ी, बाहर निकली हुई, आंसुओं भरी, धुंधली-सी आंखें एकटक उसे देखने लगीं. उत्तर में उसने कुछ कहना चाहा, पर उसके शब्द जवाब दे गये. वह उसे एकटक देखता रहा. और तभी, जैसे उस प्रश्न के बारे में सोचते हुए, उसे अचानक एहसास हुआ कि उसका बेटा सचमुच मारा जा चुका है . . . हमेशा-हमेशा के लिए उससे अलग हो गया है. एकाएक उसका चेहरा सिकुड़कर भयानक रूप से विकृत हो गया. तब उसने जल्दी से अपनी जेब में से रूमाल निकाला और बिलख-बिलखकर रोने लगा.

अब रोकने पर भी वह अपनी रुलाई रोक नहीं पा रहा था. □

रूपांतर : सुखबीर

अगला अंक

आदमी को जिंदा बनाये रखने की कोशिश में विश्व के महान कथाकार कितने हिस्सेदार हैं? दुनिया के आला दिमागों से मिलिए और पढ़िए—

● रजत कै. अरोड़ा

▣ आज के लिए नये और कल के लिए हमेशा ताजा विशेषांक के लिए अपने एजेंट को आज ही सचेत कर दें

नोबेल पुरस्कार-विजेता-कथाकार विशेषांक : दो

रवींद्रनाथ ठाकुर, जॉन स्टेन बैंक, एलियास कानेते, जॉन गॉल्सवर्दी, फ्रांस एमिल, सिल्लांपा, सेमुअल बेकेट, सॉल बेलो, लुइगी पिरांदेलो, इवान बुनिन, ग्रेजिया देलेछा, अर्नेस्ट हेमिंग्वे, विलियम फाकनर, अनातोले फ्रांस, बोरिस पास्तरनाक की प्रतिनिधि कहानियां.

▣ रवींद्रनाथ ठाकुर : प्रथम भारतीय नोबेल पुरस्कार विजेता की ताजा पहचान . . .

- रवींद्रनाथ ठाकुर का रचना-संसार
—सुदर्शन, बनारसीदास चतुर्वेदी और चंद्रगुप्त विद्यालंकार से बातचीत
- चित्रकार रवींद्रनाथ ठाकुर—प्रयाग शुक्ल की नजर में
- रवींद्रनाथ ठाकुर : व्यक्ति चित्र—अशीष सिन्हा का आलेख
- 1913, जब रवींद्रनाथ ठाकुर को नोबेल पुरस्कार मिला

▣ एलियास कानेती की नजर में कापका की दुनिया
—विनोद भारद्वाज की कलम से

▣ क्या नोबेल पुरस्कार पर पश्चिमी देशों की ही इजारेदारी है?
—वीर राजा द्वारा आयोजित परिचर्चा में भाग ले रहे हैं—अमृतलाल नागर, कुंवर नारायण, मुद्राराक्षस, राम लाल.

▣ नोबेल पुरस्कार : अफ्रेशियायी देशों के साथ सौतेला व्यवहार क्यों?
—भीष्म साहनी की टिप्पणी

▣ टूटे हैं बार-बार हम, इस मुकाम पर . . .
—हरीश पाठक प्रस्तुत कर रहे हैं, नोबेल पुरस्कार-विजेता साहित्यकारों के जीवन से जुड़े अविस्मरणीय प्रेस-प्रसंग.

▣ विराट का संयत रूप लक्षित होता है लेखक के अप्रस्तुत विधान में
—सॉल बेलो का रचना संसार.

▣ सार्त्र ने नोबेल पुरस्कार क्यों अस्वीकार किया?
—दुनिया के सबसे बड़े पुरस्कार को ठुकराने की कहानी

▣ हमें यह बकवास बंद करनी है!
—यह सिंगर ने कहा था, क्यों और किस संदर्भ में?—इसे बतला रहे हैं—कन्हैयालाल नंदन.

▣ पॉस्तरनाक से बातचीत

▣ क्या प्रतिभाएं स्थान और राजनीति की मोहताज हैं?

▣ लिली होमर : उनसत के घर.
—हिमांशु जोशी का रिपोर्ताज

▣ **अन्यतम शीर्षक**
—स्तालिन की आंख में खटकता कांटा
—अधूरे नाटक का हश्र
—लिखना इतना आसान
—फ्रांसीसी तर्क बोध
—जब हेमिंग्वे को नोबेल पुरस्कार मिला

आपकी बात, अपनी बात, लघुकथाएं आदि स्थायी स्तंभों सहित

सारिका

16 अक्तूबर, 1982

हर किसी के लिए जरूरी बेहद जरूरी पत्रिका

खेल-कथा-विशेषांक

एक और दो 1 नवंबर तथा 16 नवंबर, 1982

- **हिंसक और बर्बर खेलों के शौकीन**
—जब अकबर ने संन्यासियों को 'कौरव-पांडव' दो दलों में बांटकर शासन से महाभारत का कत्लेआम रचाया
- **खेल, जिनमें मौत रेफरी हुआ करती थी!**
—हारने वाले की मौत तय करने वाले खेल
- **खेल : प्यार बढ़ाते हैं या व्यापार?**
—खेलों में बढ़ती हुई व्यावसायिकता का मूल्यांकन
- **खेलों में राजनीति क्या खिलवाड़ करती है?**
—राजनीतिक हस्तक्षेप की कहानियां और हानियां
- **भारत देश के दमदार खेल**
—प्राचीन भारतीय खेलों की परंपरा और संस्कृति
- **आंखों देखा हाल सुनाने वालों के अनुभव**
—उन क्षणों में वे क्या महसूस करते हैं और दर्शकों के बारे में क्या सोचते हैं
- **क्या खेल-कथा-साहित्य में. वृद्धि खेलों के स्तर में सुधार ला सकती है?**
—खेल और साहित्य प्रेमियों के उद्गार
- **क्रिकेट के विकेट उखाड़कर फेंक दो!**
—क्रिकेट के खिलाफ बनती राय का विवादास्पद मामला.
- **खोटे खेलों की करामात**
—ताश, जुआ, चौपड़ आदि के सामाजिक पहलू
- **योगाभ्यास : कीजिए, खेल बनाने का प्रयास**
—संभावना के रूप में अगर खेल मानकर इसकी भी प्रतियोगिताएं की जाने लगें तो कैसा रहे?
- **खेल-खिलाड़ी और फिल्म अभिनेत्रियां**
—खिलाड़ियों और अभिनेत्रियों के प्रेम और विवाह प्रसंग
- **मशहूरी का जवाब या अमीरी के ख्वाब?**
—विज्ञापनों में खिलाड़ियों के इस्तेमाल का चलन
- **एशियाड के ये मेक-अप मैन!**
—एशियाड की तैयारी में संलग्न मजदूरों के सरोकार

नारी यातना-कथा-विशेषांक

एक और दो : १ दिसंबर तथा १६ दिसंबर, ८२

- **हर जिस बिकती हैं निर्वसना बेटियों के दाम!**
—विज्ञापन की दुनिया में औरत का इस्तेमाल
- **फिल्मों में औरत का चांस : रोमांस या डांस!**
—हिंदी फिल्मों में स्त्री पात्रों की स्थिति का जायजा.
- **खाड़ी देश : औरत पर टिकी भूखी निगाहें!**
—औरतों की तस्करी और बिक्री
- **बलात्कार : हर औरत पर दोहरी मार!**
—कारण, निवारण और कानून
- **सती प्रथा क्या फिर लौट रही है?**
—ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से वर्तमान स्थिति तक
- **दहेज : कैसे करें कितना परहेज?**
—परिवार, समाज तथा सरकार की भूमिका
- **सड़कों पर लड़कियों की तरफ सरकते हाथ!**
—छेड़-छाड़ के सामाजिक आयाम
- **कद नहीं, बदनाम पेशों का दर्द!**
—नर्स, सेक्रेटरी, सेल्समर्ल एवं मॉडलिंग का तकाजा
- **उड़ते जहाज में गूंजती अप्सराओं की चीख!**
—वायुयान परिचारिकाओं के काम और मुश्किलें
- **युद्ध में क्रुद्ध पुरुष के विरुद्ध!**
—युद्धकाल में नारी शोषण
- **गुलाम बच्चे पैदा करने की बिकाऊ मशीन!**
—नीग्रो और हब्शी औरतों पर गोरों के जुल्म
- **कोयला खानों में सिसकती कोयल!**
—कोयला खदानों में मजदूर औरतों के हालात
- **दुल्हन वही जो दहेज लेकर आये!**
—मध्यवर्गीय परिवारों में दूल्हे की प्रतीक्षा !
- **पुरुषो सावधान, औरतें तुम्हारे बारे में यह सोचती हैं . . .**
—नारी मन के मानसिक आयाम
- **नरक में रहकर मोक्ष की कामना!**
—वाराणसी, वृंदावन आदि में जीने के नाम पर मरती हुई विधवाओं का जीवन.
- **औरत, औरत को न मारे तो औरत न हारे!**
—नारी यातना में नारी का हाथ.

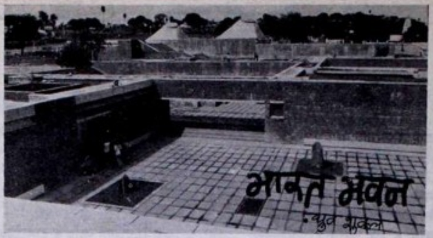

भारत भवन के बाहर

मध्यप्रदेश कला परिषद. उस्ताद अलाउद्दीन खां संगीत अकादेमी. साहित्य परिषद. उर्दू अकादेमी. आदिवासी लोक कला परिषद. कालिदास अकादेमी. पुरातत्व विभाग.

मध्यप्रदेश कला परिषद ने 1973 में भोपाल में प्रतिष्ठाधर्मी आयोजन, "उत्सव" की शुरूआत इसी के साथ उसका निरंतर सक्रिय रूप उभरकर सामने आया. अब हालत यह है कि हर साल भोपाल और प्रदेश के 8 संभागों और अनेक जिलों में संगीत, नाटक, काव्य पाठ और चित्र प्रदर्शनी के आयोजन होते हैं. इसी श्रृंखला में खजुराहो नृत्योत्सव, मध्यप्रदेश नाट्य समारोह और मध्यप्रदेश कला प्रदर्शनी के आयोजन भी हैं. कला परिषद समकालीन सृजनकर्म को शब्द में सुरक्षित करने की दृष्टि से आलोचना द्वैमासिक "पूर्वग्रह" और "कलावार्ता" के मासिक प्रकाशन के साथ ही प्रदेश और देश के कलाकारों की कृतियों के मोनोग्राफ का प्रकाशन और चित्रों आदि का पुनर्मुद्रण भी करती है. विद्वानों और रसिकों के तादात्म्य के लिए "अरविंद व्याख्यान माला", कला संस्थाओं और कलाकारों को अनुदान और सांस्कृतिक विनिमय के लिए कला परिषद ने अनेकायामी प्रयत्न किये हैं. विख्यात हिंदी कवि आलोचक गजानन माधव मुक्तिबोध पर केंद्रित एक फिल्म "सतह से उठता आदमी" प्रसिद्ध फिल्म निर्देशक मणि कौल के निर्देशन में कला परिषद के आर्थिक सहयोग से निर्मित हुई है. इस फिल्म को अंतरराष्ट्रीय फिल्म समारोहों में भी ख्याति मिल चुकी है.

उस्ताद अलाउद्दीन खां संगीत अकादेमी हर तिमाही में देश के 4 या 6 युवा प्रतिभाशाली संगीतकारों के लिए "आरंभ", प्रति वर्ष उस्ताद अलाउद्दीन खां स्मृति संगीत समारोह, कथक नृत्य शैलियों पर केंद्रित "कथक प्रसंग", "ताल प्रसंग", "ध्रुपद समारोह", "दुर्लभ वाद्य विनोद" और प्रसिद्ध संगीतज्ञों पर केंद्रित महत्व के आयोजन करती है. भारतीय संगीत की दुर्लभ गायन-वादन शैलियों—टप्पा, सारंगी, बीन और पखावज में देश के प्रसिद्ध गुरुओं के पास जाकर मध्यप्रदेश के कलाकारों के गहन प्रशिक्षण के लिए आर्थिक सहायता देती है. अकादेमी ने भोपाल में गुरू-शिष्य परंपरा पर आधारित कथक नृत्य और गायन की दुर्लभ शैली ध्रुपद की उच्च शिक्षा के लिए "चक्रधर नृत्य केंद्र" और "ध्रुपद केंद्र" स्थापित किये हैं. इन केंद्रों का संचालन प्रसिद्ध कथक गुरू श्री कार्तिक राम और विख्यात ध्रुपद गायक उस्ताद जिया-फरीदुद्दीन डागर कर रहे हैं. अभी हाल ही में मध्यप्रदेश के संगीतकारों—उस्ताद रजब अली खां, उस्ताद अलाउद्दीन खां, उस्ताद हाफिज अली खां, पंडित कुमार गंधर्व और डागर बंधु आदि के सांगीतिक अवदान पर महत्वपूर्ण 6 पुस्तकों का प्रकाशन भी किया है.

साहित्य परिषद ने प्रदेश के वरिष्ठ साहित्यकारों का सम्मान और युवा प्रतिभाओं के विकास के प्रति संकल्पबद्ध होकर 7 अखिल भारतीय और 16 प्रादेशिक पुरस्कार स्थापित किये हैं. राज्य के युवा लेखकों की कृतियों का प्रकाशन और राज्य में प्रकशित 11 लघु पत्रिकाओं को परिषद अनुदान देती है. विचारों के आदान-प्रदान के लिए अनेक जिलों में व्याख्यान मालाएं और विभिन्न भाषाओं में काव्य पाठ के नियमित आयोजन भी करती है. संस्कृत, मराठी और सिंधी साहित्यों पर केंद्रित आयोजन संपन्न हो चुके हैं. प्रदेश के दूर-दराज इलाकों में परिषद द्वारा स्थापित "पाठक-मंच" के माध्यम से नयी पुस्तकों की समीक्षा और बहस के लिए पाठकों की सक्रिय हिस्सेदारी के सफल प्रयत्न किये जा रहे हैं. उच्च स्तरीय आयोजनों और साहित्य संस्थाओं के लिए वार्षिक अनुदान की योजनाएँ क्रियान्वित की गयी हैं.

उर्दू अकादेमी की स्थापना प्रदेश के उर्दू साहित्य के संरक्षण और प्रोत्साहन के लिए को गयी है. इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए हर वर्ष मुशायरा, परिसंवाद और उर्दू नाट्य समारोहों का आयोजन करती है. प्रदेश के उर्दू साहित्यकारों की किताबों का प्रकाशन, प्रकाशन के लिए अनुदान, अदबी संस्थाओं और उर्दू पुस्तकालयों को अनुदान, उर्दू नाटकों का मंचन अकादेमी की योजनाओं में प्रमुख हैं. पुरस्कारों की शृंखला में उर्दू अदब में लगातार काबिले जिक्र अदबी खिदमात के लिए मीरतकी मीर, कुलहिन्द ऐजाज और 6

सूबाई ऐजाज प्रति वर्ष दिये जाते हैं.

मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद आदिवासी और लोक कलाओं की अकादेमी है, इसका उद्देश्य मध्यप्रदेश में आदिवासी लोक संगीत, लोक नृत्य, लोक रंगमंच, लोक साहित्य और अन्य आदिवासी और लोक कलाओं का समस्त संभव उपायों द्वारा सम्मान, विस्तार, प्रोत्साहन और संरक्षण करना है. इस दिशा में अकादेमी प्रामाणिक सर्वेक्षण और प्रलेखन कर रही है. आदिवासी और लोक कला शिविर तथा क्षेत्रीय आदिवासी और लोक कला समारोह आयोजित कर रही है. आदिवासी और लोक कला रूपों में मोनोग्राफ्स का प्रकाशन, इन कला रूपों पर केंद्रित एक चौमासिक पत्रिका का प्रकाशन इसकी महत्वपूर्ण योजना है, जिन पर कार्य आरंभ हो गया है.

मध्यप्रदेश रंगमंडल के लोक कलाकारों और लोक नृत्य, संगीत और रंगमंच के लिए चक्रधर फैलोशिप का कार्यान्वयन भी परिषद के अंतर्गत है.

कालिदास अकादेमी उज्जैन में स्थापित है. अकादेमी का भवन, निर्माण की ओर अग्रसर है जिसमें पुस्तकालय, व्याख्यान और परिसंवाद कक्ष, लघु संस्कृत रंगमंच, शोधकर्त्ताओं के लिए प्रकोष्ठ और अन्य सुविधाओं के साथ एक अनुशीलन अनुभाग भी होगा. शास्त्रीय और समकालीन रंगमंच संबंधी वस्तुओं की स्थायी और अस्थायी प्रदर्शनी की सुविधा होगी. नाट्य-शास्त्र के अनुसार समस्त आनुषंगिक सुविधा से संपन्न एक ऐसे प्रेक्षागृह का निर्माण होना है जिसमें क्लासिकी संस्कृत रंगमंच के अन्वेषण, पुनराविष्कार तथा सर्जनात्मक प्रयोग का कार्य किया जा सके. एक वृहताकार खुला रंगमंच और प्रेक्षागृह की भी योजना है जिसमें बड़ी संख्या में प्रेक्षक समुदाय के बैठने की व्यवस्था होगी. अभी तक अकादेमी ने क्लासिकी संस्कृत रंगमंच के क्षेत्र में गहरे अन्वेषण के लिए अनेक उल्लेखनीय वर्कशाप और नाटकों की प्रस्तुति का कार्य किया है. कालिदास की रचनाओं के सुलभ संस्करण और विभिन्न विद्वानों द्वारा संपादित संस्करणों के प्रकाशन, कालिदास की कृतियों के काव्यानुवाद, नाट्य शास्त्र के विस्तृत व्याख्यात्मक और रंग कर्मियों के लिए उपयोगी अनुवाद आदि का महत्वाकांक्षी कार्यक्रम हाथ में लिया है. एक लघु संस्कृत रंगमंडल की स्थापना भी अकादेमी ने की है. पुरातत्व विभाग, मध्यप्रदेश शासन के संस्कृति विभाग के अंतर्गत एक स्वतंत्र संस्था है. इसका एक क्षेत्रीय कार्यालय और रासायनिक कर्मशाला भी है. यह विभाग उत्खनन और सर्वेक्षण के लिए राज्य में सक्रिय रूप से काम कर रहा है. राज्य के लगभग 1000 स्मारकों और प्राचीन स्थलों के परिरक्षण की जिम्मेदारी इसके ऊपर है.

भारत भवन के भीतर

रूपंकर, रंग मंडल, अनहद और वागर्थ

रूपंकर, भारत भवन में स्थापित ललित कलाओं का संग्रहालय है. इसके निदेशक प्रसिद्ध चित्रकार और चिंतक श्री जगदीश स्वामीनाथन हैं. यह सग्रहालय आधुनिक कला, आदिवासी और लोककला की कृतियों से संबद्ध किया जा रहा है इस संग्रहालय में मध्यप्रदेश के 20 जिलों की आदिवासी और लोककला कृतियों का एक संग्रह किया गया है. अनेक प्रख्यात कलाकारों ने अपनी कलाकृतियां इस संग्रहालय को प्रदान की हैं. आदिवासी लोककला और नागर कलाओं का पूरे देश में यह अनूठा संग्रहालय है. इसी संग्रहालय से ग्राफिक्स, मूर्ति शिल्प, चित्रकला और मिट्टी के शिल्प से संबंधित एक कर्मशाला मध्यप्रदेश के युवा कलाकारों के प्रशिक्षण के लिए संबद्ध की गई है. इसी के साथ ललित कलाओं का पुस्तकालय, पत्राचार और दस्तावेज आदि का संग्रह भी किया जायेगा.

मध्यप्रदेश रंग मंडल के निदेशक श्री ब. व. कारंत हैं. रंगकर्म के लिए भारत भवन में "अंतरंग" और "बहिरंग" दो रंगशालाएं निर्मित की गई हैं. बहिरंग एक ऐसा खुला रंगमंच है जो संसार में एक-दो जगह ही उपलब्ध है. रंग मंडल का एक संग्रहालय भी विकसित किया जा रहा है जिसमें भारतीय रंगमंच से संबंधित सभी उपकरण और दस्तावेज आदि को उपलब्ध कराया जायेगा. इस समय रंग मंडल में 20 संभावनाशील नाट्यकर्मी साधनारत हैं.

अनहद भारत भवन में स्थापित शास्त्रीय और लोक संगीत का सग्रहालय है. इस संग्रहालय में फिलहाल देश के वरिष्ठ और युवा लगभग 150 संगीतकारों का संगीत संग्रहीत किया गया है. इसमें 300 एल. पी. और ई. पी. रिकार्डस, 400 स्पूल केसिट टेप्स संग्रहीत हैं. रसिकों और संगीत की घनिष्टता को बढ़ाने के लिए "संगीत रसास्वादन" पर संगीत के महत्वपूर्ण विद्वानों के व्याख्यान अनहद ने आयोजित किये हैं. संगीत श्रवण के लिए एक "आस्वाद कक्ष" बनाया जा रहा है जो श्रोताओं को संगीत श्रवण के लिए शीघ्र उपलब्ध होगा. वाद्यों के निर्माण और उनके वादन के लिए वर्क शॉप आयोजित करने की योजना भी है.

वागर्थ का लक्ष्य पांडुलिपियों, मुद्रित पुस्तकों, टेप आदि के माध्यम से उपलब्ध समस्त अभिलेखों को संग्रहीत करना है. समकालीन कवियों, भाषा-विशेषज्ञों के परामर्श से प्रत्येक प्रमुख भारतीय भाषा का एक विभाग भी बनाया जा रहा है. वागर्थ प्रमुख रूप से 14 भारतीय भाषाओं की कविता का एक वृहत पुस्तकालय होगा इसमें काव्य पाठ की व्यवस्था, कविता-अध्ययन, परिसंवाद और कर्मशालाओं का संयोजन, काव्य संकलनों का संग्रह और भारतीय भाषाओं में कविताओं के अनुवाद को प्रोत्साहन आदि प्रमुख गतिविधियां हैं.

इसके अलावा भारत भवन में "आश्रम" स्थापित किया गया है. ये महत्वपूर्ण संगीतकारों, कवियों, कलाकारों, रंगकर्मियों आदि के लिए उपलब्ध होगा और उन्हें सृजनकर्म के लिए सभी आवश्यक सुविधाएं भी जुटायी जायेंगी. उद्देश्य यह है कि निश्चित अवधि तक महत्वपूर्ण सृजनकर्मियों से युवा प्रतिभाओं और सहृदयों का आसान संपर्क स्थापित किया जा सके. □

दर्शकों का नया वर्ग

• ब. व. कारंत

फिल्म निर्माता, रंग निदेशक, संगीतकार, आजकल मध्यप्रदेश रंगमंडल के निदेशक

भोपाल में स्थापित मध्यप्रदेश रंगमंडल में संरचना की जो ताजगी और चुनौतियां है, वे तंत्र या विचारों की दृष्टि से अपूर्व हैं. यह किसी विस्तार कार्यक्रम का हिस्सा नहीं है बल्कि कला परिषद द्वारा प्रवर्तित विविध गतिविधियों का परिणाम है, जो कि बढ़कर रंगमंडल की स्थापना के रूप में सामने आया है. यह बिल्कुल ही नया क्षेत्र है, जिसे रंगमंडल के 24 कलाकारों द्वारा अपनी अलग-अलग पृष्ठभूमियों, परंपराओं, अन्तर्बाधाओं, चिंताओं और संवेदनशीलता का योगदान करते हुए पोषित किया जा रहा है. यह राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय की रिपर्टरी से पूरी तरह अलग है. रिपर्टरी में ऐसे उच्च प्रशिक्षण प्राप्त व्यावसायिक अभिनेता होते हैं, जिन्हें नाट्य विद्यालय की युक्तियुक्त परिश्रमपूर्ण अध्ययन प्रक्रिया से गुजरकर ठोस अनुभव प्राप्त रहता है. मध्यप्रदेश देश के ठीक बीचों-बीच है. इसमें भांति-भांति की बोलियां, लोक और आदिवासी परंपराएं विभिन्न सांस्कृतिक रूप और शैलियां हैं. इसलिए, यह कार्य चुनौतीभरा और अत्यावश्यक दोनों ही बन गया है. रंगमंडल ने अपना कार्य 1 अगस्त, 1981 से शुरू किया, किंतु वास्तविक कार्य जनवरी 1982 से शुरू हुआ. मेरा अनुभव अत्यंत ही सुखद रहा, क्योंकि मैं इस बात को जोर देकर कहना चाहूंगा कि रिपर्टरी का गठन किसी तर्क की बजाय एक मनःसृष्टि और सपने पर आधारित था. अब इसकी निरंतरता एक तीव्र आंतरिक आवश्यकता बन गयी है और इसे प्रभावोत्पादकता के एक निश्चित स्तर तक लाने के लिए कम से कम पांच साल की जरूरत है. इसमें शामिल अभिनेता युवा तथा अनुभवहीन हैं किंतु उनमें समर्पण की भावना बहुत ज्यादा है और वे कठोर परिश्रम भी बहुत कर सकते हैं. रंगमंडल की जो दो रंगशालाएं हैं वे—भारत भवन में हैं. रंगमंडल इस मायने में बेहद सौभाग्यशाली है कि उसे सर्वाधिक अनन्य खुली रंगशाला "बहिरंग" में, जिसकी पृष्ठभूमि में झील है, कार्य करने का अवसर मिला है. इससे जो अनुभव उत्प्रेरित होता है वह अविस्मरणीय और अमिट दोनों ही है. बंद रंगशाला "अंतरंग" में रोचक अभिनत रंगमंच है, जिसकी संभावना अब तक पूरी तरह खोजी नहीं गयी है. यहां जो एक सर्वाधिक उत्तेजक बात हुई है, वह यह है कि रंगशाला में आनेवाले दर्शकों का अब एक नया वर्ग तैयार हो गया है. मैं इसे एक सबसे ज्यादा अप्रत्याशित घटना मानता हूं, जिसने मुझे भोपाल में रंगमंच की आवश्यकता के संबंध में कहीं गहरे विश्वास में डाल दिया है. इस स्थिति में भोपाल में लगातार काम करना महत्वपूर्ण है जिससे कि नवनिर्मित दर्शक वर्ग का विश्वास भंग न हो. गंभीर नाटकों के साथ हमने, "घासीराम कोतवाल" और "दो किश्तयों का सवार" भी किया, जिससे कि ऊपरी तौर से हल्की बुनावट के दिखने वाले नाटक दर्शकों की रुचि बनाये रखें. भारत भवन में एक स्थान को उपयोग काबिल बनाकर एक तीसरी रंगशाला " "पूर्व रंग" तैयार की गयी है.

मैं महसूस करता हूं कि जब भोपाल में किया जा रहा काम व्यावसायिकता की एक निश्चित हैसियत प्राप्त कर ले तब उसके बाद मध्यप्रदेश के विभिन्न हिस्सों में फैलना महत्वपूर्ण है. और तब ही इस पूरी बात का कोई अर्थ होगा. मैं यह भी विश्वास करता हूं कि चूंकि मध्यप्रदेश में ग्राम्य लोक और आदिवासी परंपरा इतनी समृद्ध है इसलिए इन शैलियों में लगातार काम करने की खोज करना और उसे रंगमंडल की स्थायी रिपर्टरी के एक हिस्से के रूप में सम्मिलित करना महत्वपूर्ण है.

साहसिक कोशिश

• निर्मल वर्मा

कहानीकार समीक्षक और विचारक आजकल भोपाल में निराला पीठ पर कार्यरत

मुझे जिस बात ने आकर्षित किया वह यह है कि मध्यप्रदेश में जो हो रहा है वह उस सिनिकल दीवाल को तोड़ने की साहसिक कोशिश है, जो कि अच्छे इरादों और प्रभावी कार्यों के बीच पिछले अनेक वर्षों से खड़ी कर दी गयी है. मैं इस तथ्य से आकृष्ट हुआ कि उत्तर भारत में कम से-कम एक जगह ऐसी है, जहां बावजूद उन सारी अक्षमताओं के, जिनसे हम ग्रस्त हैं, उत्कृष्ट इरादे सफल उद्यमों में रूपान्तरित किये जा रहे हैं. इस बात ने इस मिथ को भी ध्वस्त कर दिया है कि जब तक वर्तमान नौकरशाही और सामाजिक व्यवस्था कायम रहती है अपने देश में कुछ भी नहीं किया जा सकता है. मैं यह बात जोर देकर कहना चाहूंगा कि मध्यप्रदेश में सांस्कृतिक उन्नयन के काम को वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में नौकरशाही की विद्यमान संरचना के भीतर ही किया गया है.

मेरे मन में इस बात से बेहद आशा जगी है कि कुछ रचनाधर्मी व्यक्ति अपने कार्यक्षेत्र में चमत्कार दिखा सकते हैं. आखिरकार पिछले पांच वर्षों में मध्य प्रदेश में सैकड़ों की तादाद में कविता-संग्रह छपे हैं, जिन्हें प्रकाशक-गण छूना भी पसन्द नहीं करेंगे. हो सकता है कि इनमें कुछ महत्वहीन पुस्तकें भी हों, किन्तु कुल मिलाकर इन पुस्तकों का स्तर खासा ऊंचा रहा है. यह मध्यप्रदेश की कला परिषद के लिए गौरव की बात है कि उसने एक सर्वाधिक प्रबुद्ध समीक्षा पत्रिका "पूर्वग्रह" का प्रकाशन उस समय किया है जबकि हिन्दी-पत्रिका-बाजार वाणिज्यिक और फिल्मी पत्रिकाओं से अटा पड़ा है. मध्यप्रदेश को उच्च साहित्यिक और सांस्कृतिक उत्कृष्टता का विकल्प तैयार करने में सफलता मिली है और यह विकल्प अब उन आम लोगों को उपलब्ध है जो कि अपने देश में या तो अच्छी संस्कृति के अभाव में भूखे रहते अथवा लाचार होकर मनोरंजन के बेहद अश्लील वाणिज्यिक रूप से अपनी भूख मिटाते हैं. पूरे मध्यप्रदेश के विभिन्न छोटे-छोटे शहरों में पाठक मंच बनाये गये हैं जिससे कि आम आदमी न सिर्फ अच्छी पुस्तकों के सम्पर्क में आ सकें बल्कि उन पर चर्चा करने का अवसर भी पा सकें. और ये चर्चाएं एक अर्द्ध शासकीय संस्था मध्यप्रदेश साहित्य परिषद की पत्रिका "साक्षात्कार" में नियमित रूप से प्रकाशित होती हैं.

मैं कुछ लोगों द्वारा लगाये जानेवाले आरोपों को कभी भी नहीं समझ पाया हूं कि भारत जैसे गरीब देश में मध्यप्रदेश सरकार द्वारा संस्कृति पर खर्च की जानेवाली रकम अन्य कामों में बेहतर तरीके से लगायी जा सकती है. शायद इन लोगों के मन में संस्कृति के प्रति गम्भीर अवमानना की भावना है अथवा वे अपने लोगों में संस्कृति की तीव्र भूख होने के सम्बन्ध में बेहद गैरजानकार होने के कसूरवार हैं. यही तो वह अभौतिक पोषण है जिसे मध्यप्रदेश सरकार के कुछ प्रबुद्ध अधिकारी उपलब्ध करा रहे हैं. मुझे भय है, यदि शासन अपने समग्र रूप में, इस गति को बनाये रखने के लिए लगातार प्रयत्न नहीं करेगा तो ये सारे उद्यम बहुत शीघ्र ही खत्म हो जाने वाले सिद्ध हो सकते हैं. इसका कारण यही है कि इस प्रकार का कार्य सिर्फ गिने-चुने लोगों द्वारा किया जा सकता है. किन्तु इसे बनाये रखने के लिए गहरी संवेदनशीलता की जरूरत होती है. □

अभूतपूर्व और सराहनीय

• जगदीश स्वामीनाथन

चित्रकार, दार्शनिक, "रूपंकर" और लोक और आदिवासी संग्रहालय के निदेशक

मैं सिर्फ संभावनाओं के शब्दों में बात कर सकता हूं! भारत में राज्य सांस्कृतिक एजेंसिजां बहुत उपेक्षा करती रही हैं और सामान्य तौर पर सभी क्षेत्रों और खासकर के ललित कलाओं को खर्च की चीज सरीखा माना जाता रहा है. बहरहाल, मध्यप्रदेश में राज्य अकादेमियों द्वारा की गयी कोशिशें सराहनीय हैं. वास्तव में, मैं यह कहूंगा कि जैसा यहां हुआ है वैसा केंद्र के स्तर पर पहले कभी नहीं हुआ. मैं यह कहूंगा कि कलाओं और विशेषकर ललित कलाओं के विकास के लिए मध्यप्रदेश में पिछले कुछ वर्षों में अपनायी गयी उदार नीतियों के कारण निश्चय ही एक महान पुनरुत्थान होगा. मध्यप्रदेश कला परिषद द्वारा मध्यप्रदेश में आयोजित किये जाने वाले वार्षिक उत्सवों में प्रख्यात कलाकारों और मध्यप्रदेश के युवा कलाकारों की "एक कलाकार-प्रदर्शनी" (वन मैन शो) का संयोजन शामिल है. मध्यप्रदेश कला परिषद, मध्यप्रदेश के कलाकारों की प्रदर्शनी प्रदेश के भीतर और बाहर भी आयोजित करती रही है. प्रदेश में कला-शिक्षा की पुनःसंरचना और पुनर्गठन के लिए निश्चयात्मक प्रयास भी किये गये हैं. फिर, मध्यप्रदेश शासन ललित कलाओं का एक ऐसा संग्रहालय स्थापित करने वाला पहला राज्य शासन है, यह इस अर्थ में अनूठा है कि इसमें न केवल आधुनिक कला का संग्रह है बल्कि लोक और आदिवासी कलाकृतियां भी प्रदर्शित हैं. इसके अलावा, प्रिंट बनाने, शिल्प, मृत्तिका कलाकारों और चित्रकारों के लिए भारत भवन में कार्यशाला की सुविधाएं उपलब्ध करायी गयी हैं. मध्यप्रदेश ने रजा, हुसैन, बेन्द्रे जैसे उत्कृष्ट कलाकार दिये हैं. बहरहाल, मैं कहना चाहूंगा कि ये कलाकार राष्ट्रीय परिदृश्य पर इसलिए नहीं उभर कर आये कि उन्हें इस प्रदेश ने रचनात्मक माहौल उपलब्ध कराया था, बल्कि अपनी प्रतिभा और कोशिश के बल पर वे उभरे. वास्तव में, राज्य के अधिकांश क्षेत्र में, रचनात्मक कार्य के लिए माहौल विगत में उदासीनतापूर्ण रहा है. अधिकांश कला-शालाएं और ऐसी ही दूसरी एजेंसियां ललित कला विज्ञान की अवरुद्ध अवस्था में पड़ी हुई थीं.

संस्कृति की समावेशी समकालीनता

• धनंजय वर्मा

संस्कृति कोई आसान सरलीकरण नहीं है और न समकालीनता ऐसा सपाट मैदान है जिसमें सरपट भागा जा सके. बेशक, संस्कृति के वर्गीय आधार होते हैं लेकिन वह अपनी कालजयी सार्थकता, वर्गों की द्वन्द्वात्मकता के पार, संश्लेष के उस बिन्दु पर ही पाती है जहां जन और अभिजन, परम्परा और आधुनिकता, शास्त्रीय और लोक या आदिवासी, नागर और ग्राम्य, सार्वदेशिक और देशज के बीच के अन्तर्सम्बन्धों की जटिल प्रक्रिया से गुजर कर एक समावेशी समकालीनता अर्जित करती है और एक समग्र और सम्पूर्ण मनुष्य के विकास की दिशा में संचरित होती है. इस समग्र और सम्पूर्ण मनुष्य के विकास में "प्राथमिकताएं" नहीं होतीं, एक के लिए, दूसरे को स्थगित नहीं किया जा सकता, भौतिक के लिए आत्मिक या सौन्दर्य के लिए उपयोगिता को निलम्बित नहीं किया जा सकता और फिर यह सांस्कृतिक प्रक्रिया इकहरी, एक-आयामी और एकांगी नहीं हो सकती; यह एक समवेत चेष्टा है जिस पर इस या उस वर्ग का ही एकाधिकार नहीं है.

इसलिए सांस्कृतिक प्रयत्नों और गतिविधियों के पीछे किसी फौरी जरूरत और तात्कालिक लाभ-लोभ की प्रवृत्ति की तलाश और उसे जबरन आरोपित करने की बजाय देखना यह चाहिए कि उनका परिसर और सरगम क्या है? मसलन "भारत भवन" को ही लें. सिर्फ यह नहीं कि पूरे देश में यह अपने ढंग का अद्वितीय सांस्कृतिक परिसर है बल्कि यह अपनी समृद्ध परम्परा और श्रेष्ठता की खोज, नयी रचनात्मक उत्तेजना और एक नये सांस्कृतिक विकास में आम भागीदारी का भी केन्द्र है. यह नयी रचनात्मकता क्या है? आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में विशेषीकरण की जो अतिवादी प्रवृत्ति पनपी उसने मनुष्य को न केवल टुकड़ों में देखना शुरू कर दिया, बल्कि उसकी अस्मिता और गरिमा को भी खानों और चौखटों में इस हद तक बांट दिया कि उनका परस्पर कोई रिश्ता और संवाद ही कायम नहीं हो पाया या तो मनुष्य का अर्थसंकुचित होकर खालिस भौतिक रह गया या फिर वह महज एक अमूर्तन हो गया. संस्कृति और कला ही एक ऐसा क्षेत्र है जहां मानवीय सृजनात्मकता में मनुष्य की समग्रता और सम्पूर्णता का बिम्ब देखा जा सकता है बल्कि देखा और दिखाया जाना चाहिए. ...इससे कुछ ऐसे भरम टूटेंगे टूटते हैं और उन्हें टूटना चाहिए कि संस्कृति और कला, कल्पना और सौन्दर्य के क्षेत्र में नागर, और शहरी ही स्वभावतः "सुसंस्कृत" हैं या कि आदिवासी और ग्राम्य की निस्बत वे आधुनिक और समकालीन और श्रेष्ठ हैं. क्या यह जरूरी नहीं है कि हमारे जन और अभिजन दोनों को यह मालूम हो कि आधुनिकीकरण, शहरीकरण और यंत्रीकरण के दबावों से उपजी विकृतियों के बावजूद आज भी आदिवासी और लोक कलाओं में प्रखर जीवन्तता और वैविध्यपूर्ण समृद्धि है. कला और संस्कृति के क्षेत्र में समावेशी समकालीनता जो रूपाकार ग्रहण कर रही है उसमें लोक और आदिवासी संवेदना की भी उतनी ही सक्रिय और निर्णायक भूमिका है. इसीलिए **"रूपंकर"** का मकसद उस संवेदना की परवरिश के साथ ही उसके समसामयिक प्रयत्नों को भी केन्द्रित करना है. वह शहरी, लोक और आदिवासी कला का एक अनूठा संग्रह भर नहीं है बल्कि हमारे समय में रची जा रही रूपंकर कलाओं का एक समावेशी बिम्ब भी पेश करता है, जिसमें आधुनिक और समकालीन कृतियों के साथ ही साथ लोक और आदिवासी कलाकृतियों का समूचा रंगारंग संसार उभरता है. यहां आधुनिक और लोक और आदिवासी परस्पर अन्तर्क्रिया करते हुए देखे जा सकते हैं और इस बात की ताईद करते हैं कि कला चेष्टा अपने समय और स्थान, भूगोल और इतिहास से प्रतिकृत होती हुई भी इनसे कितनी आजाद होती है. इनके समवेत बिम्ब से समकालीन भारतीय कला का जो समावेशी रूपाकार उभरता है उसमें रूपात्मक आविष्कार और समृद्ध कल्पनाशीलता का विविधवर्णी संसार है. बेलगूर (मुडिया–गोंड़, बस्तर) के चित्रों की अनन्त से खेलती रंग परिधियां, मैहत कुम्हार (पाश्तागांव, सरगुजा) का मटकों के रूपाकारों से सिरजा गया हाथी, भूरीबाई (भील, झाबुआ) के चित्र की नाचती-बोलती रेखायें और मिट्ठीबाई (कठघोरा, बिलासपुर) की नक्काशी में उर्ध्वोन्मुख जानवर (हुसैन और रजा जेराम पटेल और रामकुमार, मंजीतबावा और हिम्मतशाह के रूपाकारों के साथ मिलकर इस विशाल देश की सृजनात्मकता की निर्विवाद समृद्धि का साक्ष्य प्रस्तुति करती हैं.

यों तो प्रदेश के आदिवासी और लोक संगीत, नृत्य, रंगमंच, साहित्य और कलाओं का समस्त सम्भव उपायों द्वारा सम्मान, विस्तार, प्रोत्साहन और संरक्षण **"मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद"** का केन्द्रीय संकल्प और प्रयत्न है; जिसके अन्तर्गत आदिवासी लोक कला समारोह, लोक कला शिविरों का आयोजन, आदिवासी लोक कलारूपों पर केन्द्रित एक पत्रिका और आदिवासी लोक कलाओं का प्रामाणिक सर्वेक्षण और प्रलेखन शामिल है, लेकिन प्रदेश की पूरी सांस्कृतिक गतिविधियां भी इस बात को लगातार रेखांकित करती हैं कि न तो आदिवासी और लोक की परम्परा ही एक है और न आधुनिक और नागर कलाओं की कोई एक ही पद्धति प्रणाली या रूढ़ि. समकालीन भारतीय कला की समावेशी रचनात्मकता का यह एक प्रासंगिक प्रमाण है.

पिछले दशक में विकसित एक नयी और समर्थ रंग चेतना ने प्रदेश में रंगकर्म को जिस एक उत्साही आंदोलन का रूप दिया है, वह भी आधुनिक नागर केंद्रों से रिसकर नहीं आयी, बल्कि प्रदेश की अपनी समर्थ लोकशैलियों से आधुनिक रंगचेतना की अन्तर्क्रिया का नतीजा है. रंगकर्म अपनी बुनियादी प्रकृति और प्रवृत्ति से ही जन-जीवन से गहन रूप से संबद्ध होता है, इसीलिए **"मध्यप्रदेश रंगमंडल"** का मकसद स्थानीय रंगकर्म और नाट्यशैलियों की समृद्धि के साथ उनकी पहचान और सामर्थ्य का विकास है. प्रदेश की बोलियों और शैलियों में नाट्योत्सव के पीछे यही दर्शन है. चूंकि रंगकर्म की ताकत उसकी स्थानीयता है इसलिए जनप्रिय रंगशैलियों की प्रासंगिकता, निर्विवाद है, मगर यह स्थानीयता उसकी सीमा न हो जाये इसलिए आधुनिक भावबोध से उसकी अंतर्क्रिया भी जरूरी है. यह एक संयोग तो हो सकता है कि रूपंकर-कला के लिए "कालिदास-सम्मान से सम्मानित हों–शांतिनिकेतन के कलागुरु के. जी. सुब्रमण्यन और रूपंकर-कला के "शिखर सम्मान" से सम्मानित किये जायें—पारंपरिक घडवा शिल्प के लोक-मूर्तिकार बस्तर के आदिवासी जयदेव बघेल, लेकिन यह महज संयोग नहीं था कि "भारत भवन" के शुभारंभ के अवसर पर पीटर ब्रुक और शंभुमित्र, सत्यदेव दुबे और श्यामानंद जालान सरीखे आधुनिक रंगकर्मियों के साथ ही मौजूद थे शेखा गुलाब और पूनाराम निसाद, रामसहाय पांडे और ओम प्रकाश शर्मा "उभयाभिसारिका" के साथ "वीकएंड" (निर्मलवर्मा), विशाख (जयशंकर प्रसाद) के साथ "एक लड़की पांच दिवाने (हरिशंकर परसाई), क्लर्क की मौत (चेखव) के साथ चार बेत और बरेदी, एच. जी. ब्रेनर के डेनिश नाटक "जज" के साथ करमा, पंडवानी और राई, और घासीराम कोतवाल (विजय तेंदुलकर) के साथ मालवी माचा और छत्तीसगढ़ी नाचा की प्रस्तुतियां क्या सहज ही आदिवासी और लोक रूपों के प्रति जागरूकता और उनके सम्मान और अवधान के नये क्षेत्रों की पहचान की भी सबूत नहीं थीं?

इसका एक सबूत और है **"अनहद:"** शास्त्रीय और लोक संगीत का संग्रह जिसकी आकांक्षा और प्रयत्न है शास्त्रीय और लोक संगीत के बीच पारस्परिक संबंधों की तलाश और उनकी अंतर्क्रिया के अवसर जुटाना! यहां शास्त्रीय हिंदुस्तानी संगीत के दिग्गज पंडित मल्लिकार्जुन मंसूर, पं. कृष्णराव शंकर पंडित, प. कुमार गंधर्व और कर्नाटक शास्त्रीय संगीत के श्री सेम्मनगुडी, श्री निवासरूयार और श्रीमती एम. एस. सुब्बुलक्ष्मी के संगीत के साथ ही एकत्र किया जा रहा है—बस्तर का आदिवासी संगीत, छत्तीसगढ़ और बुंदेलखंड, मालवा और निमाड़ का लोक संगीत, ताकि वह हमारी जातीय यादों, आशाओं और आशंकाओं के साथ भारतीयता का, अमिट साक्ष्य बन सके.

कोई भी सभ्य जाति, उसकी संस्कृति और उसकी रचनात्मकता स्मृतिविहीन और परंपरा रहित नहीं होती. अपनी विशाल परंपरा का सरक्षण किसी भी जागरूक जाति और समाज की संवेदनशीलता और उसकी दायित्व चेतना का तकाजा है. जातीय स्मृति, और सांस्कृतिक परंपरा का आदिम स्रोत है—**पुरातत्व**. इस दृष्टि से मध्यप्रदेश, भारत का अत्यंत समृद्ध इलाका है. यहां आदिकाल से विभिन्न संस्कृतियों का संगम होता आया है: पाषाण, ताम्र पाषाण और प्रागैतिहसिक्र सस्कृतियों के पुरातात्विक अवशेषों से लेकर द्राविड़, गुप्त और मौर्यकालीन मदिरों, आर्य शैली के शिखरों और दुर्ग स्थापत्यों से संपन्न इस प्रदेश के पुरातत्व विभाग में उत्खनन और सर्वेक्षण की एक स्वतंत्र शाखा का गठन इसी मकसद से किया गया है. रायसेन के विषालिया, लोरका और नांदूर में प्रस्तावित और भरना के गिलोलीखेडा में संपन्न उत्खनन के साथ ही चंबल, नर्मदा, बेतवा, ताप्ती की नदी घाटियों में सर्वेक्षण से प्रागैतिहासिक काल से लेकर ऐतिहासिक समय तक की अनेक महत्वपूर्ण कड़ियां उपलब्ध हुई हैं और हो रही हैं. नदी बांध योजनाओं के अंतर्गत डूब में आने वाले स्थानों का सर्वेक्षण किया जा रहा है, माडा गुफाओं, ओरछा के मध्यकालीन भित्तिचित्रों और ग्वालियर और भोपाल संग्रहालय के चित्रों के साथ ही मुद्राओं और कलाकृतियों का रासायनीकरण भी किया जा रहा है. छत्तीस स्मारक और स्थलों को संरक्षित घोषित किया जा चुका है और 60 स्मारकों को संरक्षण में लिया जा रहा है. 18790 सिक्कों और लगभग 4000 मुद्राओं का अध्ययन और रासायनिक संरक्षण भी किया गया है. अपनी पुरा-संस्कृति में सामान्य जन की रुचि और संवेदनशीलता के विकास के मकसद से चलित प्रदर्शनियां, फोटो अलबम, आदिवासी संग्रहालयों, मार्गदर्शक पुस्तिकाओं का प्रकाशन किया जा रहा है. आदिवासी संपदा के संरक्षण और प्रदर्शन के लिए बस्तर, झाबुआ, भोपाल और बैतूल में अलग दीर्घाएं शुरू की जा रही हैं और स्थानीय कला के संग्रहालय बनाये जा रहे हैं.

पुरातात्विक संस्कृति से लेकर आदिवासी और लोक संस्कृतियों के संरक्षण, प्रोत्साहन, विस्तार और सम्मान, समकालीन सृजनात्मक चेष्टाओं के स्वतंत्रता और सम्मान के साथ विकास के अवसरों और साधनों की वृद्धि और आम नागरिकों के लिए कलाओं के रसास्वादन के अवसर मुहैया करने की ये सांस्कृतिक गतिविधियां शास्त्र को लोक से और आधुनिक को परंपरा से संयुक्त करती हैं. □

नया रसिक

• राजा राम

लीपन से आंगन रचती बूढ़ी बड़बड़ा रही थी कि सुबह की रोटी तो सिक गई, अब रात को वह अपने और कुटुम्ब के पेट में क्या डालेगी, और कहां से लाएगी. घर में दाना नहीं बचा. परंतु आंगन में कंगूरे रचे जा रही है. तकलीफ के क्षणों में गीत और कविता रचे जाने के प्रसंग कम नहीं गिनाए जाते. रूप रचने के लिए सुख चैन के क्षणों की बात सब ही करते हैं. पर सच्चाई यह है कि आदमी की जिन्दगी में हर वक्त रूप रचा जाता है, कविता लिखी जाती है, और स्वर फूंका जाता है. रचना और उसका रसास्वादन जिन्दगी के इतने अटूट हिस्से होते हैं.

अलबत्ता नागर सभ्यता की सच्चाई थोड़ी-सी भिन्न है. आम तौर से कला की दुनिया में हिस्सा लेने वाले चन्द एक "संभ्रांत" विशिष्ठ नागर ही होते हैं. आम लोगों में वे थोड़े से भिन्न होकर "कला रसिक" की हैसियत से अपनी पहचान देते हैं. कुछ को सचमुच शौक होता है, तो कुछ "सांस्कृतिक" विशिष्ठ समुदाय में गिने जाने के चहेते भर, भले पक्के गाने के समय जंभाई लेते हों या कला प्रदर्शनी की दर्शक पुस्तिका पर, बिना प्रदर्शनी देखे, अपने हस्ताक्षर करने का अवसर न चूकते हों.

गैर-नागरों का जीवन तो सहज होता है. उनमें नागरों के तेवर कहां? उनमें पैदाइशी प्रतिभा की बात न भी करें तो हम यह पाएंगे कि गांव के परिवार का कौन सा बूढ़ा, जवान, बच्चा, मर्द या औरत गाना नहीं जानता, नाचना नहीं जानता, या अपने पारम्परिक रूपाकार तीज-त्योहार या उत्सव के समय रचना न जानता हो. आदिवासियों का भी वही हाल है. वे कुछ अधिक ही कला-पारंगत होते हैं. जिंदगी की एक खास जरूरत की तरह वे कुछ रचने में कुशल होते ही हैं. सब नाच भी सकते हैं और सब गाना भी गाते हैं. सब पानी पीते हैं और एक घाट का पीते हैं. कोई खास उनमें अलग से नहीं होता जो खास पानी पीने के लिये अपने लिये खास किस्म का गड्ढा खोदता हो. सभी कला निपुण. सभी कला रसिक विशिष्ठ नागरों की तरह वे कलाओं को अलग से नहीं पोसते उनके लिए वह प्राणवायु है. किसे जरूरत नहीं होती प्राणवायु की?

ताज गैलरी हो या ललित कला अकादमी की दीर्घा, वहां एक खास समुदाय ही तो जाता है न! और वे जाने वाले भी भी भला कितने होते हैं? परन्तु भोपाल के इस भारत भवन की रूपंकर दीर्घाओं में प्रतिदिन टिकट से 400 दर्शकों का औसत व भारत भवन में ही रंग मण्डल के मंचों की प्रस्तुति देखने के लिये तीन दिन पहले हाउसफुल की तख्ती का सामना कम आश्चर्य में डालने वाला नहीं. और जरा भारत भवन में एक तरफ कहीं खड़े होकर आगन्तुकों पर नजर तो डालिये कि देसी, विदेसी, लंगोटधारी और टाईधारी हर मजहब के सभी लोग तो उसकी सीढ़ियां उतरते दीखते हैं. ये सभी भारत भवन की प्रस्तुतियों में शामिल होने पहुंचते हैं.

बड़े ताल के किनारे भारत भवन की छतों पर लान पर वे चहल कदमी करते हैं. रंग-प्रस्तुतियां देखते हैं. संगीत-सुधा का पान करते हैं. कला दीर्घाओं में घुसते हैं. फिल्म देखने जा बैठते हैं. सब कुछ सहज. सभी प्रकार का, नागर व आदिवासी तथा लोक, जैसी यहां की प्रस्तुतियां हैं, वैसा ही है इस भारत भवन में मंडराता रसिक-समुदाय. भारत भवन में कोई खास समुदाय नहीं वहां सब पहुंचते है. वही कुढ़ती बूढ़ी यदि भारत भवन की दीर्घाओं में बड़े चाव व अपनेपन से अपनी दुनिया के रूपाकार देखने पहुंचती है तो क्या अचरज?

भारत भवन का कितना बड़ा सौभाग्य रहा कि मध्यप्रदेश के दूर-दराज से आए श्रमिक इसके निर्माण कार्य से जुड़े. उद्घाटन से पूर्व भी और अब विस्तीर्ण हो रहे भवन के कारण एक खासा बड़ा श्रमिक समुदाय अभी तक भारत भवन से जुड़ा हुआ है. ये मजदूर भोपाल की किन्हीं बस्तियों से आने वाले वे लोग नहीं हैं जो पौ फटते काम करने यहां आ जाते हैं और दिन ढलते काम बन्द करके रोटी-चटनी का टिफिन, पोटली बटोरकर घर भाग जाते हैं. भारत भवन से जुड़े मजदूर हैं झाबुआ या बिलासपुर आदि के आदिवासी, भील-भिलाड़े या और कोई दिन भर श्रम करके. ये अपने उन्हीं आसरों में जा छुपते हैं, और भारत भवन के कार्यक्रमों की आहट या सुराग पाते ही बड़ी संख्या में अपने बसेरों से निकल-निकलकर आ पहुंचते हैं

आदिवासी और लोक कला दीर्घा में ये लोग बड़े चाव से घूमते हैं. मुस्कुराते हैं. कृतियों का आपस में अर्थ जाहिर करते हैं. किसी प्रदर्शित कृति विशेष के सामने अपनी सारी संचित आस्था के साथ झुककर हाथ भी जोड़ लेते हैं. औरों के लिये वह कृति केवल कलाकृति हो, परन्तु इन खास लोगों के लिये उससे कहीं बढ़कर वे भिलटदेव, बाघदेव या चौरासी देवी उनके सर्वशक्तिमान जीवंत देवता हैं.

आए ही हैं तो नागर कलादीर्घा भला कैसे छोड़ दें. वहां भी वे घूमते हैं. देखते हैं अधुनातन कलाकृतियों को. मजे की बात यह है कि इन लोगों के इन "आधुनिक" कलाकृतियों के सामने उस तरह के प्रश्न भी नहीं उठते जो आम एक नागर के सामने अक्सर उठते हैं. "आधुनिक" कलाकृतियों के रूपाकारों से इन्हें अपने रूपाकारों का नैकट्य लगता है. क्योंकि "आधुनिक" कला का बड़ा हिस्सा इन्हीं के जैसी आदिम और पौर्वात्य विशिष्ठ कला-दृष्टि से अभिप्रेरित हुआ है.

आए हैं तो मंच प्रस्तुति से भी वे अपने को नहीं बचा पाते. इनके क्षेत्र की मंच प्रस्तुति में तो ये मगन होते ही हैं. ये बड़े आल्हादित होते हैं जब नागर मंच पर ठेठ इनकी अपनी शब्दावली का प्रयोग पाते हैं. ये शास्त्रीय और आदिवासी व लोक सब प्रकार की संगीत सभा के सरीखे श्रोता भी बनते हैं. सिनेमा तो नाम ही ऐसा है कि भारी भीड़ आ जुटती है. वहां यह सवाल नहीं उठता कि फिल्म कौन-सी दिखाई जा रही है. सिनेमा माध्यम ही ऐसा है. भारत भवन में तो कला फिल्में दिखाई जाती हैं—रूपंकर कलाओं, संगीत, नृत्य, मंचन, काव्य पर और "सतह से उठता आदमी" जैसी फिल्में. कौन है इन सब प्रस्तुतियों का रसिक? नागर, आदिवासी और ग्रामीण सब एक चादर पर अपनी मन मुआफिक जगह पर जो पहले पहुंचे वह अपना आसन जमा लेता है. कितनी सरलता, सहजता से यह सब इस भारत भवन में चल रहा है. विविध कलाओं के प्रति रसज्ञता का कितनी आसानी से यहां संचरण हो रहा है. बिचौलिया स्थिति का वह नागर भी भीड़के साथ इन प्रस्तुतियों की तरफ कदम बढ़ा देता है जो नागर कला के प्रति आकर्षित है न आदिवासी या लोक कला के प्रति. परन्तु इस तरह अनजाने में उसमें भी शौक पैदा हो रहा है. क्योंकि कला प्रस्तुति का बारम्बार और सतत् सामना ही अपने आप में कलाभिरुचि की सबसे बड़ी शिक्षा है. दूर दूर से लोग आते हैं. उन्हें भारत भवन की समय-सीमाएं रास नहीं आतीं, वे यह नहीं सुनना चाहते कि किस दिन वह बन्द रहता है, रोज कब वह खुलता है व कब बन्द होता है. भोपाल आयें भारत भवन वे न आएं यह हो नहीं सकता, और जब भी आएं भारत भवन उनके देखे जाने के लिये उपलब्ध होना चाहिये. कुपित होते हैं, निराश होते हैं यदि उन्हें भारत भवन बन्द मिलता है. वे गिड़गिड़ाते हैं कि दरवाजे की दराज से उन्हें अन्दर की थोड़ी सी झलक ही मिल जाय. मंदिर में देव के दर्शन से भक्त के प्रयत्न सार्थक हो लेते हैं. कला के प्रति इस ललक में वही भाव है. नागर लोग कला से अपने जिस रिश्ते को खो रहे थे या एक अलग विचार के रूप में उसे वे पोस रहे थे, भारत भवन उस खोए रिश्ते को पुनर्स्थापित कर रहा है.

नागर सभ्यता के बोझ से कहीं कहीं गैर-नागरों में अपने समृद्ध रूपाकारों के प्रति आस्था खो चली थी. मध्यप्रदेश में जो हो रहा है उससे उसे पुनर्जीवन मिला है. खो रही आस्था की पुनर्स्थापना ही रही है. नागरों के नैकट्य से चौंधियाने के बजाय वे उनसे सहज परिचय प्राप्त कर रहे हैं. नागरों ने गैरों के रचना-रूप का लाभ लेकर नव सृजन किया था. अब गैर-नागर की पारी है कि वह अपनी समृद्ध दृष्टि के साथ नागरों के इस सम्पर्क से कुछ "आवागार्द" पैदा करें. यह सचमुच एक नयी बात होगी.

मंच पर नागर व गैर-नागर अभिनेता मिलजुलकर साथ अभिनय करते हैं. वह प्रसंग अनूठा रहा जब मध्यप्रदेश के अलग-अलग क्षेत्रों से आए आदिवासी और लोक-गायक समूह कला परिषद के पीछे, उनके ठहरने के लिए बनाए गए तंबू तले, भोपाल में अपने कार्यक्रमों के समापन के बाद वापसी के दिन, मन से ही, एक दूसरे के सामने अपनी कला पेश करने लगे. कितना अनूठा था यह मौका. कब मिला था इन समूहों को एक दूसरे के सामने इस तरह सुनने-सुनाने का मौका. भारत भवन तो मध्यप्रदेश की सांस्कृतिक गतिविधियों का ताज है. पिछले वर्षों में कलाओं के हुए इस बहुमुखी उत्तरोत्तर विकास को देखकर स्वत: यह अभिव्यक्ति फूट पड़ती है कि यह दौर मध्यप्रदेश में कलाओं के स्वर्णयुग का समय है.

पिछले दस बरस में मध्यप्रदेश में कला की गतिविधियों की रफ्तार हल्की से तेज, संकरी से व्यापक, और विशिष्ठ से आम की ओर अभिमुख हुई है. यह एक सचाई है जिसे नजर-अन्दाज नहीं किया जा सकता. बिना "पास" व्यवस्था के किन्तु टिकट की अनिवार्यता वाले कुछ आयोजन भोपाल में किस कदर अथाह जनसमूह से पटे रहते हैं यह प्रमाण है कि कलाओं के प्रति रुझान में कितना विस्तार हुआ है.

मध्यप्रदेश कला परिषद, मध्यप्रदेश साहित्य परिषद, उस्ताद अलाउद्दीन खां अकादमी, मध्यप्रदेश आदिवासी लोक-कला परिषद, भारत भवन की चारों संस्थाएं, आदि कई संस्थाएं नये रसिक के लिये वातावरण निर्माण करने में सक्रिय हैं. भारत में सर्वप्रथम मध्यप्रदेश राज्य में अलग से संस्कृति मंत्रालय का शुभारम्भ इन प्रयासों के लिये अप्रतिम सिद्ध हुआ है. इन प्रयासों की विशेषता यह है कि ये केन्द्रीय से विकेन्द्रीय, प्रदेश से देश और उससे भी आगे विश्व तक से अपने को जोड़ते हैं. ताकि संकीर्णता न आए. मध्यप्रदेश प्रधानत: हिन्दी भाषी राज्य है. किन्तु वागर्थ किस भाषा की कविता से अपना ताल्लुक नहीं रखता? इसके आयोजनों में सब भाषाओं की प्रस्तुतियां होती हैं और श्रोता समुदाय तो विविध होता ही है. विकेन्द्रीकरण की मिसाल यह है कि छत्तीसगढ़ी पण्डवीनी की प्रस्तुतियां तो पूर्वरंग की सीढ़ियों पर और इतालवी नाटक का भोपालीकरण (प्रयुक्त जबान का लहजा) "दो कश्तियों का सवार" बहिरंग में बैठकर बड़े ताल और आसमान की रोज बदलती अस्ताचल की रंगीनी के बीच दूर टिमटिमाती रोशनियों की पृष्ठभूमि में खेला जाता तो भोपाल में सबने देखा. परन्तु दूर-दराज के मध्यप्रदेशीय क्षेत्रों में बैठे दर्शकों के सम्मुख भी यह इतालवी नाटक ले जाया जा रहा है यह अनोखी बात है. इसी तरह कार्यरत् सारी ही संस्थाएं अपने कार्यक्रमों का विकेन्द्रीकरण करके प्रदेश के हर आदमी से अपना रिश्ता जोड़ती हैं. □

बाजारूपन के खिलाफ

• उदय प्रकाश

आज से इक्कीस साल पहले "नई कहानियां" के संपादकीय में लिखा गया था: " . . .बड़े हिसाब, बड़ी सफलता के साथ इस मनोविज्ञान का निर्माण कर दिया गया है कि आज बाजार सस्ती कहानियों का है, अच्छी कहानियों का नहीं. छोटे या बड़े किसी भी शहर के न्यूज एजेंटों के स्टालों और पटरी के बुक स्टालों को एक नजर आप देख आइये, सब के सब आपको देशी-विदेशी सस्ती पत्रिकाओं और उपन्यासों से पटे हुए मिलेंगे और निश्चय ही आप उन्हें देख कर इस नतीजे पर पहुंचे बिना नहीं रह सकते कि अच्छी पत्र-पत्रिकाओं और किताबों के निष्कासन की अंतिम घंटी बजने में अब देर नहीं है. वहां अच्छी पत्र-पत्रिकाओं और किताबों की वही स्थिति है, जो एक कुलीन नारी की बाजारू औरतों के बीच में होती है, वह वहां से भागे नहीं तो क्या करे?" (जून-1962).

इस संपादकीय में बाजारू, अपराध, हत्या, सेक्स और गुंडागर्दी से भरी हुई पत्र-पत्रिकाओं और फिल्मों के जरिये राष्ट्रीय धन और शक्ति के दुरुपयोग की चिंता एक तरफ, और पाठकों और समाज पर इनके द्वारा डाले जा रहे आचरण और मूल्यों के विघटनकारी प्रभावों पर गहरी फिक्र दूसरी ओर थी. बीस-बाईस साल पहले तो बाजारूकरण की यह आंधी इतनी तेज भी नहीं हो पाई थी. वह तो आंधी के बीज-वपन और पल्लवन का काल था. दो दशकों के लंबे अंतराल में वह भय और आशंका बिल्कुल सही प्रमाणित हुई! उस समय इन पत्रिकाओं में अमरकांत, शेखर जोशी, कृष्णचंदर, मोहन राकेश, मार्कंडेय, रामनारायण शुक्ल, प्रयाग शुक्ल आदि कथाकारों की रचनाएं प्रकाशित होती थीं और डा. नामवर सिंह हाशिये पर नियमित स्तम्भ लिखते थे. इसके अलावा कविता और आलोचना की लोकप्रिय मूल्यधर्मी पत्रिकाएं "कल्पना" "ज्ञानोदय" आदि भी धीरे-धीरे मिट गईं. समय-समय पर कुछ लेखकों के निजी प्रयासों से कुछ पत्रिकाओं ने इस व्यावसायिकता के सामने खड़े होने की कोशिश की लेकिन दो-चार अंकों के बाद ही प्रकाशन बंद कर देना पड़ा.

बाजार के बुक स्टाल्स और सड़कों की पटरियों पर जिन पत्र-पत्रिकाओं और किताबों ने अपना प्रभुत्व कायम किया उनमें "सत्य कथाएं', 'गर्म कहानियां' और गुलशन नंदा, रानू, राजवंश, कर्नल रंजीत आदि के उपन्यास आदि हैं. चटनी, मुरब्बे, आचार बनाने की जायकेदार विधियों, रोमांचक रहस्य कथाओं और जादू-टोना, फिल्म, लतीफों के बीच एकाध रोमेंटिक कहानी या कविता छापने वाली पत्रिकाओं ने गंभीर रचनात्मक और सामयिक बोध से जुड़ी अच्छी पत्रिकाओं की अनुपस्थिति में "साहित्यिक" पत्रिका के रूप में अपनी पहचान खड़ी करने की कोशिश की अब जो परिणाम सामने हैं वह अत्यंत संकट पूर्ण और नैराश्य मूलक है.

सी. आर. लेविस ने "एन एक्सपेरिमेंट इन क्रिटिसिज्म" में रचना पाठ की पद्धति पर विचार किया है. उनके अनुसार एक घटिया या बाजारू जिस पद्धति से पढ़ी जाती है, उत्कृष्ट और गंभीर साहित्यिक रचना को पढ़ने की पद्धति उससे भिन्न होती है. दो नितांत भिन्न पाठ-पद्धतियां. आगे चलकर पढ़ने की पद्धति ही पाठक का स्वभाव बन जाती है और इसी स्वभाव के चलते पाठकों के दो बिल्कुल अलग समूह बन जाते हैं. पत्रिकाओं और पुस्तकों का धंधा करने वाले व्यवसायियों ने जैसी सामग्री बाजार में झोंक दी है उसी के कारण बाजारू और स्तर हीन पत्र-पत्रिकाओं का पाठक-समूह बहुत बड़ा हो चुका है.

प्रेमचंद को लगभग ऐसे ही संकट बिंदु पर एक स्मरणीय ऐतिहासिक संघर्ष करना पड़ा था—"हंस" "नया जमाना" और "जागरण" के माध्यम से पत्रकारिता के क्षेत्र में पनपती सस्ती और सतही व्यावसायिकता का प्रतिरोध , और अपने कथा-साहित्य के जरिये साहित्य में प्रबल होते निरुद्देश्य, मूल्यहीन, मनोरंजनाग्रही तिलस्मी प्रवृत्तियों के विरुद्ध संघर्ष. कम से कम अपने दूसरे मोर्चे में प्रेमचंद का संकल्प और उनकी निष्ठा विजयी रही. यह एक तथ्य है कि उन्होंने देवकीनंदन खत्री और गोपाल सिंह गहमरी के बिल्कुल भिन्न "पाठ-पद्धति" के पाठक की आदत को बदल कर, उसके स्वभाव को एक सुविचारित प्रक्रिया में अनुकूलित करते हुए, उसे "गोदान", प्रसाद और बाद में छायावादी काव्य का पाठक बनाने में सफलता पाई.

आज स्थिति उससे भी ज्यादा जटिल और दुर्धर्ष है. जो वर्ग बाजारू पत्र-पत्रिकाओं का उत्पादन और व्यवसाय कर रहा है उसी के पास जन संचार माध्यम के विकसिततम साधन भी हैं. पाठक केवल उत्कृष्ट रचनाओं को बाजार में पहुंचा देने भर से अब नहीं बदल सकता क्योंकि उसकी अभिरुचियां और उसकी मनसिकता कई दूसरे-दूसरे स्रोतों से भी नियंत्रित हो रही हैं. वह रेडियो में किशोर कुमार, नाजिया हसन का श्रोता है, सिनेमा में "शोले" "बॉबी, "नटवर लाल" का दर्शक है. वहां कुमार गंधर्व, अमीर खां या मणिकौल और मृणाल सेना इतनी आसानी से सफल नहीं हो सकते. मुक्तिबोध के सामने आनंद बख्शी खड़े हैं. राजनीति से लेकर पत्रकारिता तक और पत्रकारिता से लेकर तमाम दृश्य-श्रव्य माध्यमों तक के इस्तेमाल के द्वारा एक ऐसी भ्रष्ट मूल्य व्यवस्था. (या मूल्य निरपेक्ष भ्रष्टता) का निर्माण किया जा रहा है. जिससे पतित "उपभोक्ता-संस्कृति" फल-फूल सके.

इसीलिए बाजारूकरण के विरुद्ध प्रतिरोध और संघर्ष का मोर्चा अब उतना इक-तरफा, दो-तरफा नहीं रह गया, यह बहुत व्यापक, विराट और बहु-स्तरीय है. एक ओर यदि जन-संचार माध्यमों के सभी हिस्सों में एक मूल्यनिष्ठ, यथार्थ परक और सोद्देश्य हस्तक्षेप की जरूरत है, तो दूसरी तरफ वृहत्तर सामाजिक अभिरुचियों और मानसिकता को संस्कारित और परिवर्तित करने की चुनौती भी है. ऐसा अक्सर होने लगा है कि साहित्य या रंगमंच, में सक्रिय लेखक रंगकर्मी इधर के चुनौतियों, अभावों और संकटों से भरे रास्तों को छोड़कर उन कला-माध्यमों को अपनाने लगे हैं जो अधिक आर्थिक सुरक्षा और सामाजिक प्रतिष्ठा दे सकते हैं. शिक्षा और संचार माध्यमों के सभी क्षेत्रों में जब तक एक साथ समन्वित और सुचिंतित सक्रियता के द्वारा निजी व्यावसायिकता के समानांतर एक सार्वजनिक विकल्प नहीं प्रस्तुत किया जाता तब तक स्थिति में किसी बड़े बदलाव की उम्मीद नहीं की जा सकती.

जिन देशों में लेखकों-कलाकारों में 'सामुदायिक' जागरूकता है वहां ऐसे सहकारी प्रयास शुरू हुए हैं जिनके जरिये प्रकाशन से लेकर फिल्म नर्माण तक में बाजारू प्रवृत्तियों कें विरुद्ध थोड़ी-बहुत सफलता हासिल की जा सकती है. हमारे यहां स्थिति दूसरी है-तमाम गुटों और खेमों में विभाजित रचनाकारों से किसी ऐसी सामुदायिक एकता की उम्मीद ही व्यर्थ है.

औद्योगिक और उपभोक्ता बाजार की हालत अलग नहीं है. बल्कि उसी का प्रतिफलन संस्कृति-साहित्य और कला के क्षेत्र में हो रहा है. तकनीकी-प्रौद्योगिकी के विकास के साथ-साथ उत्पादन, वितरण, और प्रसार-प्रचार के तामम साधन उत्पादक वर्ग के हाथों में केंद्रित होते चले गये हैं. 'मांग और पूर्ति' का पुराना अर्थशास्त्रीय फार्मूला अब बीते दिनों की चीज बन गया है क्योंकि "कृत्रिम अभावों" और विज्ञापनों आदि के उपयोग से यह वर्ग अपने "उत्पाद" के अनुरूप ही "मांग" को पैदा करने की शक्ति से संपन्न हो चुका है. निजी क्षेत्र के इसी कल्पनातीत प्रसार पर अंकुश लगाने और इस बाढ़ को नियंत्रित करने के लिए तीसरी दुनिया के अधिसख्य देशों ने इसके समनांतर "सार्वजनिक क्षेत्र" को खड़ा किया है. को भी "सार्वजनिक क्षेत्र" के अन्तर्गत अधिकृत किया गया है यहीं पर यह प्रश्न उठता है कि क्या औद्योगिक और उपभोक्ता उत्पादन की तरह फिल्म निर्माण, पुस्तकों के प्रकाशन-प्रसारण के इस क्षेत्र में भी कोई ऐसा सार्वजनिक सांस्थानिक ढांचा प्रस्तुत किया जा सके जो उत्कृष्ट सामयिक बोध, अपनी परंपरा के कलागत मूल्यों को विकसित करने वाले लेखकों-कलाकारों को एक सहारा दे सके.

कम से कम मध्यप्रदेश में एक ऐसा प्रयोग चल रहा है. तमाम समानधर्मी साहित्यिक पत्रिकाओं के समाप्त हो जाने या अनियमित हो जाने के बावजूद "पूर्वग्रह" अभी तक अपनी अस्मिता बनाए हुए है. समकालीन सांस्कृतिक गतिविधियों पर आलोचनात्मक और सृजनात्मक दृष्टिकोण डालने वाली मासिक पत्रिका "कलावार्ता" न सिर्फ नियमित निकल रही है बल्कि लगातार इसका प्रसार बढ़ता जा रहा है. "साक्षात्कार" मासिक भी अपनी सीमाओं में समकालीन रचनात्मकता के उत्कृष्ट लेखन को प्रकाशित कर रहा है.

शिक्षा विभाग में विभिन्न मदों में खर्च होने वाली राशि के बमुश्किल एक प्रतिशत के भी दसवें हिस्से से भी कम की राशि के द्वारा श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियों की खरीद शुरू की गयी है. परिणाम आश्चर्यजनक है कि पिछले दो दशकों से लगभग अदृश्य और उपेक्षित रहे आने वाले हिंदी के श्रेष्ठतम वरिष्ठ रचनाकार दुबारा परिदृश्य में लौट आये हैं और कई समकालीन रचनाकारों का गंभीर लेखन भी प्रकाशित हो सका है. स्वयं निजी प्रकाशन संस्थाओं में भी उत्कृष्ट साहित्यिक पुस्तकों को प्रकाशित करने में दिलचस्पी बढ़ी है. मुक्तिबोध और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का समूचा लेखन कई खंडों में प्रकाशित हो चुका है. पिछले चार वर्षों में इस योजना के अंतर्गत लगभग 1500 किताबें खरीदी के लिए प्रस्तुत हुईं जिनमें से मध्य प्रदेश के लेखकों की चार सौ किताबें खरीदी गई हैं. लेखकों को आर्थिक सुरक्षा मिली है. फैलोशिप और पुरस्कारों के द्वारा भी लेखकों कलाकारों को आंशिक सहयोग दिया जा रहा है जिससे वे व्यावसायिक दबावों से एक सीमा तक अपने आपको बचा सकें और उनमें यह विश्वास पैदा हो सके कि उत्कृष्ट सृजनशीलता की जमीन इतनी अनुर्वर नहीं है कि उसमें प्रतिभा, निष्ठा और परिश्रम के सारे बीज ही भस्म हो जायें. आर्थिक अनुदानों और सहयोग राशियों की योजनाएं भी हैं. साथ ही बीमार और अभावग्रस्त रचनाकारों-कलाकारों के लिए आर्थिक मदद की योजनाएं हैं. □

पहली जनवरी अठारह सौ पचास, रायबरेली में ही अपना लश्कर छोड़कर, केवल पांच अंगरक्षकों और घारूपुर के तालुकेदार हनुमंत सिंह को साथ लिये कर्नल स्लीमैन शंकरपुर जा रहा था.

राना बेनी माधव का सादर निमंत्रण था. कर्नल के घोड़े के साथ ही साथ हनुमंत सिंह का घोड़ा खरामा-खरामा चल रहा था. एक जगह घोड़े को रोककर कर्नल ने कहा, "हनुमंत सिंह, मुझे जो रिपोर्ट्स मिली हैं, उनके मुताबिक राना बेनी माधव नवाब के एक बड़े बहादुर और जिगरी दोस्त हैं. यह नवाब के एक बड़े माफीदारान हैं. इनकी बहादुरी और नवाब के लिए इनकी खिदमत के लिए इन्हें बड़ी जागीरें मिली हैं, मगर ये किसी उसूल के आदमी नहीं हैं. बेइंसाफी और बेईमानी के तमाम कारनामे हैं इनके. छोटे कमजोर जागीरदारों, पट्टीदारों, मालिकदारों की मौरूसी मिलकियत जबरदस्ती या धोखा-बेईमानी कर हड़पने में इनका भी कम नाम नहीं है."

हनुमंत सिंह बोले, "साहब, अवध में अगर आप किसी भी तालुकेदार, जागीरदार, मालिकदार को इस कसौटी पर कसकर देखेंगे तो आपको सब बेइंसाफ और बेईमान दिखेंगे. अपने से कमजोर की जमीन-जायदाद को किसी भी तरह अपनी रियासत में मिला लेना इनके लिए आम बात है. इसी से तो तालुकेदार का रुतबा, नेकनामी और बहादुरी साबित होती है. इस बात को लोगों ने न जाने कब से कबूल कर लिया है कि अपनी जमीन-जायदाद, राज-पाट बढ़ाने का तो हर क्षत्रिय राजपूत को हक है. यह हक उसे ईश्वर से मिला है. तभी तो उसे राजपूत नाम मिला है. राजपूत माने राज करनेवाला पूत—पुत्र. जो असमर्थ है, कमजोर है, उसे मालिक बने रहने का कोई हक नहीं. और जो समर्थ है, ताकतवर है, वह कुछ भी करे, उसका कोई दोष या गुनाह नहीं. यह लोगों ने मान लिया है और लोग कहते हैं कि—समरथ को नहिं दोस गोसाईं, रति पावक सुरसरि की नाईं."

धारावाही उपन्यास : समापन किस्त

पुरुषोत्तम

• लक्ष्मीनारायण लाल

कर्नल ने बड़ी हैरानी से पूछा, "क्यों, इससे हारे, लुटे हुए आदमी और उसकी रियाया, उसके नौकर-चाकर, सिपाही, अमलेदारों को कोई परेशानी नहीं होती?"

"जी नहीं."

"क्या, वे चुपचाप सब कबूल कर लेते हैं?"

"जी हां, साहब, जैसे एक की रियाया, वैसे अब दूसरे की रियाया. जैसे पहले की नौकरी-चाकरी, अमला-अमलेदारी, वैसे अब दूसरे की. किसी को कोई फर्क नहीं पड़ता."

कर्नल के मुंह से निकला, "ओ, आई सी!"

कर्नल वहीं रास्ते पर घोड़ा रोके रहा. अपनी डायरी में लिखने लगा—'ताज्जुब है, हिंदुस्तान का आदमी अजीब है. हैरतअंगेज—जो उसे जीत ले, वह उसी का हो जाता है. कोई भी राजा हो, उसे वह कबूल कर लेता है. इससे भी ज्यादा ताज्जुब की बात यह कि कोई भी हुकूमत हो, कोई भी 'सिस्टम' हो, उसी के मुताबिक यह हिंदुस्तानी अपने आप को बदल लेता है. कमाल है, कितने सांचे हैं इसके पास—झट से अपने आपको हुकूमत के हिसाब से उसी सांचे में ढाल लेता है. हूण, मंगोल, तुर्क, पठान, मुगल, डच, फैंच, नवाब और अब अंग्रेज कंपनी बहादुर. . . अंग्रेज साहब. . .'

'अंग्रेज साहब' लिखकर, कर्नल ने उसे काट दिया—आगे लिखा 'अंग्रेज बहादुर'.

आप पढ़ चुके हैं कि—

खबर मिली कि कंपनी बहादुर का लश्कर गांव के पास से गुजरेगा तो रघुवीर और गंगादीन गुरुजी से अनुमति लेकर लश्कर देखने निकल पड़े. कुछ ही दूर गये थे कि एक सिपाही आगे-आगे जाता दिखाई दिया. दोनों उसके पीछे चल पड़े. उसके साथ बिताये तीन दिनों में उन्होंने आम जनता की जो दुर्दशा देखी, उससे गंगादीन ने तय कर लिया कि वह अंगरेज बहादुर की सेना का सिपाही बनेगा. पंडितजी ने तो उसे आसानी से अनुमति दे दी, पर गंगादीन की माई ने यह खबर सुनी तो बेहोश ही हो गयी. किसी तरह गंगादीन ने अपनी मां को समझा लिया. लखनऊ तक उसे छोड़ने उसका दोस्त रघुवीर भी आया. यहां उसने देखी राग-रंग की महफिलें, नवाब की बेगमों की फौजें और अपने पिता राना बेनी माधव को उन्हीं महफिलों में रमे हुए.

आगे लिखता गया—'कमाल है, और कितना दिलचस्प—अपना राज बढ़ाते चलो. दूसरों को हटाकर. हटाकर नहीं तो उसके सिपाहियों को खरीदकर. उसके अहलकारों को और बड़े वायदे देकर. यह नहीं तो राजा, बादशाह, नवाब के दरबार में चापलूसी, जी हुजूरी करके दरबार से यह फरमान जारी करा लेना कि फलां की जागीर, फलां की तालुकेदारी अब फलां को दी जाती है. यह भी न सही तो यह फरमान जारी करा लेना कि अब फलां ताल्लुका, फलां तहसील अब से 'हुजूर तहसील' मुकर्रर की गयी और इसकी 'हुजूर तहसीली' फलां राजा, फलां तालुकेदार, फलां जागीरदार करेगा.

'जिसके राज दरबार से ऐसे ताल्लुक हो जाते हैं—वही ताल्लुकेदार हो जाते. जो ऐसे ताल्लुकेदार होते उन्हें ही हक मिलता किला बनवाने का, अपनी सेना, सिपाही, बंदूक, तोप रखनें का. हर तरह से अपनी इतनी ताकत बढ़ाने का कि एक ओर अपने जैसे दूसरे ताल्लुकेदारों, राजपूतों से अपनी हिफाजत कर सकें. दूसरी ओर राजदरबार पर भी यह रौब रख सकें कि वह राजदरबार से कम नहीं है. उसके अब 'हक' हैं 'फर्ज' नहीं. वह खुद 'हुजूर' है. अब अपने अलावा उसकी कोई जिम्मेदारी नहीं. शंकरपुर के राना बेनी माधव शायद ऐसे ही राना राजा हैं. तभी तो शंकरपुर में रायबरेली है—रायबरेली में शंकरपुर नहीं है.'

▣

आम के बाग के पीछे नगारा तुरही, धांसा, शहनाई, ढोल, तासे, झांझ का ऊंचा संगीत सुनाई देने लगा. तोप बंदूकों की सलामी.

राना बेनी माधव पूरे राजसी साज-ताज के साथ कर्नल स्लीमैन की अगवानी कर रहे थे.

चारों ओर ऊंची मजबूत मिट्टी की दीवारों से घिरा हुआ किला. किले के चारों ओर घना और कंटीला बांस का अभेद्य जंगल. किले के चारों ओर गहरी खाई थी और उसका प्रवेश फाटक बहुत ही मजबूत था.

अंदर सभा भवन, दीवान खाना और जनानी हवेली.

राजमहल के पश्चिम, उत्तर और पूरब दिशा में दूर तक बसा हुआ शंकरपुर. उत्तर की बस्ती का नाम फुलवारी पुरवा, पूरब की शिवाली गढ़ी. पश्चिम की देवी पुरवा.

राजमहल में कर्नल के स्वागत-सम्मान के बाद राना बेनी माधव ने अपने वंश का परिचय देना शुरू किया, जिसे कर्नल बड़ी दिलचस्पी के साथ सुनता रहा और अपनी डायरी में लिखता रहा.

राना बता रहे थे कि उनके पूर्वज बैंस राजपूत थे, "बहुत बड़ा खानदान था बैंसों का. चौदहवीं सदी में राजस्थान—जोधपुर-सोजत से इधर आये थे. इधर आकर हम सैकड़ों की तादाद में पचास कोस के भीतर शांत, उपजाऊ, सुरक्षित इलाका देखकर इधर-उधर बसे. अपने बाहुबल से जमीन-जायदाद खड़ी की और इस बड़े इलाके को हमीं से नाम मिला—बैंसवाड़ा. हमसे पहले इस इलाके का नाम था कन्नौज—कनोजिया."

बीच ही में कर्नल ने पूछा, "क्यों, अपना देस छोड़कर इधर कैसे आये?"

राना ने कहा, "अपने धर्म की रक्षा के लिए."

"क्या मतलब?"

"उस समय सुलतान सूबेदार उधर जबरदस्ती हिंदुओं को मुसलमान बना रहे थे. हमारे पूर्वज अपने धर्म की रक्षा के लिए उधर से भागकर इधर आये."

एकाएक उसी क्षण राना बेनी माधव के पिता राना बाबा, जिनका पूरा नाम था—रामनरायन सिंह, सबके बीच में आकर बोले, "यह झूठ है साहब! धर्म की रक्षा भागकर नहीं होती. हमारे पूर्वज धर्मरक्षा के लिए नहीं भागे. वे कायर, घमंडी और लुटेरे थे. वे डर के मारे इधर आये?"

कर्नल ने पूछा, "किस चीज का डर?"

"जिंदा न रह पाने का डर."

चारों तरफ से लोग राना बाबा का तमतमाया हुआ मुख देखने लगे. कर्नल स्लीमैन राना बाबा के पास आकर खड़ा हो गया.

रघुवीर सामने खड़ा चुपचाप सारा दृश्य देख रहा था. राना बेनी माधव रुक कर किनारे खड़े रह गये थे.

रानाबाबा बोले, "सुनो, सुनो! हिम्मत से सुनो. साहब के बहाने से ही सुन लो अपनी सच्चाई. बिना अपनी सच्चाई जाने कहीं कुछ न होगा. झूठ हमारी मदद नहीं कर सकता. जो है ही नहीं, वह होगा कहां से?"

सन्नाटा छा गया.

राना बाबा बताने लगे, "जोधपुर में सोजत एक स्थान है. यहां हमारे पूर्वज दो भाई थे—गांगा और बीरम. ये दोनों सामंत थे. इन दोनों भाइयों में भयंकर दुश्मनी थी. सामंतों में यह स्वाभाविक ही है. सुलतान सूबेदार सामंतों को आपस में लड़वाते थे. जो हार जाता, उस पर सूबेदार अपना कब्जा कर लेता और उसकी कीमत के नाम पर दूसरे सामंत को इनाम के तौर पर कोई जागीर दे दी जाती. इस तरह इन दोनों भाइयों को सुलतान सूबेदार सिकंदर खां ने—बीरम

को सोजत और गांगा को जोधपुर की जागीरदारी दी थी. पर ये दोनों भाई दिल से यही चाहते थे कि एक दूसरे की जागीर हड़प लें. इस तरह दोनों एक दूसरे की जागीरदारी में लूटमार करने लगे. गांगा सोजत का एक गांव लूटता तो बदले में वीरम जोधपुर के दो गांव लूट लेता. इस तरह की लूटमार में लड़ाई भी हो जाती. लेकिन लड़ाई में सदा गांगा की ही हार होती.

"गांगा ने सोचा कि वीरम को हराने के लिए सुलतान से किसी भी शर्त पर कोई मदद लेनी चाहिए. मदद लेकर राव गांगा ने वीरम को हराया. सोजत को लूटा. पराजित वीरम अपनी इस बेइज्जती को कभी नहीं भूल पाया. गांगा से बदला लेने के लिए वह कभी सुलतान से मिलता, कभी किसी सूबेदार या डाकू से. फिर उन दोनों में एक युद्ध हुआ. उस युद्ध में गांगा का एक हाथी भागकर मेड़ता चला गया. मेड़तियों ने उस हाथी को अपने यहां रख लिया. उस हाथी के लिए गांगा और मेड़तियों से लड़ाई हुई. . . "

यह सब कहते-कहते राना बाबा हंस पड़े, "बस, हमारे पूर्वजों की यही तवारीख है. बस यही सिलसिला. . . हममें धर्म था ही कहां, हम जिस कारण वहां से भागकर यहां आये, उसका नाम है भय, डर, फियर."

कर्नल स्लीमैन को ताज्जुब हुआ, "आप अंग्रेजी जानते हैं?"

"हां थोड़ी-सी!"

"कैसे? कहां से?"

राना बाबा बिना कुछ बोले अंदर चले गये. तब लोगों से कर्नल को पता चला कि राना बाबा अब तक दो बार पूरे भारतवर्ष की यात्रा कर चुके हैं. कई भाषाएं जानते हैं. कभी कोई बेइंसाफी नहीं थी. सच्चाई और ईमानदारी की जिंदगी जीते हैं. कभी किसी से डरे नहीं, कभी किसी को डराया नहीं.

▣

दिन ढल रहा था. कर्नल स्लीमैन के घोड़े के दायें-बायें राना बेनी माधव और हनुमंत सिंह अपने-अपने घोड़ों पर बैठे चल रहे थे. एक गांव के पास से गुजरते हुए कर्नल ने पूछा, "बेनी माधव, यह गांव किसका है. ये लोग किसके असामी हैं?"

"साहब, मैं समझा नहीं."

कर्नल ने कहा, "फर्ज करो, तुम सरकार हुकूमत के खिलाफ जंग छेड़ देते हो तो इन गांवों—असामियों की किस्मत इसी में है कि ये लोग तुम्हारा साथ दें."

बेनी माधव ने खुलासा जवाब दिया, "बेशक, इन सबकी किस्मत, इज्जत-आबरू, धन-दौलत सब मेरे साथ बंधी है. मैं किसी के साथ लड़ाई करता हूं तो इन्हें मेरा साथ देना होगा या जमीन-जायदाद, घर-द्वार, सब कुछ यहीं छोड़कर इन्हें यहां से भाग जाना होगा."

कर्नल ने फिर पूछा, "मतलब, अगर इन्होंने तुम्हारा साथ नहीं दिया तो तुम इसे बर्दाश्त नहीं करोगे और सीधे लुटवा लोगे."

शंकरपुर के राना चुप रहे.

पर हनुमंत सिंह ने कहा, "जी साहब, ऐसा ही होता है. सब ऐसा ही करते हैं."

कर्नल ने चलते-चलते फिर पूछा, "अच्छा, जो लोग लड़ाई में साथ देते हैं, जो तुम्हारे सिपाही हैं, वे जब घायल हो जाते हैं, मर जाते हैं, फिर उन्हें क्या इनाम-इकराम, मदद मिलती है अपने मालिकों, तालुकेदारों से?"

दोनों चुप रह गये. पीछे घोड़े पर सवार कंपनी सेना के एडजूटेंट भोपाल सिंह ने कहा, "साहब बहादुर, ऐसा है कि इनके सिपाही चाहे मर जायें, चाहे घायल अपंग हो जायें, उन्हें कोई पूछनेवाला नहीं. हां, कानून जरूर है—नवाब की सेना से लेकर इन सब तालुकेदारों की सेना तक कि घायल-अपंग को एक महीना और मर जानेवाले सिपाही को दो महीने की तनखाह दी जाये मगर इनके अहलकार, अफसर, इतने बेईमान हैं कि खुद ले लें. अरे साहब बहादुर, इनके सिपाहियों की तनखाहें—एक-एक साल, पांच-पांच, छह-छह महीनों, दो-दो सालों की बकाया रहती हैं. मरने या अपंग होने के बाद वह बकाया ही मिल जाये तो बड़ी किस्मत."

राना बेनी माधव ने घूरकर पीछे देखा.

तभी कर्नल ने पूछा, "क्यों शंकरपुर के राना, सूरजसिंह के तिरानवे गांवों को तुमने सिर्फ पांच हजार में ले लिया?"

राना बोले, "साहब, बात यह है कि तिरानवे गांवों की वह रियासत सेनवंशी लक्ष्मणसिंह की थी जो लावारिस मर गये. उनकी विधवा ने अपने एक नाबालिग भांजे को गोद लिया. लक्ष्मण सिंह के सगे-संबंधी सूरजसिंह ने आक्रमण करके उस रियासत को ले लिया. मामला गया नवाब के दरबार में. दरबार ने यह फैसला दिया कि पांच हजार रुपये सालाना मालगुजारी अगर सूरजसिंह हुकूमत को देते रहें और सूरजसिंह नवाब की वफादारी में दो तोप, दस बंदूक, बीस घोड़े और दो सौ सिपाहियों की एक टुकड़ी तैयार रख सकें तो यह रियासत उन्हीं के नाम कर दी जाती है. सूरजसिंह ने सब कबूल कर लिया. तीन साल तक नवाब के खजाने में पांच-पांच हजार रुपये पहुंचे. चौथे साल बकाया रह गया. तब तक दो सौ सिपाहियों की सेना तो बनी, पर न कोई तोप न बंदूक. हां, मिट्टी का किला जरूर बना और बीस घोड़े भी खरीदे गये."

"फिर क्या हुआ?"

"दरबार ने मजबूर होकर उसे पहले 'हुजूर तहसील' ऐलान कर दिया."

"हुजूर तहसील माने?"

"हुजूर तहसील माने मालगुजारी सीधे नवाब हुजूर के तहसीलदार नाजिम, अमीन, मुंशी वसूल करें."

"फिर?"

"तहसीलदार और नाजियों ने मिलकर पूरे तिरानवे गांवों की वसूली जमींदारों के हाथों में दे दी."

"फिर?"

कर्नल स्लीमैन सब लिखता जा रहा था.

राना ने बताया, "मगर पांच हजार क्या, पांच सौ रुपये भी साल भर में लखनऊ के खजाने में नहीं पहुंचते."

"फिर?"

"फिर क्या, मैंने पांच हजार रुपये में तिरानवे गांव ले लिये."

कर्नल स्लीमैन हंस पड़ा, "सो रिपोर्टस आर करैक्ट." यू आर नॉट वेरी स्क्रुप्लस इन दि एक्यूजीशन, बाई फ्रॉड, वाइलेंस एंड कोल्यूजन."

धारूपुर के तालुकेदार हनुमंत सिंह और शंकरपुर के राना बेनी माधव, दोनों कर्नल स्लीमैन की चापलूसी में उसकी हंसी में अपनी हंसी मिलाने लगे. दोनों अंग्रेजी भाषा नहीं जानते थे. जबकि स्लीमैन—अंग्रेजी, फ्रेंच, पुर्तगीज, स्पैनिश के अलावा हिंदी, उर्दू, अरबी, फारसी, संस्कृत, अवधी, ब्रज और बंगाली आदि कई भाषाएं, बोलियां जानता था.

अगला गांव ओनई—उर्फ गुरुबक्स गंज. ओनई नाम को लोग भूल रहे थे. गुरुबक्स ने जबसे इसे 'गंज' बना दिया. गल्ला, कपड़ा का गंज. पर गंज अब नष्ट हो रहा है. लोग फिर वही पुराना नाम 'ओनई' बोलते हैं.

ओनई से 'दुलारे की गढ़ही' गांव. यहां कभी दुलारे नामक व्यक्ति का गढ़ या किला रहा होगा. 'दुलारेगढ़' से 'दुलारे की गढ़ही', गढ़ ढहकर गढ़ही.

तीनों घोड़ों के पीछे 'दुलारे की गढ़ही' गांव से तमाम, कुत्ते भूंकते हुए चले आ रहे थे. □

पुस्तकाकार संपूर्ण उपन्यास सातवाहन पब्लिकेशंस, डी 4 कालिंदी कॉलोनी, नयी दिल्ली-110065 से शीघ्र प्रकाश्य

अकेले

▣ ज्यां-पॉल सार्त्र

हम उतने स्वतंत्र कभी नहीं थे, जितने कि जर्मनी के अधिपत्य के दिनों में थे. हम अपने सभी अधिकार खो चुके थे, यहां तक कि बोलने का अधिकार भी. हर रोज हमें अपमानित किया जाता, और हमें चुप रहना पड़ता. हमें निर्वासित किया गया, क्योंकि हम मजबूर थे, क्योंकि हम यहूदी थे, क्योंकि हम राजनीतिक कैदी थे. हर तरफ—दीवारों पर, समाचार-पत्रों में, फिल्मी पर्दे पर हमें अपनी एक अपमानित और घिनौनी तस्वीर देखने को मिलती, जो हमारे शोषक हमें कबूल करवाना चाहते थे. इस सब कुछ की बदौलत हम स्वतंत्र थे. क्योंकि नाजी जहर हमारे विचारों में भी समाने लगा था, हमारा प्रत्येक सही विचार एक जीत था. क्योंकि सर्वशक्तिमान पुलिस हमारी जबानें बंद करने की कोशिशें कर रही थी, हमारा प्रत्येक शब्द किसी सिद्धांत का घोषणापत्र बन गया था. क्योंकि हमारा पीछा किया जा रहा था, हमारी प्रत्येक हरकत वचनबद्धता जितनी महत्वपूर्ण थी. हम हर समय निर्वासन, कैद, मौत के बारे में सोचते थे, जिनकी ओर कि सुखद समय में ध्यान नहीं जाता और हमने जाना कि यह सब बाहरी खतरे या टाली जा सकनेवाली घटनाएं नहीं हैं. और इनमें हमें अपनी हालत, अपनी नियति और मानवीय असलियत के गहन स्रोत को पहचानना था.

मैं यहां उन खास लोगों की बात नहीं कर रहा, जो उस आंदोलन में वास्तव में हिस्सा ले रहे थे, बल्कि उन सभी फ्रांसीसियों की बात कर रहा हूं जिन्होंने चार साल तक दिन में भी और रात में भी 'नहीं' कहा था. हमारे दुश्मनों की बेरहमी ने हमें आखिरी सीमाओं तक पहुंचा दिया था और ऐसे सवाल पूछने पर मजबूर कर दिया था, जो कि शांति के समय नजर अंदाज किये जा सकते हैं. हर व्यक्ति, जिसे उस आंदोलन के बारे में किसी भी प्रकार की जानकारी थी—और ऐसा कौन-सा फ्रांसीसी था, जिसे किसी न किसी समय पर कुछ जानकारी नहीं थी—अपने आपसे चिंतित होकर पूछता था : "अगर उन्होंने मुझे यातनाएं दीं, तो क्या मैं सहन कर सकूंगा?"

जो लोग उस गुप्त आंदोलन में भाग ले रहे थे, उनका संघर्ष उनके लिए एक नया अनुभव था. वे सैनिकों की तरह खुले-आम नहीं लड़ रहे थे; वे अकेले थे और उसी अकेलेपन में उनका पीछा किया जा रहा था, उन्हें कैद किया जा रहा था और उस नितांत अकेलेपन में ही वे मुसीबतें सह रहे थे. वे उन अत्याचारियों के सामने बिलकुल अकेले और निःसहाय थे, जो हृष्ट-पुष्ट थे, जिन्होंने बढ़िया लिबास पहने हुए थे, उनके धुले-पुते चेहरे थे—और जो उनके दुःखों मुसीबतों में पले जिस्मों को हिकारत की नजर से देखते थे— वे अत्याचारी, जिनकी सोयी हुई आत्मा और अपरिमित सामाजिक शक्ति उन्हें हर प्रकार से सही होने का एहसास दिला रही थी. फिर भी, उस नितांत अकेलेपन में से वे सभी लोग उनके साथ थे, जिनकी वे उस प्रतिरोध आंदोलन में रक्षा कर रहे थे, क्योंकि उनके मुंह से निकला एक भी शब्द सैकड़ों साथियों को गिरफ्तार करवा सकता था. पूर्ण अकेलेपन में पूर्ण उत्तरदायित्व —क्या यह हमारी स्वतंत्रता की परिभाषा नहीं है? . . .इस प्रकार अंधकार में और खून-खराबे में ऐसा एक प्रजातंत्र अस्तित्व में आया, जो सभी प्रजातंत्रों से शक्तिशाली था. प्रत्येक नागरिक जानता था कि उसपर सबकी जिम्मेदारी है और वह अकेला सिर्फ अपने आप पर ही भरोसा कर सकता है. हर किसी ने उस नितांत अकेलेपन में अपनी जिम्मेदारी का बोझ उठाया हुआ था और इतिहास में अपनी भूमिका निभायी थी. हर किसी ने अत्याचारियों का मुकाबला करते हुए स्वतंत्र और अटल होकर अपना अस्तित्व कायम रखना चाहा था. और स्वतंत्रता में अपने लिए चुनाव करके उसने सभी की स्वतंत्रता का चुनाव किया था. □

● अनुवाद : सु.